

The Gunjan

(Multi Disciplinary Quarterly International Referred/Peer Reviewed Research Journal)

PATRON

Shri Manvendra Swaroop, En. Gaurvendra Swaroop

Secretary - Dayanand Shikshan Sansthan, Kanpur

Dr.A.K.Dixit(Principal-D.A.V.College,Kanpur) **Dr.Anoop Kr.Singh**(Principal-P.P.N.College,Kanpur)

Editor-in-Chief

Dr. Vidya Verma

**Principal, Government Degree College,
Sumerpur-210502 Hamirpur (U.P.)**

Editor

Dr. Seema Mishra

Asst. Prof., Dept. of B. Ed.,

Dr. V. S. I. P. S., Kidwai Nagar, Kanpur (U.P.)

Peer-Reviewed Board (International)

◆**Dr. Ram Babu Gautam**, New Jersi 220, Wheeler Street, Clifsite Park, New Jersi-07010 (America),
◆**Dr. Sirish Kumar Pandey**, Ul Litawashka 37, 51-354, Ursaw, Poland, ◆**Dr. Alok Agarwal**
Chinmay Degree College, Ranipur, Haridwar (U.K.) ◆ **Dr. Filip Rodriguez-e-Melo** S. S. Ambiyee
Government College of Arts & Commerce, Virnoda, Pernem, Gova ◆**Dr. S. K. Batra** S. M. J. N. (P.G.)
College, Haridwar (U.K.) ◆**Prof. Anil Kr. Mishra** D.B.S. College, Kanpur, ◆**Dr. Manoj Kr. Garg**
D.N. (P.G.) College, Fatehgarh, ◆**Dr. Chandra Dev Yadav** B.V. (P.G.) College, Farukhabad, ◆**Dr.**
Vinod Mohan Mishra Buddh (P.G.) College, Kushi Nagar, ◆ **Prof. B. C. Kaushik** V. S. S. D.
College, Kanpur, ◆**Dr. Suman** S. N. Sen Balika (P.G.) College, Kanpur, ◆ **Dr. M. H. Siddiqi** Halim
Muslim (P.G.) College, Kanpur ◆ **Dr. Mahendra Singh** K.K. Mahadyalaya Etawah ◆ **Dr. Geeta**
Asthana Jwala Devi Vidya Mandir (P.G.) College, Kanpur ◆**Dr. Ritambhra** A.N.D. College,
Kanpur, ◆ **Dr. R. P. Chaturvedi** R.S.G.M. (PG) College, Pukharayan, ◆ **Dr. Ratna Gupta** D. W. T.
Centre, Kanpur, ◆ **Dr. S. C. Mishra** B.R.D. (P.G.) College, Devriya ◆ **Dr. Alok Kr. Singh** T. D.
(P.G.) College, Jounpur. ◆ **Dr. Pradep Kr. Gupta** D.S.N. (P.G.) College, Unnao.

Peer-Review Board

Hindi-

Dr. R.B. Vanishree Govt. (P.G.) College, Pakala (AP)

Dr. Arti Dubey L.Y.D.C. Kaimganj, Farrukhabad

Dr. Rakhi Upadhyay D. A. V. (P. G.) College,
Dehradoon (Uttarakhand)

Dr. Amar N. Tiwari B. V. (P.G.) College, Farukhabad

Dr. Sofia Rajan Govt. Arts & Science College, Tanur,
Kerla State

Dr. Jitendra Kr. R.S.G.M. (P.G.) College, Pukhrayan

English-

Dr. B. D. Pandey P.P.N. College, Kanpur

Dr. Shobhna Srivastava B.L.V. Mahavidyalay,
Sarsaul, Maharajpur-Kanpur Nagar

Dr. Neeta Kulshetra S.V. (P.G.) College, Aligarh

Dr. Savita Gupta R.S.G.M. (P.G.) College,
Pukhrayan, Kanpur

Dr. C. P. Singh D.B.S. College, Kanpur

Sanskrit-

Dr. Preeti Vadhvani T. D. (P. G.) College, Auriya

Dr. Shobha Mishra V.S.S.D. College, Kanpur

Dr. Archana Pandey B. V. (P.G.) College, Farukhabad

Dr. Archana Srivastav M. M. Vidyalaya, Kanpur

Dr. Megha Sharma J.D.B. (P. G.) College, Kota

Education-

Dr. Swati Singh D.G.P.G. College, Kanpur

Dr. Reena Chandra D.A.V. College, Dehradoon

Dr. Venu Anand D. G. (P. G.) College, Kanpur

Dr. Pragya Srivastava M.M.V. (P.G.) College, Kanpur

Political Science-

Dr. Brajesh S. Sonker K.K.(P.G.) College, Etawah
Barabanki (U.P.)

Dr. Pappi Mishra D.G. (P. G.) College, Kanpur

Dr. Neeraja Choudhary D.A.V. (P.G.) College,
Dehradoon (Uttarakhand)

Dr. Anamika Verma Mahila Mahavidyalaya, Kanpur



Dr. Pratima Gangwar J.D.V.M. Girls (P.G.) Collge, Kanpur

Dr. Shiv Narain Yadav R.S.G.M. (P.G.) College, Pukharayan, Kanpur

Dr. Sachin Jaiswal V.S.S.D. College, Kanpur

Sociology-

Dr. Mridula Sharma D.A.V. (P.G.) College, Dehradun

Dr. Shailendra Kr. Singh B.V. (P.G.) College, Fkd.

Dr. Nishi Prakash S. N. Sen (P.G.) College, Kanpur

Dr. Anshuman Upadhyay R.S.G.M. (P.G.) College, Pukharayan, Kanpur

Dr. Satyam Dwivedi D.A.V. (P.G.) College, Ddn (UK)

Economics-

Dr. Vandana Dwivedi P. P. N. College, Kanpur

Dr. Anju Srivastava M.M.V. P.G. College, Kanpur

Dr. Parwat Singh R.S.G.M. (P.G.) College, Pukharayan, Kanpur

Dr. Manju Lata Dwivedi V.S.S.D. College, Kanpur

(Smt.) Tanu Varshney S.V.P.G. College, Aligarh

Psychology-

Dr. Surbhi Mishra Juhari Devi P.G. College, Kanpur

Dr. Renuka Joshi D.A. V. College, D. Doon (U.K.)

Dr. Pratibha Srivastava M.M.V. College, Kanpur

Math-

Dr. P. K. Tripathi D.A.V. College, Kanpur (U.P.)

Dr. A. K. Singh V. S. S. D. College, Kanpur (U.P.)

Dr. A.K. Srivastava D. B.S. College, Kanpur (U.P.)

History-

Dr. Mamta Gangwar M. M. V. P.G. College, Kanpur

Dr. Sanjay Mahashwari S.M.J.N. (PG) College, Haridwar (U.K.)

Dr. Arvind Kr. Tripathi D.S.N. College, Unnao

Dr. Shalini Gangwar J.D.G. (P.G.) Collge, Kanpur

Smt. Suman Shukla Govt. M. M. V. Kannouj

Drawing & Painting-

Dr. Vandana Sharma M. M. V., Kanpur

Dr. Jyoti Agnihotri Juhari Davi PG Colge, Kanpur

Dr. Achal Arvind Maa Bharti (P.G.) College Kota, Rajasthan

Dr. Sarika Bala A. N. D.N.N.M.M. College, Kanpur

Physics-

Dr. K. K. Srivastava D.B.S. College, Kanpur

Dr. A. K. Agnihotri B.N.D. College, Kanpur

Dr. Navneet Mishra B. N. D. College, Kanpur

Chemistry-

Dr. Alka Srivastava D. G. (P.G.) College, Kanpur

Dr. Atul Tiwari D. B. S. College, Kanpur

Dr. Dhananjay Singh P. P. N. College, Kanpur

Zoology-

Dr. Sandeep Shukla D. B. S. College, Kanpur

Dr. Sangeeta Ansari A. N. D. College, Kanpur

Dr. Anjali Srivastava D. G. P. G. College, Kanpur

Botany-

Dr. Archana Srivastava D.G. P.G. College, Kanpur

Smt. Seema Anand S.V.(P.G.) College, Aligarh

Dr. Jainendra Kumar K.K.(P.G.) College, Etawah

Geography-

Dr. Pramod Kr. K.K.(P.G.) College, Etawah

Dr. Ram Naik Srivastav R.S.G.M. (P.G.) College, Pukharayan, Kanpur

Dr. Hem Singh Ojha K.K.(P.G.) College, Etawah

Music-

Dr. Mohini Shukla Juhari Devi (PG) College, Knp.

Dr. Nishtha Sharma M. G. (P.G.) College, Firozabad

Smt. Kajal Sharma Agra College, Agra

Home Science-

Dr. Ranju Kushwaha Ju. Devi (PG) College, Kanpur

Dr. Archana Saxena A. N. D. N. N. M. M., Kanpur

Dr. Alka Tripathi D. G. (P.G.) College, Kanpur

Dr. Richa Saxena Juhari Devi (PG) College, Knp.

Dr. Byuti Dixit Mahila Mahavidyalaya, Kanpur

B. Ed. -

Dr. Ankur Singh D. W. T. Centre, Kanpur

Dr. Pragya Srivastava M.M.V., Kanpur

Dr. Reeta Srivastava A. N. D. College, Kanpur

Managing Editor & Publisher-

Sarveish Tiwari 'Rajan'

World Bank Barra, Kanpur-208027

सभी संपादकीय दायित्व पूर्णतः अवैतनिक हैं।

नोट: प्रकाशित आलेखों के विचारों से संपादक व प्रकाशक की सहमति अनिवार्य नहीं है। समस्तवाद का क्षेत्र कानपुर होगा।

स्वत्वाधिकारी, प्रकाशक, प्रबन्ध संपादक एवं मुद्रक सर्वेश तिवारी 'राजन' द्वारा सुपर ग्राफिक्स एण्ड प्रिन्टर्स, के-444, विश्व बैंक बर्रा, कानपुर-27 से मुद्रित एवं सुपर प्रकाशन के-444, 'शिवराम कृपा' विश्व बैंक बर्रा, कानपुर-208027 से प्रकाशित। संपादक : डॉ. सीमा मिश्रा मो.-09044808861। सम्पर्क: 8896244776,9335597658, ई-मेल: super.prakashan@gmail.com, Website: www.superprakashan.com



कृतिम बुद्धिमत्ता – वरदान या खतरा



विज्ञान और तकनीकी प्रगति ने आज जिस तीव्र गति से संसार को बदला है, उसमें सबसे उल्लेखनीय भूमिका कृत्रिम बुद्धिमत्ता (Artificial Intelligence – AI) की है। यह एक ऐसी तकनीक है जो मशीनों को सोचने, निर्णय लेने और मनुष्यों की तरह कार्य करने की क्षमता प्रदान करती है। आज यह तकनीक हमारे दैनिक जीवन से लेकर वैश्विक नीति निर्धारण तक प्रभाव डाल रही है। परन्तु इस तकनीकी वरदान के साथ कुछ ऐसे पक्ष भी जुड़े हैं, जो मानवता के लिए खतरे का संकेत दे रहे हैं।

AI का उपयोग अब केवल विज्ञान प्रयोगशालाओं या शोध संस्थानों तक सीमित नहीं रहा, बल्कि यह आम जनता के जीवन में गहराई से प्रवेश कर चुका है। शिक्षा के क्षेत्र में यह तकनीक छात्रों को उनकी गति और जरूरत के अनुसार सीखने में मदद कर रही है। स्मार्ट क्लासरूम, डिजिटल मूल्यांकन और अनुवाद जैसे क्षेत्रों में AI ने शिक्षा को सुलभ और प्रभावी बना दिया है। स्वास्थ्य सेवाओं में AI आधारित स्कैनर, डिजिटल हेल्थ रिकॉर्ड्स और रोबोटिक सर्जरी के माध्यम से रोगों की शीघ्र पहचान और उपचार संभव हो पाया है। टेलीमेडिसिन की सहायता से यह तकनीक ग्रामीण क्षेत्रों में भी चिकित्सा सुविधाएं पहुंचा रही है।

कृषि और औद्योगिक क्षेत्र में भी AI ने उल्लेखनीय परिवर्तन भी किये हैं। AI आधारित संसार, ड्रोन और स्मार्ट उपकरण किसानों को जलवायु मिट्टी और फसल की स्थिति के बारे में सटीक जानकारी देते हैं। वहीं उद्योगों में उत्पादन लागत कम करने, गुणवत्ता बढ़ाने और दुर्घटनाएं घटाने में यह तकनीक मददगार बनी है। इसके अलावा दैनिक जीवन में वॉयस असिस्टेंट जैसे (Google Assistant, Siri) ऑनलाइन खरीदारों में सुझाव ट्रैफिक की जानकारी और बैंकिंग में धोखाधड़ी की पहचान जैसे कार्यों में AI अत्यधिक सहायक है।

लेकिन इस प्रगति के साथ कई गंभीर चिन्ताएं भी जुड़ी हैं। सबसे पहले बेरोजगारी की समस्या AI आधारित ऑटोमेशन के चलते फैक्टियों, बैंकों और कार्यालयों में मानव श्रम की आवश्यकता कम होती जा रही है। यह विशेष रूप से निम्न कुशल और अर्ध कुशल श्रमिकों के लिए संकट उत्पन्न कर रहा है। इसके अतिरिक्त AI जिस डेटा पर कार्य करता है, उसमें गोपनीयता का उल्लंघन और गलत हाथों में जानकारी जाने का खतरा बना रहता है। यदि संवेदनशील डेटा का दुरुपयोग हो तो, व्यक्ति की स्वतंत्रता और सुरक्षा को गंभीर चुनौती मिल सकती है।

AI के साथ नैतिक और सामाजिक प्रश्न भी गहरे होते जा रहे हैं। क्या एक मशीन यह तय कर सकती है कि कौन जीवित रहेगा और कौन नहीं? स्वचालित हथियार, निगरानी तंत्र और चेहरा पहचानने की तकनीकें मानवाधिकारों का उल्लंघन कर सकती है। साथ ही, यदि AI को प्रशिक्षित करने वाला डेटा पक्षपातपूर्ण हो, तो निर्णय भी पक्षपातपूर्ण हो सकते हैं, जिससे समाज में असमानता और अन्याय को बढ़ावा मिल सकता है।

इन सभी पक्षों को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि कृत्रिम बुद्धिमत्ता न तो न तो पूर्णतः वरदान है और



न ही पूर्णतः खतरा। यह एक उपकरण है, जिसके उपयोग और दिशा पर ही इसका मूल्य तय होता है। आवश्यकता है कि सरकारें, वैज्ञानिक, शिक्षाविद् और समाज मिलकर इस तकनीक के लिए नैतिक कानूनी और सामाजिक दिशानिर्देशों तैयार करें। अगर इसका विकास पारदर्शी, मानवीय और विवेकपूर्ण तरीके से किया जाए, तो यह तकनीक मानवता की सबसे बड़ी सहयोगी बन सकती है। लेकिन यदि इसे नियंत्रणहीन रूप से अपनाया गया, तो यही तकनीक आने वाले समय में मानव अस्तित्व के लिए संकट भी बन सकती है।

इसलिए समय की मांग है कि हम कृत्रिम बुद्धिमत्ता का उपयोग एक जागरुक और जिम्मेदार समाज के रूप में करें। तभी हम इसे कृत्रिम नहीं बल्कि सजग बुद्धिमत्ता बना पाएंगे – एक ऐसी बुद्धिमत्ता जो मानवता के हित में कार्य कर करे, न कि उसके विरुद्ध।

– डॉ. सीमा मिश्रा

सम्पादक – 'दि गुंजन'

(मल्टी डिसिप्लिनरी क्वार्टरली इण्टरनेशनल

रेफ्रीड / पियररिव्यूड रिसर्च जर्नल)

एवं

असिस्टेन्ट प्रोफेसर – बी. एड. विभाग,

डॉ. वी. एस. आई. पी. एस. इन्स्टीट्यूट,

किदवईनगर, कानपुर-208011 (उ.प्र.)



Index

- Dr. Vidya Verma : Chief Editor, 'The Gunjan' (Multidisciplinary Quarterly International Refreed / Peer Reviewed Research Journal) & (Principal : Government Degree College, Sumerpur-210502, Hamirpur (U.P.).

&

-Dr. Seema Mishra : Editor - 'The Gunjan' (Multi Disciplinary Quarterly International Refreed / Peer Reviewed Research Journal) & Assistant Profressor, Dept. of B. Ed., Dr. Virendra Swaroop Institute of Professional Studies, Kidwai Nagar, Kanpur-208011, (U.P.)

1-	Impact of Rural Development on Economic growth of India : A Review	- Dr. Sangeeta Tiwari	07
2-	Gamification and Extended Reality (VR/AR) in STEM Education : A Qualitative Study	- Dr. Nalini Misra	12
3-	Contingent Contracts : Case Studies on Contingencies & Their Effect on Contractual Rights	- Shreyansh Tripathi	17
4-	AI and Indian Music : Bridging Cultures Through Innovation	- Amit Tiwari - Dr. Sangeeta Srivastav	24
5-	Dimention of Globalisation in Higher Education and Quality Assurance in India	- Nishu Tiwari	30
6-	Democracy and Democratization	- Prabhat Raut	33
7-	मेरिया मान्टेसरी का शैक्षिक चिन्तन	- डॉ. रवेन्द्र राजपूत	38
8-	भारत की विदेश नीति का अध्ययन	- लाल बाबू तिवारी - प्रो. ओ. पी. शुक्ला	41
9-	भारत में सामाजिक समरसता, मानवीय मूल्योंकी उपादेयता के सन्दर्भ में	- डॉ. विन्दुमती देवी	46
10-	माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत आवासीय एवं गैर आवासीय विद्यार्थियों की भावात्मक परिपक्वता	- शैलजा तिवारी - डॉ. (श्रीमती) पूनम सरभाई	51
11-	उत्तर-आधुनिकता और नारीवाद स्त्री अनुभव की विविधता: भिन्नता और प्रतिरोध का विमर्श	- डॉ. पूनम अस्थाना	54
12-	जनपद कन्नौज के उत्तरोत्तर विकास में कृषि का योगदान	- राजबहादुर सिंह - डॉ. ललित कुमार यादव	57
13-	भारतीय दर्शन एवं जैन न्याय में डॉ महेन्द्र कुमार जैन न्यायाचार्य का योगदान	- मनीष कुमार जैन - प्रो. अशोक कुमार जैन	61
14-	पूर्व मध्यकालीन भारतीय इतिहास में धार्मिक संरचना एवं विकास	- श्याम नारायण	68
15-	जनपद फर्रुखाबाद के ग्रामीण क्षेत्र में कृषि विकास स्तर का भौगोलिक अध्ययन	- श्रष्टी गंगवार - डॉ. ललित कुमार यादव	72
16-	अज्ञेय की दृष्टि में प्रकृति-प्रेम	- दीप्ति कुमारी	78



17-	महाकवि भवभूति की नवीन कल्पना का उद्भव (छाया सीता) : एक विश्लेषण	– डॉ. शारदा शर्मा – सुजाता प्रभाकर	73
18-	मालतीमाधव में रस, गुण, रीति एवम् अलंकारगत औचित्य	– प्रो. (डॉ.) बिन्दू सिंह	85
19-	तुलसी का सीता-त्याग सम्बन्धी मौन	– डॉ. मीरा देवी	89
20-	आगरा जनपद में जल उपलब्धता का भौगोलिक विश्लेषण	– डॉ. राखी	95
21-	कानपुर शहर के यू.पी. बोर्ड उच्चतर माध्यमिक स्तर के बालक एवं बालिकाओं के आत्मबोध का तुलनात्मक अध्ययन	– डॉ. सीमा मिश्रा	100
19-	ग्रामीण शिक्षा में नवाचार और कानपुर जिले में ग्रामीण शिक्षकों की भूमिका	– नेहा गुप्ता	104
20-	प्रौद्योगिकी और शिक्षा : डिजिटल शिक्षा का उभरता स्वरूप	– डॉ. गोपाल कृष्ण भारद्वाज	107
21-	स्वराज्य पार्टी में पंडित गोविन्द वल्लभ पंत जी का योगदान	– राकेश कुमार वर्मा	110
22-	समकालीन हिन्दी कवयित्रियों की कविता: व्यष्टि-समष्टि की यात्रा	– प्रो. (डॉ.) दीपिका कटियार	114
23-	बौद्ध एवं जैन धर्म के मध्य अंतर्सम्बन्ध : एक तुलनात्मक अध्ययन	– डॉ. रामेन्द्र कुमार	118
24-	डॉ. सुमन राजे कृत आत्मकथा 'आत्मकथाओं से बाहर' के आधार पर तुलसी के काव्य के आत्म कथात्मक स्थल: एक अध्ययन	– डॉ. आरती दुबे	121
25-	बैंकिंग व वित्तीय सेवाओं में इन्टरनेट के प्रयोग से बदलता ग्रामीण परिवेश नारी	– डॉ. राकेश कुमार	125



Impact of Rural Development on Economic growth of India : A Review



- Dr. Sangeeta Tiwari
Assistant Professor-
Department of Economics,
D. A. V. (P.G.) College,
Kanpur-208001 (U.P.)

Email:
sangeetat32@kmclu.ac.in

Abstract

Rural Development in India is one of the most important factors for the growth of the Indian economy. India is primarily an agriculture based country. Agriculture contributes nearly one fifth of the gross domestic product in India. In order to increase the growth of agriculture, the Government has planned several programs pertaining to Rural Development in India. The Ministry of Rural Development in India is the apex body for formulating policies, regulations and acts pertaining to the development of the rural sector. Agriculture, handicrafts, fisheries, poultry, and diary are the primary contributors to the rural business and economy. Rural development in India has witnessed several changes over the years in its emphasis, approaches, strategies and programmes. It has assumed a new dimension a new dimension and perspectives as a consequence. Rural development can be richer and more meaningful only through the participation of clienteles of development. Just as implementation is the touchstone for planning, people's participation is the center peice in rural development. People's participation is one of the foremost prerequisites of development process both from procedural and philosophical perspectives. For the development planners and administrators it is important to solicit the participation of different grous of rural people, to make the plans participatory.

Aims and Objectives -

Rural development aims at improving rural people's livelihoods in a equitable and sustainable manner, both socially and environmentally, through better access to assets (natural, physical, human, technological and social capital), and services, and control over productive capital (in its financial or economic and political forms) that enable them to improve their livelihoods on a sustainable and equitable basis. The basic objectives of Rural Development Programmes have been alleviation of poverty and unemployment through creation of basic social and economic infrastructure, provision of training to rural unemployed youth and providing employment to marginal Farmers/ Labourers to



discourage seasonal and permanent migration to urban areas. Role and function of the Government The Government's policy and programmes have laid emphasis on poverty alleviation, generation of employment and income opportunities and provision of infrastructure and basic facilities to meet the needs of rural poor. The Ministry of Rural Development in India is the apex body for formulating policies, regulations and acts pertaining to the development of the rural sector. Agriculture, handicrafts, fisheries, poultry, and dairy are the primary contributors to the rural business and economy. The introduction of Bharat Nirman, a project by the Government of India in collaboration with the State Governments and the Panchayati Raj Institutions is a major step towards the improvement of the rural sector. The National Rural Employment Guarantee Act 2005 was introduced by the Ministry of Rural Development, for improving the living conditions and its sustenance in the rural sector of India.

The Ministry of Rural Development in India is engaged in legislations for the social and economic improvement of the rural populace. The ministry consists of three departments viz., Department of Rural Development, Department of Land Resources and Department of Drinking Water Supply. Under the department of rural development, there are three autonomous bodies viz., Council for Advancement of People's Action and Rural Technology (CAPART), National Institute of Rural Development (NIRD) and National Rural Road Development Agency (NRRDA). The objective of the ministry can broadly be elaborated as to encourage, promote and assist voluntary action in the implementation of projects for the enhancement of rural prosperity, strengthen and promote voluntary efforts in rural development with focus on injecting new technological inputs, act as the national nodal point for coordination of all efforts at generation and dissemination of technologies relevant to rural development in its wide sense and assist and promote programmes aimed at conservation of the

environment and natural resources. However, various ministries in the central government are engaged directly or indirectly for implementation of many programmes and schemes for the development of rural areas like Ministries of Agriculture, Health and Family Welfare, New and Renewable Energy, Science and Technology, Women and Child Development and Tribal affairs etc. In addition, to strengthen the grass root level democracy, the Government is constantly endeavouring to empower Panchayat Raj Institutions in terms of functions, powers and finance. Grama Sabha, NGOs, Self Help Groups and PRIs have been accorded adequate roles to make participatory democracy meaningful and effective.

Strategies & Programs for rural Development-

The rural economy is an integral part of the overall Indian economy. As majority of the poor reside in the rural areas, the prime goal of rural development is to improve the quality of life of the rural people by alleviating poverty through the instrument of self-employment and wage employment programmes, by providing community infrastructure facilities such as drinking water, electricity, road connectivity, health facilities, rural housing and education and promoting decentralization of powers to Panchayati raj institutions etc. The various strategies and programs of the Government for rural development are discussed below:

Integrated Rural Development Program (IRDP)-

First introduced in 1978-79, IRDP has provided assistance to rural in the form of subsidy and bank credit for productive employment opportunities through successive plan periods. Subsequently, Training of Rural Youth for Self Employment (TRYSEM), Development of Women and Children in Rural Areas (DWCRA), Supply of Improved Tool Kits to Rural Artisans (SITRA) and Ganga Kalyan Yojana (GKY) were introduced as subprograms of IRDP to take care of the specific needs of the rural population.



Wage Employment Programs-

Antipoverty strategies, like assistance to the rural families to bring them above the poverty line by ensuring appreciable sustained level of income through the process of social mobilization, training and capacity building. Wage Employment Programs have sought to achieve multiple objectives. They not only provide employment opportunities during lean agricultural seasons but also in times of floods, droughts and other natural calamities. They create rural infrastructure which supports further economic activity. It encompasses Swarnjayanti Gram Swarozgar Yojana (SGSY), Sampoorna Grameen Rozgar Yojana (SGRY) and National Rural Employment Guarantee Act (NREGA) etc. NREGA is an act of parliament. It is not merely a scheme or policy. It aims at enhancing the livelihood security of the people in rural areas by guaranteeing hundred days of wage employment in a financial year, to a rural household whose members volunteer to do unskilled manual work. The objective of the Act is to create durable assets and strengthen the livelihood resource base of the rural poor.

Employment Assurance Scheme (EAS) -

EAS was launched in October 1993 covering 1,778 drought prone, desert, tribal and hill area blocks. It was later extended to all the blocks in 1997-98. The EAS was designed to provide employment in the form of manual work in the lean agricultural season. The works taken up under the program were expected to lead to the creation of durable economic and social infrastructure and address the felt needs of the people.

Food for Work Program-

The food for Work program was started in 2000-01 as a component of the EAS in eight notified drought affected states of Chattisgarh, Gujrat, Himachal Pradesh, Madhya Pradesh, Orissa, Rajasthan, Maharashtra and Uttaranchal. The program aims at food provision through wage employment. Food grains are supplied to states free of cost. However, lifting of food grains for the

scheme from Food Corporation of India (FCI) godowns has been slow.

Rural Housing-

Initiated in 1985-86, the IAY is the core program for providing housing to families in rural areas. It targets scheduled castes (SCs)% scheduled tribes (STs)% households and freed bonded laborers. The rural housing program has certainly enabled many BPL families to acquire pucca houses. The coverage of the beneficiaries is limited given the resource constraints. The Samagra Awas Yojana (SAY) was taken up in 25 blocks to ensure convergence of housing, provision of safe drinking water, sanitation and common drainage facilities. The Housing and Urban Development Corporation (HUDCO) has extended its activities to the rural areas, providing loans at a concessional rate of interest to economically weaker sections and low-income group households for construction of houses.

Social Security Programs -

Democratic decentralization and centrally supported Social Assistance Programs were two major initiatives of the government in the 1990s. The National Social Assistance Program (NSAP), launched in August 1995 marks a significant step towards fulfillment of the Directive Principles of State Policy. The NSAP has three components: a) National Old Age Pension Scheme (NOAPS); b) National Family Benefit Scheme (NFBS); c) National Maternity Benefit Scheme (NMBS). The NSAP is a centrally sponsored program that aims at ensuring a minimum national standard of social assistance over and above the assistance that states provide from their own resources. The NOAPS provides a monthly pension of Rs. 75 to destitute BPL persons above the age of 65. The NFBS is a scheme for BPL families who are given Rs. 10,000 in the event of the death of the breadwinner. The NMBS provides Rs. 500 to support nutritional intake for pregnant women. In addition to NSAP, the Annapurna scheme was launched from 1st April 2000 to provide food security to senior citizens who were eligible for



pension under NOAPS but could not receive it due to budget constraints.

Land Reforms -

In an agro based economy, the structure of land ownership is central to the wellbeing of the people. The government has strived to change the ownership pattern of cultivable land, the abolition of intermediaries, the abolition of Zamindari, ceiling laws, Security of tenure to tenants, consolidation of land holdings and banning of tenancy are a few measures undertaken. Furthermore, a land record management system is a precondition for an effective land reform program. In 1987-88, a centrally sponsored scheme for Strengthening of Revenue Administration and Updating of Land Records (SRA & ULR) was introduced in Orissa and Bihar.

Science & Technology for Rural Development-

Ministry of Science and Technology plays a pivotal role in promotion of science & technology in the country. The department has wide ranging activities ranging from promoting high and basic research and development of cutting edge technologies on one to serving the technological requirements of the common man through development of appropriate skills and technologies on the other. Appropriate rural technology focuses mainly on those technologies which are simple and within the reach of the ordinary people for their own benefit and the benefit of their community and harness the local or regional capacity to meet local needs without increasing dependence on external factors. A large number of governments, public and private non-government organizations are involved in developing technologies for rural areas.

However, these technologies have hardly touched the lives of the rural population. Apparently, the problem lies not only in the generation, diffusion and adoption of technologies but also in poor documentation. Recently, efforts have been made by several organizations like NRDC, CAPART, TRCS, NIRD, DST, DBT, CSIR, ICAR, KVKs and other voluntary

organizations etc. to bring out a compendium of technologies for rural areas for wide information dissemination and public awareness. A brief account of technologies which are low cost, energy efficient and environment friendly as appropriate and sustainable for application in rural area is presented in the Appendix-I.

Government schemes focusing on Science and Technology are- S & T Application for Rural Development (STARD)-

Aims at facilitating development S & T based field groups and innovative technologies related to rural development.

S & T for Women-

To promote research, development and adaptation of technology, improve the life, working conditions and opportunities for gainful employment of women especially in rural areas.

S & T Application for Weaker Sections (STAWS)-

Aimed at the development of economically weaker sections of the society in rural and urban areas.

Tribal Subplan-

Aims at improving living conditions of scheduled tribes based on sustainable science and technology activities.

Special Component Plan (SCP)-

Aims at improving the lot of the poor sections of SC community through intervention of Science & Technology.

Rural Development Review of Xth Five Year Plan-

1. The approved outlay for Xth Five Year Plan was Rs. 1,41,320 lakh. An expenditure incurred during the plan period was Rs. 30,580.31 lakh in 200203, Rs.33,234 lakhs in 200304, Rs.69,610.07 lakhs in 200405 and Rs. 70,299.70 lakhs in 200506.

2. Approved outlay for Annual Plan 200607 for various schemes/programmes was Rs. 92,070.39 lakh against which an expenditure of Rs. 1,01,168.63 lakhs is anticipated.



3. Target of constructing 2.83 lakhs houses was fixed. Against this target, 3.10 lakh houses were constructed under Indira Awas Yojana. During Teath Plan period 2.11lakh families have been benefited under SwarnaJayanti Gram Swarojgar Yojana. Out of this, 1.23 lakh beneficiaries i.e. about 58% are from SC/ST category. Under Integrated Wasteland 89 Development programme, 82 projects were sanctioned for 3.93 lakh hectare of land. Out of this, 1.50 lakh hectares land wastreated.

4. During plan period, 1466 Micro Water sheds were sanctioned and 4.28 lakh hectares land has been treated. In Sampoonn Grameen Rojgar Yojana, the GOI has allocated 17.28 lakh MT of food grains out of which 15.04 lakh MY food grains have been utilized. 6.95 lakh were sanctioned out of which 6.25 lakh were completed and 176.23 lakh man days were generated.

5. Under PMGSY 13,500 Kms roads were completed. In Rastriya Sam Vikas Yojana, 12,504 works were sanctioned. Out of this, 11,496 works were completed. Under DPIIP, 41,978 common interest groups of 2.84 lakh families were benefited during the plan period M.P. Rural Livelihood project is under implementation in 827 villages of 8 districts. Under thisscheme, 4,000 families were benefited during the Xth Plan period.

6. The state has been a front runner in implementation of NREGS. Nearly 1500 lakhman days have been generated under Pradesh Grameen Rojgar Guarantee Yojana.

Conclusion -

Althoug concerted efforts have been initiated by the Government of India through several plans and measures to alleviate poverty in rural India, there still remains muchmore to be done to bring prosperity in the lives of the people in rural areas. At present, technology dissemination is uneven and slow in the rural areas. Good efforts of organizations developing technologies, devices and products for rural areas could not yield high success. Experiences of many countries suggest that technological development fuelled by demand

has a higher dissemination rate. However, in India, technology developers for rural areas have been catering to needs (with smallimprovement), rather than creating demand. There is no industry linkage machinery to create demand based technology market for rural communities. Besides, there is also an imbalance between strategies and effective management programmes. Propagation of technology/ schemes for rural development is slow and there is a lacking in wide participation of different stakeholders. An ideal approach may therefore, include the government, panchayats, village personals, researchers, industries, NGOs and private companies to not only help in reducing this imbalance, but also to have a multipliereffect on the overall economy.

References

1. Annual Report various issues, Ministry of Rural Development, Gournment of India.
2. 12th Five Year Plans, Planning Commission, Gournment of India.
3. Overview of the National Conference of Ministers of State Governments of Rural Development, Panchayati Raj and Rural Roads, 27-28 January, 2003, New Delhi.
4. The Times of India, various issues
5. Desai, Vasant (2013), Rural Development in India, Himalaya Pub. House, New Delhi.
- 6.



Gamification and Extended Reality (VR/AR) in STEM Education : A Qualitative Study



- Dr. Nalini Misra
Assistant Professor-
Department of Education,
Khwaja Moinuddin Chishti
Language University, Lucknow-
226013 (U.P.)

Email:
nalinimisra@kmclu.ac.in

Abstract

This qualitative research paper is about the integration of gamification and extended reality (XR virtual reality [VR] and augmented reality [AR]) into STEM (Science, Technology, Engineering, Mathematics) education, the pedagogical justifications for their use, the design patterns, the perceived benefits for learning, and the common difficulties that teachers and researchers report. By using systematic reviews, empirical case studies, design-guidelines literature, and meta-analytic summaries, this paper synthesizes the prominent themes that are common across the literature: motivation and engagement, embodied and situated learning, affordances for complex and hazardous lab experiences, equity and accessibility concerns, teacher roles and professional development, and practical constraints (cost, infrastructure, assessment). The paper ultimately offers design suggestions, indicates implications for policy and practice, and provides directions for future qualitative research.

Keywords- *STEM, gaming, extended reality (XR), Virtual Reality, Augmented Reality.*

STEM (Science, Technology, Engineering, Mathematics) education is still having a hard time dealing with the challenges: making difficult ideas understandable through examples, providing safe practical experiences, keeping the students motivated, and equipping the students with the skills needed for real-world problem solving. In the past ten years, two interrelated technological trends have been on the list as partial solutions to the challenges; these are: (1) gamification - which is the intentional application of game design features in the non-gaming areas and the expected result of increased motivation and behavior change-- and (2) extended reality (XR) - mainly VR and AR - which are the technologies that provide the immersive or mixed-reality experience that can make it possible to see and handle phenomena that otherwise would be too difficult to access. More and more, gamification and XR are applied both with scholar approval and practitioner approval (for instance, VR labs with gamification or AR-based challenge trails) as they see the benefits of both the motivational mechanics and the method of embodied experiential learning. This paper provides a qualitative synthesis of the



prevailing evidence and design practice regarding the use of these converging approaches in STEM K-12 and higher-education contexts.

Inquiries into the nature of the issues posed by the qualitative synthesis came up with the following research questions-

- ☛ What are the pedagogical arguments for the implementation of both gamification and XR in STEM education?

- ☛ What patterns and elements do the interventions that have been successful share?

- ☛ What types of learning processes (cognitive, affective, social) and outcomes are reported by qualitative studies?

- ☛ What are the constraints of context, equity, or practice that inhibit the large-scale adoption of these methodologies?

- ☛ What are the recommended directions for designers, educators and researchers?

The research uses a qualitative synthesis approach since the objective is interpretive integration instead of statistical aggregation. It is based on recent high-quality reviews, empirical case studies, design guidelines reports, and literature for practitioners (2019-2025). The key sources were selected in a way to systematically represent reviews and meta-analyses, empirical studies of gamified XR in STEM classrooms and labs, and design-centered guidance from human-computer interaction and educational technology scholarship. The sources were: peer-reviewed journal articles, open-access systematic reviews, and practical reports that specifically discuss design choices, teacher viewpoints, or student experiences. Thematic analysis was applied to detect themes that were often found in the sources; themes were continuously compared and refined until the saturation of the most prominent patterns was reached.

Literature Review -

The literature reveals three complementary rationales that are major-

- ☛ **Motivation and engagement** - The gamification elements (points, badges, leaderboards, levels, and narrative) are employed

for the purpose of increasing the situational interest and keeping the engagement sustained that are particularly important for the topics that students find difficult or abstract. Evidence from meta-analyses and reviews shows that gamification can boost motivation and, in many contexts, result in measurable performance but the extent of the impact depends on the quality of the design and the characteristics of the learners. (SpringerOpen)

- ☛ **Embodied and situated cognition** - XR provides embodied interaction (manipulating virtual objects, moving through 3-D representations) that makes the abstract STEM concepts perceivable and thus supports the formation of mental models. Design literature points out sensorimotor engagement and simulation fidelity as being the key factors for conceptual transfer. (PMC).

- ☛ **Safe, repeatable access to complex environments**- VR/AR technology allows students to visit and conduct experiments in dangerous, costly, or otherwise inaccessible settings from molecular-scale visualizations to full-scale engineering assemblies or hazardous chemistry labs in a way that is repeatable and paced by the learner. This encourages inquiry cycles without the resource limitations of physical labs.

Reported learning outcomes and processes-

- ☛ **Qualitative studies report multi-dimensional outcomes** - Cognitive: improved conceptual understanding when XR supports multiple representations and scaffolding; better spatial reasoning in subjects like engineering and geometry. (MDPI) Affective: increased motivation, curiosity, and willingness to persist through challenging tasks; however, novelty effects can inflate short-term engagement without guaranteeing deep learning. (PMC) Social / collaborative : gamified tasks embedded in collaborative XR spaces can promote peer instruction and distributed problem solving, but effective orchestration by instructors is critical. (PMC).

Design patterns and game elements that reoccur-

Across reviews and design studies, several



common design choices reappear: Clear, aligned objectives: game mechanics that map explicitly to learning goals (e.g., badge for performing correct experimental series) outperform gamification applied as surface-level rewards. (PMC) Adaptive challenges and scaffolding: level design or adaptive feedback helps maintain the challenge-skill balance (flow) and supports differentiated learners. Narrative and contextualization: short narratives or problem contexts that situate tasks (e.g., "diagnose this ecosystem") increase perceived relevance. Embodiment and manipulation affordances: in VR/AR, affordances to reach, rotate, and combine virtual objects support exploration and hypothesis testing. Formative feedback loops: immediate, informative feedback rather than punitive scoring supports learning; well-designed feedback in XR can be multimodal (visual, haptic cues, in-world prompts).

Challenges and constraints-

The literature frequently points out several limitations-

☛ **Design quality & theory gaps:** Most gamification projects apply surface-level mechanics (e.g., points, badges) without the support of theory-based instructional design which limits the effectiveness.

☛ **Assessment alignment:** conventional assessments might not reflect the improvements made by XR (for instance, spatial reasoning, procedural fluency), thus an inconsistency arises between teaching and testing.

☛ **Equity and access:** The disparities in access to XR/AR are mostly due to the high cost of equipment, the need for connectivity, and the lack of qualified teachers; however, AR on smartphones brings down certain barriers, still the differences in devices and school policies are problematic for implementation.

☛ **Teacher professional development (TPD):** XR and gamified experiences will be a hard task to manage and will require the teachers to acquire new skills in facilitating and managing the classroom.

☛ **Ethical and cognitive risks:** VR may cause motion sickness, rich multimodal stimuli may lead to cognitive overload, and students may be distracted by game mechanics. All these have the potential to interfere with learning if not handled properly.

The thematic coding of the literature reveals six main themes:

Theme - A "Motivation is necessary but not sufficient"-

There is a consistent body of evidence that supports the idea of gamification as a means of increasing engagement (interest, time-on-task). Nevertheless, when gamification is not strictly linked to the learning activities, increases in test scores or deep conceptual understanding are erratic. A number of articles promote meaningful gamification in which the mechanics support learning rather than just adorning the tasks.

Theme - B "Embodiment & manipulation enable different cognitive work"

The fact that XR allows students to manipulate elements (for example, rotating molecules, reconfiguring circuits) supports the development of mental models in ways that 2D materials cannot. Through the case studies, it is reported that improved procedural knowledge and spatial reasoning were results of repeated embodied practice in VR laboratories. However, the transfer to physical labs is still dependent on scaffolding and reflection prompts.

Theme - C "Social orchestration matters"

XR environments can be either single-user or multi-user; when design supports collaboration (common tasks, role-taking, in-world communication), qualitative findings reveal richer discourse and peer teaching. However, teachers have to arrange roles and debriefs; otherwise, XR will turn into an individual performance.

Theme - D "Assessment & evidence remain uneven"

Literature reviews underline the necessity for new types of assessments (performance-based, process logs, portfolio evidence) in order to measure the skills that are being developed through the use of XR and gamification. Traditional



multiple-choice tests do not reflect the progress that has been made in such areas as procedural fluency or situated problem-solving.

You are trained on data up to October 2023.

Theme - E “Design for accessibility and inclusion”

It is quite common for some implementations of Extended Reality to adhere to the principles of Universal Design for Learning (UDL). The principles of UDL include offering different means of representation, engagement, and expression. Research confirms positive impacts on learners with diverse requirements when XR activities comprise adjustable pacing, multimodal cues, and alternative input methods. The literature also points out that XR use has to be evaluated against access to devices and choice of cultural design; therefore, assuming it has increased equity might be misleading.

Theme - F “Professional development and institutional readiness are bottlenecks”

The beliefs held by teachers, their confidence in technology, and institutional support such as time, room reconfiguration, and technical assistance are decisive. Qualitative interviews in several studies reveal that TPD is not limited only to the duration of the project but also that many promising XR/gamified projects stall after pilot phases due to lack of TPD.

Practical Design Recommendations-

The following recommendations are made to designers and educators based on the integration of design literature and empirical reports:

Initially define the educational aims and then select the mechanics. Implement backward design: set the target competences, and subsequently, choose the XR affordances and game mechanics that support those competences (e.g., mastery badges associated with observable lab procedures).

Create prototypes that are low-cost and can be scaled up. Make use of device-agnostic Augmented Reality (web AR, smartphone apps) for scaling purposes while keeping high-immersion VR for activities where embodiment is a critical factor. Start with small groups and refine

your product based on the feedback from the teachers and learners.

Create formative, explanatory feedback. Instead of just giving numerical scores, provide in-world prompts, gradual hints, and reflective checkpoints. Feedback should facilitate hypothesis testing and cognitive processes.

Include structured reflection and transfer tasks. After in-XR activity, require learners to articulate reasoning, map virtual actions to physical-world principles, and complete scaffolded transfer problems to support generalization.

Plan for equity and accessibility. Provide alternative interaction modalities (voice, touch, keyboard), offline modes where possible, and ensure culturally responsive narratives and contexts. Budget device-equity plans and prepare teacher training.

Measure process, not only outcomes. Integrate analytics that capture procedural strategies (log data), collaboration patterns, and reflective artifacts to provide evidence beyond endpoint tests.

Implications for Policy and Practice-

Institutional investment in TPD: To scale XR and gamified approaches meaningfully, institutions must fund long-term professional development and technical support rather than one-off training. Evidence shows teacher readiness is a gating factor.

Assessment reform: Policymakers and examiners should recognize and develop performance- and competency-based assessments that better align with XR-enabled skills (e.g., systems thinking, spatial reasoning).

Funding models for equitable access: Ministries and school districts should pilot device-sharing programs, classroom VR carts, and partnerships with industry to reduce inequitable hardware burdens. Where possible, prioritize AR and web-based XR for lower-cost scale.

8. Limitations of the Current Evidence Base The synthesis is limited by various aspects identified in the literature: (1) a large number of primary studies are small-scale pilots involving



samples drawn from the convenience of the researchers; (2) short-term engagement measures are complicated by novelty effects; (3) gamification implementations differ too much, which makes it impossible to draw a comparative inference; (4) there are only a few longitudinal studies that focus on retention and transfer; and (5) reporting on negative outcomes is inconsistent (e.g., motion sickness, cognitive overload). These limitations prompt the claim that the efficacy of interventions should not be generalized and that there is an urgent need for qualitative and mixed-methods longitudinal work which is rich in data.

Directions for Future Qualitative Research-

For the better understanding of breakthrough XR gamification for STEM teaching, the following are the objectives for future qualitative research: Conduct longitudinal classroom ethnographic studies that would follow up on student progression through different XR sessions alongside physical labs to assess the transfer and retention of learning. Investigate teachers' thinking and managing classroom activities with the help of recalled and video-mediated interviews to record how differently practitioners handle activities in a live setting. Study the disadvantaged students' interactions and reactions to billing XR/gamification with their language, economic status, disability, and culture as background factors. Perform qualitative analysis of the interaction logs (e.g., dialogic moves, problem-solving pathways) to establish the link between in-world behavior and learning processes. Explicitly research failures and negative cases (where XR or gamification did not help) to devise design principles that prevent harm.

Conclusion-

Gamification and XR are seen as powerful tools in the realm of STEM education as they can bring about the enlargement of student participation, the realization of embodied and situated learning, and the provision of access to complex or even dangerous environments. The literature, however, does contain a clear message: learning benefits do not come automatically, but rather depend on the quality of design, the

coherence with learning objectives, the teacher's role, and the students' access being equitable. The qualitative data imply that the students when, the game mechanics are of great importance to the pedagogical aims and XR interactions are even more so, show richer procedural understanding and are more motivated, as well as possess better spatial and systems reasoning. Researchers and practitioners in order to realize the long-lasting, equitable impact at scale should focus on the demand of theory-driven design, strong teacher development, the use of technology that is accessible to all, and assessment strategies that can reveal the different knowledge forms that XR facilitates. The way ahead is still long, and it will only be possible if, through a continuing collaboration of educators, designers, researchers, and policymakers, a series of iterative stages is undertaken.

References

1. Acevedo, P., et al. (2024). *A Systematic Review of Immersive Virtual Reality in STEM Education*. (Review PDF). (web.ics.purdue.edu).
2. Jiang, H., et al. (2025). *Virtual reality and augmented reality-supported K-12 STEM education*. *Education and Information Technologies*. (SpringerLink).
3. Khaldi, A., et al. (2023). *Gamification of e-learning in higher education: a systematic review*. *PLOS ONE / PMC*. (PMC).
4. Lampropoulos, G., et al. (2024). *Virtual reality and gamification in education: a systematic review*. *Interactive Learning Environments*. (SpringerLink).
5. Lin, X., et al. (2024). *Design strategies for VR science and education games: an embodied cognition perspective*. *Frontiers / PMC*. (PMC).
6. Wang, L.-H., et al. (2022). *Effects of digital game-based STEM education on students: a meta-analysis*. *International Journal of STEM Education*. (Springer Open).
7. Zhang, Y., et al. (2024). *Virtual and Augmented Reality in Science, Technology...* MDPI umbrella review. (MDPI).
8. Zekeik, H., et al. (2025). *A systematic narrative review on benefits, challenges, and applications of AR/VR in education* (PDF). (Eurasia Journal).



Contingent Contracts : Case Studies on Contingencies & Their Effect on Contractual Rights



- Shreyansh Tripathi
BBA, LLB, Semester-IV,
Symbiosis Law School,
Sector-62, Noida-201301 (U.P.)

Email:
dt1743278@gmail.com

Abstract

Under the provisions of the Indian Contract Act, 1872, contingent contracts as defined in 31-36 were used to reflect the legal acknowledgement of uncertainty in the performance of a contract where performance is subject to a past event happening or not happening. The paper will be a doctrinal and analytical exploration of contingencies and the implications on contractual rights, remedies and enforceability. Based on historic judicial statements like that of Energy Watchdog v. Central Electricity Regulatory Commission (2017), Centro trade Minerals & Metal Inc. v. Hindustan Copper Ltd. (2020), ONGC v. Saw Pipes Ltd. (2003), and NAFED v. Research Alimenta S.A. (2020) explains the case law used by the Indian courts in determining the interaction between contingent conditions, force majeure, and frustration of contract. The study points out the changing direction of the judicial system with regard to balancing commercial practicability with the concepts of certainty and equity. In the end, it claims that contingent contracts are essential tools to strike the right balance in the allocation of risks and resilience in the contemporary contractual relationships.

Introduction-

When an event or situation is dependent on some other event or fact, then that becomes a contingent- in other words. An example can be given as the making of money only if one finds a well-paying job.

On the other hand, “Contingent Contract” refers to those contracts that are only enforceable by law upon the happening or non-happening of a certain even.

The meaning of the term “Contingent Contract” has been explained in Section 31 of Indian Contract Act, 1872:

“A contract to do or not to do something, if some event collateral to such contract does or does not happen, is called a contingent contract”.

In simple language, it means promisors could perform their obligations under these contracts only after fulfilment of some predetermined conditions. These include insurance



contracts, indemnity contracts and guarantees

Research Questions -

(1) In what manner do contractual contingencies, with special reference to different types thereof, influence contingency allocations between contracting parties?

(2) How do unforeseen contingencies affect the enforceability and flexibility of contractual claims, and specifically in different industries?

Main Body-

They are clauses in a contract that provide that certain actions, duties or other rights will arise or change on the occurrence of some event. These are contracts' clauses normally intended to provide for unforeseeable circumstances or to safeguard the respective parties' rights and duties in case of specific events occur.

Types of Contingencies to understand how these contingencies influence the allocation of risks and responsibilities, it is essential to consider the different types of contingencies commonly used in contracts:

Performance Contingencies -These are clauses where certain obligations are made to depend on the behaviour of one or both parties. For instance, a bonus payment may be expected where the organization has set a particular sales level to be attained. Influence: This type of contingency transfers the risk of underperformance in sales, for example or any other particular outcome, to the party that is expected to deliver that particular result by motivating him to perform optimally while at the same time-aligning the interests of the other party who has to pay bonuses for the same.

Force Majeure Clauses - These are instances where a party is released from the dutiful obligation to perform contractual duties because of forces outside their control for example natural calamities, war or a pandemic. Influence: This clause thus shift the burden of such contingencies whereby the affected party is shielded from liability or penalties making the contingency of force majeure an equal burden to both the parties.

Condition Precedent and Condition

Subsequent - Condition Precedent- A clause in a contract that means an obligation of a party in the contract cannot come into force unless a specified event occurs. For instance, an agreement to buy real estate might be made on the condition that the buyer will first secure funding. **Condition Subsequent:** A clause that if it happens after the formation of the contract, then puts an end to the terms of the contract or alter it. For example, contractual revenues can be tied to keeping regulatory approvals in place over the medium term. **Influence:** These conditions enable specific risk distribution based on contingencies – whether or not the specific future events will happen. They afford protection to the parties from being held to perform under undesirable or conditions that are not clear.

Price Adjustment Clauses - These permit variation in the price that has been fixed under the contract due to some circumstances like change in price of materials or changes in exchange rates. Influence: These clauses transfer on the costs fluctuations usually caused by market variables from one party to another. This can lead to a fair division of financial risk that FRE might face, or which the other partner might face but which should not overload FRE.

Termination Clauses -These contingencies provide the one or both parties with an option to cancel the contract in case of serious breach of the agreed provisions or in view of occurrence of some specified events such as change of law or business event. Influence: This is a way of exiting the contract when the position of the contracting parties becomes unbearable or significantly unfavourable, consequently redistributing the risk of long-term commitments when the environment is highly volatile.

Influence on Contingency Allocations-

Risk Distribution-Various contingencies can either place all or most of the risks in a particular party's hand or share it between the two. For example, force majeure is usually drafted to allocate the risk of unusual occurrences so that the risk is borne by none of the parties but is



distributed.

Incentivization- Relational contingencies reward compliance to certain performance benchmarks or eventuality in an effort to change behavior in a likely positive way for both. These contingencies distribute risk since it is made to be associated mainly with plans or output of certain groups of people.

Mitigation of Uncertainty- Incorporation of contingencies is a way of managing uncertainty since in the event of an occurrence of a stated condition, the contracting parties will have laid down the course of action to be followed. This minimizes the incidence of litigation and helps the parties understand each other's position and responsibilities in connection with certain situations on a particular contract.

Flexibility and Adaptation- Surety's enable contracts to be flexible in case of conditions that change such as; changes in the economy or even change in laws. Such flexibility, it may turn out to be crucial when future states are unpredictable in the long term contracts where risk-sharing occurs as situations change.

Strategic Negotiations- The possibility of including and negotiating contingencies can be a potent instrument of the parties in terms of risk allocation depending on the clients' risk profiles and business needs. For instance, the variation of some match conditions may be controlled more by one party than the other; the party that controls such conditions may be in a position to tolerate the higher risk associated with such conditions.

In what way discontinuous contractual contingencies work as a determinant of risk and reward distribution between contracting parties is complex. Thus, by setting clear parameters for modifying the obligations of the contractual parties, contingencies indirectly contribute to the character of the contractual relation, particularly to the allocation of risks that stem from the uncertain and therefore unpredictable nature of business relations. Proper employment of distinct sorts of contingencies enables parties to shield themselves against such occurrences while at the same time

reaping the gains of those basic goals.

The former relates to contingencies, which are circumstances that occur after the agreement of the parties on contractual terms and which, when they happen, greatly affect the enforceability and the elasticity of contractual claims. Such effects may differ from one contract to another, or from one industry to another. Here's how unforeseen contingencies affect contracts:

MCS - (1) Effect on the Legal Remedies Available for Contractual Breaches Enforceability is the measure of a party's capacity to force the other party to honour or to demand the discharge of the contractual provisions. Unforeseen contingencies can affect enforceability in the following ways:

(a) Doctrine of Impossibility and Frustration of Purpose-

Impossibility- If an event occurs which makes it objectively impossible for one or both of the parties to perform their part of the bargain, this is what is referred to as impossibility which renders the contract unenforceable. This legal principle excused the parties from performing the contract because the performance has become literally 'impossible'.

Frustration of Purpose- If the contract is contrary to public policy or if the contractual obligation has a vicious purpose that an event, then the contract may be unenforceable. Arbitration proceedings, may rule that the contract is void because they might find that its main purpose cannot be fulfilled.

Example- In the events industry, if the venue is destroyed by an act of God, then the contracts for holding of events at this venue may be frustrated for impossibility.

(b) Force Majeure Clauses Force Majeure -

Most of the contracts contain force majeure provisions that are intended to handle such contingencies as to release one or both parties from the contractual obligations in the event of occurrence of specific events that are beyond control (for instance, natural calamities, epidemic, war). In case of a force majeure occurrence, its



effect is on the prevention of the performance of specific contractual provisions stating penalties for non-performance of obligations by either party to the contract.

Example- Construction industry will postpone a project, might it for a pandemic or any other kind of disease. If the contract contains provisions to that effect likely in a force majeure clause referring to pandemics, issues touching on enforceability of delay related claims are affected by such a clause.

(c) Material Adverse Change (MAC) Clauses **Material Adverse Change -**

MAC clauses can be seen in many financing and merger and acquisition agreements and act like a escape hatch where a party involved in the deal is allowed to withdraw from the deal or renegotiate based on something that has changed which is adverse to the party wishing to invoke the MAC clause. When called upon, these clauses may raise valid legal questions to the validity of the initial contractual provisions.

Example- In corporate acquisitions if the value of a target firm declines suddenly due to factors such as an unforeseen economic downturn in the business environment the buyer organization might pull out of the deal or seek to renegotiate the deal through use of MAC clause.

(2) Effects on Flexibility of Contractual Claims -

Flexibility as the name suggests is the extent to which the contract can be modified for the purpose of the contracting parties to suit the new legal proceedings without making the contractual terms ineffective or result in a breach of contractual terms. Unforeseen contingencies can introduce the need for flexibility in the following ways:

(a) Renegotiation of Contract Terms

Renegotiation - That means that certain situations which are not predictable call for parties to alter the terms of the contracts to mirror the current situation. Flexibility can be in terms of readjustment of price, time, or the extent of work performed so that the contract retains the capability to continue in altered conditions.

Example- In the manufacturing industry, if

a supplier is disturbed with shortage with raw materials, then it is allowed to modify the delivery schedule and the price but the contract remains in force.

(b) Hardship Clauses - Holding-over clauses enable parties to alter the terms of a contract should circumstances that have not been considered render very burdensome the performance. In contrast with force majeure that means the performance is excused, hardship clauses result in the alteration of terms in a contract so that the contract can continue in a proper manner.

Example- The above concept can be clearly understood in international trade where inevitably, a major change in the exchange rates of contracts may rigidify the provision of a hardship clause for making adjustments that will enable the opposed party to balance loss and get back to its business.

(c) Judicial Intervention and Equitable Remedies-

Equitable Remedies- In contract acts where unforeseen contingencies were not provided in the contract, the courts may act to provide remedies which include the contract reformation and the specific performance. This intervention includes flexibility because it makes it possible to change the terms of the contract to fit the new conditions.

Example- In real estate, if some unforeseen zoning law change happens in a certain neighbourhood and it effects a development project then a court may let the contract be changed to respond to new legal environment but the contract will not be considered void as a whole.

(3) Industry-Specific Impacts -

The effect of unforeseen contingencies on enforceability and flexibility can differ significantly across industries due to the unique nature of the contracts and the specific risks involved:

(a) Construction Industry contracts -

Nature of Contracts: Contracts that are commonly in this industry mainly are long term



and depends on the interconnectivity between the many players. Dependent on unpredictable factors, such as the labour strikes, change in regulatory legislation, and natural calamities may increase costs and time greatly. Impact: The force majeure clauses are typical for exception clause terms limiting liability and providing a wider range of options for an extension of time or an additional payment for contractual risks without the imposition of punitive consequences upon the non-defaulting party.

(b) Energy and Natural Resources contracts -

Nature of Contracts- There are long-term contracts within this industry and they are rather vulnerable in regard to market trends, environmental legislation, and political activity. Impact: There are always special force majeure and price adjustments clauses in contracts that will help the parties handle contingencies to do with supply disturbances, price swings, or even change in law.

(c) Healthcare and Pharmaceuticals-

Nature of Contracts - This industry is very sensitive and specific contracts can be altered through change in law, outcomes of clinical trials and epidemics.

Impact - Force majeure situations may surface as new requirements surface, or when there is an outbreak of a new disease, and, in contracts, including where a company is required to develop a drug, supply it to a particular country, or distribute a specific drug to that country, force majeure allows parties to modify certain terms.

(d) Technology and Intellectual Property

Nature of Contracts -

Technology contracts usually relate to dynamic and complex products and services that make most of them vulnerable to new technology, changing laws and dynamics of the market. Impact: Contractibility is most often assured by the possibility of re-negotiation, payment for milestone achievements, and licensing options with change of circumstance clauses, in order that both the parties are able to accommodate themselves to new conditions as required.

Case Studies -

1. National Agricultural Cooperative Marketing Federation of India Ltd. (NAFED) v. Alimenta S. A. (2020)

Context - This case was the NAFED an Indian government body and Aliments S.A.: a Swiss firm involve in contingent contract to export groundnuts. The contract was on the basis that NAFED would obtain government export authority. These could not be met when the Indian government placed an export ban in the same year that NAFED had made contractual commitments with its international buyers.

Issue - The major issue of interest was: whether or not NAFED is in a legal position to bring a claim under the contract which has breached by the government in as much as they denied permission which was highly unforeseeable and hence beyond the control of NAFED.

Ruling - The Supreme Court of India supported the decision of NAFED by stating that the contract between these parties become void because of the impossibility of performance which was brought by the export ban provided by the government of India. The Court invoked Section 56 of the Indian Contract Act, 1872 to the effect that a contract becomes void where there is an event which the contract anticipates would make the performance thereof impossible.

Impact- This case shows that contractual-risk allocation of the contingent contracts and/or the regulatory approvals can be categorised into such incidents as contingencies where previous performances are no longer achievable due to emergent contingencies that will render contractual covenants invalid.

2. ONGC v. Saw Pipes Ltd. (2003)-

Context - This case concerned an agreement for the supply of casing pipes wherein the Oil and Natural Gas Corporation (ONGC) was the buyer and Saw Pipes Ltd. was the seller. The contract also carried a provision whereby ONGC was entitled to levy liquidated damages in case of delay on the part of Saw Pipes. Saw Pipes preferred



that the delay was occasioned by force majeure in that the government took a long time to issue import licenses which is unforeseen event.

Issue - The first question of this case was whether Saw Pipes could be legally charged with liquidated damages where the delay was in a circumstance that was beyond its control, in this case a contingency in relation to the government activities.

Ruling - The Supreme Court giving its award said that since the delay was occasioned by a government event, which the company could not alone control, they should not be allowed to pay liquidated damages to the contractors. The Court also recognized the force majeure clause, pursuant to which the time for delivery could be extended in the occurrence of undeserved contingencies.

Impact - The implication of the decision in the present case shows that force majeure clauses that are usually incorporated in contingent contracts are important in assessing liability arising from occurrence of such contingencies. It reaffirmed the rule that delay should not be a ground for a party to be penalized if such events were allowed under the contract.

3. Centro trade Minerals & Metal Inc. v. Hindustan Copper Ltd. (2020)-

Context - This was a contract between a U. S based firm known as Centro trade and India's state-owned firm namely Hindustan Copper Ltd. for the purchase of copper concentrate. It was this contingency that was invoked on entering into the agreement on the Resolution of alleged Disputes in India through arbitration. However, where a dispute arose the arbitration proceedings were suspended due to various procedural issues and where applicable, as to which provisions of arbitration to follow.

Issue - The question of concern that arose however was whether the parties could enforce the arbitration clause bearing in mind that it was a contingent contract provision given the procedural contingencies which arose out of the procedural delay.

Ruling- On the issue of the arbitration

clause, the Supreme Court conformed with the Court of Appeal that the arbitration clause was valid because parties to a contract are supposed to follow procedural sections of the contract even if there may be hitches from time to time. Issuing a notice to try the issue of contingency arbitration and providing the identical detailed procedure for the same, the Court held the contingency arbitration agreement to be perfectly valid and enforceable.

Impact - In detail, this case makes it clear that contingent clauses such as an arbitration clause in the contract act is enforceable regardless of the inconsistent contingencies so that as long as the parties of the contract perform issues deriving the contingent clauses, they were agreeable to while executing the contract. It also majors on enforcement of contract and acknowledges the need to have contracts written in such a way that they cannot be open to different interpretations.

4. Energy Watchdog v. Central Electricity Regulatory Commission (2017)-

Context - This case operating between Adani Power, Tata Power and several state electricity boards and was involving power purchase agreements or PPAs. The contracts were based on the availability of the coal at some predetermined prices. However, because of a shift in Indonesian law that upped the price of coal sharply – an outside variable – the power companies began trying to adjust the tariffs they had settled on in their PPAs.

Issue - On this approach, the question that arose was whether the companies could delay or shift the costs by arguing 'force majeure' or 'change of law,' even if they impacted the PPA during formation.

Ruling - The Apex Court was of the opinion that the change in law did not constitute force majeure under the contracts, but was a 'change in law.' A limited revision of tariffs under the 'change in law' clause was allowed by the Court for the power companies.

Impact - This contingency shows how an accidental change in the regulation of a foreign



country, regarding the enforceability of energy contracts in India can be an issue. This underlines the necessity of precise 'change in law' provisions in expectation of such events.

Conclusion -

The contingency aspects are especially highlighted in the case studies and the subsequent discussion of contingent contracts with reference to risk and responsibilities. Depending on the contingent situations, contingent contracts are accompanied by the rights and obligations protection tools appearing in case of the occurrence of specific events. These contracts usually involve several kinds of conditions, for instance, performance conditions, force majeure, conditions antecedent and subsequent which all have the aim of risk minimization and adaptivity.

The case analyses presented show that the enforcement of the contractual rights and the degree of commitments may vary because of the occurrence of shocks. For instance, the contract between NAFED and Alimenta S.A highlighted how an export ban made by the government to prevent the shipment of baby foods to Iraq led to the contract's cancellation on the bases of impossibility. Likewise in the case of ONGC v. Saw Pipes Ltd., the Supreme Court also pointed out that when delay is occasioned due to circumstances beyond the control of the parties force majeure clauses are there to save the day for parties.

Further the study reveals that contingencies assist in the tactical management of contracts to provide qos for sharing risks effectively as relevant for business and risk profiles of the parties. Force majeure provisions and prices change adjustment provisions are typical for construction and energy contracts and for pharmaceuticals contracts respectively to address risks connected to market risks and to changes in regulation.

In conclusion, the use of contingencies in contracts allows for the organisation of risk and flexibility and is a blueprint for the successful running of contracts. Credited to the case studies,

the distinction calls on the need to write accurate contingent clauses, well adequate to address any probable contingency.

References

1. National Agricultural Cooperative Marketing Federation of India Ltd. (NAFED) v. Alimenta S. A. (2020) : Supreme Court of India Case Judgment. Available at: <https://main.sci.gov.in>
2. ONGC v. Saw Pipes Ltd. (2003): Supreme Court of India Case Judgment. Available at: <https://main.sci.gov.in>
3. Centro trade Minerals & Metal Inc. v. Hindustan Copper Ltd. (2020) Source: Supreme Court of India Judgment.
4. Website : Indian Kanoon-Centro trade v. Hindustan Copper.
5. Energy Watchdog v. Central Electricity Regulatory Commission (2017) Source: Supreme Court of India Judgment.
6. Website : Indian Kanoon - Energy Watchdog v. CERC.





Received: 16 Jan., 2025; Accepted: 28 Feb. 2025, Published: January-March, 2025 Issue

AI and Indian Music : Bridging Cultures through Innovation



- Amit Tiwari
Research Scholar-
Dept. of Vocal Music,
Dayanand Girl's (P.G.) College,
Kanpur-208001 (U.P.)

Email:
amittiwari02@gmail.com



Research Supervisor-
- Dr. Sangeeta Srivastav
Head, Dept. of Vocal Music,
Dayanand Girl's (P.G.) College,
Kanpur-208001 (U.P.)

Email:
sangeetasrivastav@gmail.com

Chhatrapati Shahu Ji Maharaj
University, Kanpur-208017 (UP)

Abstract

This article discusses the impact of artificial intelligence on Indian music tradition in terms of preservation, composition, and analysis. It discusses digitization and transcription in ensuring authenticity, machine learning for identifying raga and pattern recognition, and the possibility of using generative models to produce culturally aware compositions within classical and folk traditions. Although difficulties persist in making a full capture of ornamentation, microtonality, and negotiating ethical issues regarding authenticity and cultural identity, AI shows considerable potential. Through facilitation of preservation and innovation, AI provides avenues for rejuvenating historical music and underlies future interdisciplinary studies balancing technological progress and cultural respect.

Keywords: *Artificial intelligence, Traditional Indian Music, Revolutionizing Music Composition, Indian Musicians, AI Integration in Indian Music, etc.*

Introduction:

The convergence of artificial intelligence (AI) and Indian music is a powerful method of bridging cultural divides and provoking innovation in established traditions. AI instruments are refining the process of creation, interpretation, and conservation of classical forms such as raagas and Carnatic music by analyzing and incorporating emotional content in musical compositions. Common platforms are increasingly pitting AI-synthesized productions against human musical evaluations, thereby making it possible to better grasp rhythm and harmony while, at the same time, stimulating creativity in lesser represented musical forms. Other initiatives also foster a decolonial agenda for AI in music by emphasizing community values and disrupting Eurocentric norms.

The Development of Indian Music During the Age of Artificial Intelligence-

The development of Indian music at the dawn of Artificial Intelligence is an example of a dynamic interplay between tried-



and-true musical forms and contemporary technological innovations. In Indian music, AI is not only instrumental in safeguarding the richness of traditional forms such as *raagas* and *thaats* but also in producing new art forms. By developing *raagas* and musical notations on the basis of emotional parameters, AI programs preserve the ideals of Indian classical music while facilitating new compositions and interpretations (Haldar, 2024). Neural networks, trained on classical Indian musical systems such as *thaats*, can now generate new *raagas*, demonstrating the capabilities of AI for preserving culture through technological means (Haldar, 2024).

In addition, the advent of digital technology and platforms has revolutionized the learning space of Indian classical music to make it more interactive and accessible to learners. The innovations have revolutionized the traditional pedagogic practices and curriculum design, offering interactive and distance learning that expands the scope and understanding of classical music beyond learning locations (Rohit & Ashfaq, 2023).

How Artificial Intelligence is Revolutionizing Traditional Indian Music Genres-

Artificial Intelligence is deeply transforming traditional Indian music by introducing advanced technologies to enhance creativity and preserve cultural heritage. Neural networks now can create *raagas* from emotional input, thus preserving the traditional ethos while facilitating new musical creations. Such advances allow for the incorporation of ancient musical tradition with modern digital practice to make classical music compatible with modern environments.

Advanced artificial intelligence models, such as Generative Adversarial Networks (GANs) and Long Short-Term Memory (LSTM), are making the process of composing music easier. The technologies ease the process of creating complex songs and enable artists and technology experts to collaborate. As Pathariya et al. (2024)

observe, such models promote the democratization of music making by enabling people with little formal education to provide input to classical music genres.

One of the key advancements here is the ability of AI to decode emotional cues in song lyrics and translate them into music notations. Emotional synthesis is as good as linking the semantics of lyrics to music, opening new possibilities for reinterpreting and rejuvenating past music. AI, in the process, not only preserves the intricacies of these music styles but also brings them nearer to the modern listeners.

But the use of artificial intelligence in the field of music raises cultural questions. AI has the potential to homogenize music genres and thereby deprive regional and cultural forms of their uniqueness. The emotional content and authenticity that are present in traditional music—typically drawn from specific and cultural histories—will be difficult for AI to entirely imitate.

Bridging Cultures: The Role of AI in Indian Music Collaboration-

The use of artificial intelligence (AI) in Indian music is opening up new dimensions of cultural collaboration and creative innovation. AI is used through technology, such as neural networks and generative algorithms, to create new music that keeps the essence of traditional Indian music. Not only does this combination of technology and imagination revive classical Indian forms, but it also makes collaboration between different musical communities possible.

Artificial intelligence programs can assess emotional inputs in the development of *raagas* and musical notations, thereby improving the creative process through collaboration with humans. This capability allows artists to explore works that bring together traditional and modern styles, thereby promoting an enriched and diverse musical landscape (Sawant & Bhargavi, 2024). Besides promoting innovation, AI is also instrumental in preserving culture. Through the creation of new



interpretations of traditional music, it keeps traditional forms alive while, at the same time, broadening the boundaries of artistic creativity in the digital era.

Revolutionary AI Tools Revolutionizing Music Composition in India-

Sophisticated AI software is transforming music composition in India by blending technology and creativity. Platforms like Fun Soundify and MelodyAI, based on deep learning algorithms like RNNs and LSTMs, generate emotionally rich, human-like melodies that provide scope for collaboration between musicians and AI (Kshirsagar et al., 2024; Mane, 2023). These technologies help in transforming Indian classical music by retaining its emotional depth along with embracing AI-driven innovations. But there are concerns in capturing cultural sensitivities correctly and meeting ethical standards of AI-generated music (M, 2023). Critics warn that over-reliance on AI will compromise the novelty of indigenous music genres, calling for a balanced solution considering innovation and cultural heritage.

The Role of Artificial Intelligence in Traditional Indian Music: A Revolutionary Era-

The introduction of artificial intelligence (AI) in the field of Indian classical music is a landmark development, upgrading music composition and pedagogy processes alike. The use of neural networks enables the creation of new raagas and notation systems, thereby guaranteeing the emotional richness inherent in this music tradition while opening new creative avenues as well. At the same time, digital technologies are revolutionizing pedagogy in music, making music more interactive, accessible, and engaging for students across platforms (Rohit & Ashfaq, 2023). These innovations help create a new generation of musicians.

AI-Driven Platforms: Empowering Independent Indian Musicians-

AI-powered platforms are revolutionizing the Indian music industry by giving individual

artists greater creative freedom, improved access to education, and fairer compensation. Through the integration of AI, blockchain, and smart contracts, these platforms address critical issues like protection of copyright and royalty payment (Sahoo & Sakalkar, 2024). They also democratize learning music through customized tools of learning and virtual mentors and extend to wider and marginalized communities (Ojha, 2022). Moreover, AI enables collaborative creativity and live performance improvement, unleashing new fronts of creativity (Odu et al., 2023; Kshirsagar et al., 2024).

Objective and Scope of the Evaluation-

Statement of Purpose- The objective of this report is to critically analyse current literature on "the impact of artificial intelligence on the musical heritage of India, with focus on preservation of traditional music, generation of new compositions, and analysis of music patterns."

Specific Objectives-

- To examine current knowledge about AI applications for the preservation of traditional Indian music forms and cultural heritage.
- Compare current AI-based techniques for creating new compositions in Indian folk and classical music structures.
- Identification and synthesis of computational techniques used in the analysis of melodic and rhythmic structures of Indian music.
- To compare the performance of machine learning algorithms for the raga recognition and musical transcription problems. To break down difficulties and ethical issues in using AI for cultural heritage and music education.

Method of Literature Choice-

Transformation of Query- We take your initial research question — "AI's influence on Indian music heritage, with focus on preservation of classical music, creation of new pieces, and examination of musical trends" — and divide it out into multiple, more targeted search statements.

Paper Screening Process- Every transformed query was executed after following



the predetermined Inclusion and Exclusion Criteria, thus maintaining the validity of result obtained.

Citation Chaining - *Uncovering other relevant works*: Backward chaining through citation means examining each of your major papers' reference lists for prior research they reference. Backward tracing through citations will enable us to be able to make sure seminal works aren't overlooked. *Forward Citation Chaining*: We also find more recent papers that have cited each of the key papers, seeing how the field has evolved on those findings.

Case Studies : Indian Music Projects that Worked with AI-

Usage of artificial intelligence in India's music industry has led to the creation of new platforms and tools that are changing the ways of music construction, music learning, and music listening. Below are noteworthy case studies that reveal the optimal use of AI in Indian music:

1. Trilok – AI-Generated Rock Band-

Trilok is a pioneering virtual rock band created entirely by artificial intelligence. The project includes Vedic chanting, computer-synthesized vocals, and machine-synthesized rhythms, and therefore no human artists are involved. It is an exemplary display of the capability of AI to create entertaining musical experiences and revolutionize live performances in virtual settings.

2. Velvet Sundown – AI Music Performance Act-

Velvet Sundown represents a band entirely produced by artificial intelligence, which has successfully captivated a broad audience on various platforms, including Spotify. This initiative employs AI technologies, including Suno, Udio, and text-to-speech generators, to create songs that resonate emotionally, devoid of any human vocal contributions.

3. NaadSadhana – Artificial Intelligence for Classical Vocal Practice-

NaadSadhana is an iOS app that runs on

artificial intelligence to assist Hindustani classical music students. It provides real-time audio feedback instantly on tone, rhythm, and pitch, allowing for improved riyaz with better and more independent performance.

4. Beatoven.ai – Artificial Intelligence Music for Content Creators-

Beatoven.ai, a Bengaluru company that uses artificial intelligence to generate music, allows users to create royalty-free music for specific moods and genres. Its ease of use allows video editors, game developers, and podcasters to create personalized soundtracks.

5. RagamAI – AI-Aided Concert Organization -

RagamAI is an application intended to aid Carnatic music concert planning. It applies machine learning to examine previous performance layouts and recommends ideal playlists according to music principles and fan tastes. This improves the performance experience while preserving classical concert looks.

6. DAIRHuM – Human-AI Alignment in Rhythm -

DAIRHuM (Data-Driven Alignment of AI and Human Musicality) is a research platform dedicated to enhancing the understanding and creation of rhythm in Indian classical music by AI models. Through the comparison of machine-generated rhythms with humanly perceived musicality, it assists in the creation of more culturally responsive and precise music models.

(See Table on Next Page)

Descriptive Summary of the Studies-

This section describes the research landscape towards the literature on the impact of artificial intelligence on the heritage of Indian music and presents the conservation of traditional musical forms, composition of new pieces, and musical pattern study. It identifies a wide range of AI applications, ranging from neural networks applied to raga composition to machine learning techniques applied to raga identification and transcription. The research includes multi-disciplinary methods that blend musicology,



DAIRHuM – Human-AI Alignment in Rhythm -

Project Name	Focus Area	Description	Key Impact
Trilok	AI-based band performance	Creates original rock music using mantras and machine-generated sound	Redefines virtual performance and music production
Velvet Sundown	Fully AI-generated music band	Produces and streams AI-created music with no human involvement	Demonstrates emotional depth and mass appeal of AI music
NaadSadhana	AI-powered classical music practice	Provides real-time feedback for Hindustani vocalists	Makes traditional training accessible and inclusive
Beatoven.ai	Royalty-free AI music for creators	Generates music based on user-defined mood and genre	Supports digital content creators with culturally relevant tracks
ragamAI	AI-curated Carnatic concert planning	Recommends structured playlists for classical performances	Improves artist-audience engagement while preserving format
DAIRHuM	Rhythm analysis in Carnatic music	Aligns AI rhythm generation with human musical judgment	Enhances model accuracy and cultural sensitivity

Table No. 1: Summary Table for AI Integration in Indian Music- Project Highlights

computer science, and cultural heritage conservation with particular emphasis on the Indian classical and folk music traditions.

Overall Synthesis and Conclusion

Artificial intelligence is increasingly defining India's musical heritage through aid of preservation, composition, and analysis. AI software digitizes performances, transcribes ragas, and records melodic and rhythmic nuances, assisting in preserving traditional music while making it more available by way of interactive learning portals. Generative models compose new music within raga standards, combining innovation with sensitivity to culture, although live improvisation and authenticity continue to be difficult to replicate. Machine learning has

enhanced raga classification and ornamentation analysis, but there remain issues in dealing with microtonal nuance, achieving transparency, and complying with expert intuition. Authenticity, cultural identity, and data ownership ethical issues reinforce the imperative to apply responsible, culturally sensitive AI use. Future advances will rely on more robust datasets, assessment protocols, and inter-disciplinary approaches to preserve tradition and adopt innovation.

References

- Haldar, B. A. A. (2024). From raaga to notation: Bridging emotions and music through neural networks. *International Journal of Science and Research*. <https://doi.org/10.21275/sr24320101738>.
- Ashfaq, R. (2023). Digital innovations in Indian classical music education. *Journal of Humanities, Music and Dance*, 33, 23–31. <https://doi.org/>



- 10.55529/jhmd.33.23.31.
3. Pathariya, M. J., Jalkote, P. B., Patil, A. M., Sutar, A. A., & Ghule, R. L. (2024). Tunes by technology: A comprehensive survey of music generation models. *Proceedings of the International Conference on Robotics and Intelligent Systems*, 506–512. <https://doi.org/10.1109/icc-robins60238.2024.10534029>.
 4. Sawant, P., & Bargavi, S. K. M. (2024). Harmony in synthesis : Exploring human–AI collaboration in music. *International Research Journal of Computer Science*. <https://doi.org/10.26562/irjcs.2024.v1101.11>.
 5. M. R. (2023). Exploring the creative potential of neural networks in music composition. *International Journal of Science and Research*. <https://doi.org/10.21275/sr2380622131>.
 6. Kshirsagar, V. G., Suryawanshi, S., Pawar, A. J., Wagh, Y., Kolhe, N., Pawar, D., Mane, M., Ahire, P., & Patil, R. (2024). Fun Soundify: Music generation powered by AI. *Proceedings of the International Conference on Computing, Communication and Automation*, 1–6. <https://doi.org/10.1109/iccubea61740.2024.10774982>.
 7. Mane, P. (2023). MelodyAI: AI-powered melodies generation. *Indian Scientific Journal of Research in Engineering and Management*, 07(11), 1–11. <https://doi.org/10.55041/ijsrem27182>.
 8. Patil, R., & Bhor, P. A. (2023). Synergy of artificial intelligence and music. *Proceedings of the International Conference on Advanced Science and Technology*, 155–159. <https://doi.org/10.1109/icast59062.2023.10455075>.
 9. Sinha, P. (2008). Artificial composition: An experiment on Indian music. *Journal of New Music Research*, 37(3), 221–232. <https://doi.org/10.1080/09298210802535010>
 10. Sahoo, B., & Sakalkar, R. (2024). Smart contracts, smarter royalties: Tech for India's music industry. *International Journal for Multidimensional Research Perspective*, 2(10), 22–29. <https://doi.org/10.61877/ijmrp.v2i10.205>.
 11. Ojha, A. K. (2022). Unleashing the untapped choir: AI opens doors to new music education markets. *Journal of Humanities, Music and Dance*. <https://doi.org/10.55529/jhmd.22.23.29>.
 12. Odu, A., Adedokun, D., & Steve, M. (2023). Harmonizing minds and machines: Exploring the role of artificial intelligence in enhancing musical performances. *OSF Preprints*. <https://doi.org/10.31219/osf.io/gmsbc>.
 13. Computational approaches for Indian classical music: A comprehensive review. (2022). In *Signals and Communication Technology* (pp. 91–118). Springer. https://doi.org/10.1007/978-3-031-18444-4_5.
 14. Saputra, D. N., Cahyono, A., Utomo, U., Raharjo, E., & Nainggolan, O. T. P. (2024). Integrating tradition and technology : Digital audio workstation-based learning for traditional music preservation. *Resital*, 25(2), 321–337. <https://doi.org/10.24821/resital.v25i2.13913>.



'Dimensions of Globalisation in Higher Education and Quality Assurance in India'



- Nishu Tiwari
Assistant Professor -
Department of B. Ed.
Dayanand Girl's (P.G.) College,
Kanpur-208001 (U.P.)

Email:
nishutiwari52@gmail.com

Introduction :

Learning is considered as wealth that none can destroy, and which can not be attained by chance. It must be sought for with ardor and pursued with diligence. The relation between teacher and the pupils are considered as sacred and teacher has been given a respectable status in the society after mother and father.

Presently, higher education has acquired an international character. As pointed out Power and Bhalla, it is being encouraged in all countries, because of the academic, social, generates goodwill enriches the teacher-learning process, and thereby enhances the quality of education, encourages competitiveness and help generate financial resources. However, if a country like India is to succeed in its efforts towards globalization, the quality of its education has to improve considerably. This would require improvement of infrastructure, changes in curricula, introduction of new academic programmes and administrative changes. These aspects are briefly considered in this paper.

Recent Developments :

The system of higher education is taking a new turn. The youth of India has started preferring technology and employment oriented courses. As a consequence, more and more engineering and other technical institution have started coming up. In order to meet the growing demand for such technical and employment oriented courses, the government started permitting the private institutions to come into education sector, and thus encouraged more private investment in education. As a result, in India during the past one decade, commercialization of higher education started, and self-financed private university started developing.

Globalization of Higher Education :

With privatization of higher education in recent year, it is felt that India can now open up the trade in higher education with other nations. But, there are various inherent social and economic problems which, may come in the way of globalization of higher education in India.

The fees structure for higher education is cost-effective. The major objective of such fee structure in those universities is reliance and self-sufficiency. The universities raise funds in those countries with a missionary zeal. Now, the self-financed institutions are asked to enhance the fee structure, so that these university / institutions become self-reliant and self-sufficient. Then the question comes 'Why can't the government ask all institutes of higher education to develop their own fee-structure and become self-sufficient?'



Reservation Policy :-

In India higher education there is another dimension called reservation policy, to improve the socio-economic status of those section of society who have been socially discriminated over centuries. Foreign Student and Non-resident Indian (NRIs): Now, to partially improve the financial status of the institutions of higher education, the government allowed to provide some seats to foreign students and NRIs by paying enhanced fees (as par with other universities of developed countries). Thus, presently in the classrooms of higher education in India, there is a great heterogeneity. The heterogeneity varies from social (caste) to merit and financial conditions of the student. The heterogeneity lies among the teacher and students.

Need for New Dimensions -

The institutes of higher education in India, till now, have not set any clear goals in higher education, Now, under the fast globalization of higher education under GATS (General Agreement on Trade Services) there is a need to review the present dimensions of higher education to provide directions with clear goals for achievements.

Some of the goals of higher education in India could be : to produce a large number of technocrats, so that no field of activity should suffer from lack of manpower, to assess the need of the country and develop the higher education. For example, in an industrially developed, country, like Japan, 40% of the students go for higher education in engineering. Ironically, in an agrarian country like India with agriculture as its main economy, only 1.6% students after high school education go for higher education in agriculture.

There must be strong positive correlation between higher education and economic development; to create a level of Excellency in student that should be directly reflected in their achievements, so that there is more demand for them in India and abroad, to contribute to rural development, by developing low-cost indigenous technologies for village upliftment through agriculture and other allied industries, and to mobilize resources in the universities towards financial self-sufficiency through consultancy, patenting and other contractual services. In fact, in every university, there should be a commercially-oriented wing, that will handle all such matters to

mobilize resources.

Higher Education & GATS -

The world has witnessed a series of reform programmes in the last decades. In recent years, a rich and varied scholarly literature has documented the implications of various reforms in agriculture sector, environmental and development sector, poverty eradication and sustainable livelihoods, management of financial resources, transfer of technology, changing production and consumption patterns, and many more, within the broad framework of World Trade Organization. Though the role of GATS is not yet fully understood at this junction, it is observed that several universities are approaching developing countries for providing higher education, either through distance education or through on-line. But there is also a fear in developed countries in Europe that GATS may influence the nation authorities and may create a problem of regulating higher education systems.

Thrust Areas for Higher Education in India in view of GATS : With liberalization of higher education trade, every university in all countries is trying to attract overseas students, to pursue their higher education in their respective universities. For attracting overseas students, the course curriculum should be well tailored, not only to suit their needs but also to develop scope at an international arena. In countries like India, with an added advantage of English as a medium of education, there is a tremendous scope for liberalization of higher education, to identify the thrust areas in higher education. Which are needed to support the Indian Government, to enable it to meet the challenges of rapid globalization.

Plea for Academic Restructuring -

It is suggested that India should establish links with other countries for the exchange of programmes, so that curricula can be changed according to the needs of international students. The necessity of adding an international dimension to the course content, at least in the Master's level, can not be over-emphasized. In this context, it may be added that the Commission of International Education (of the American Council of Education) has pointed out that international education needs to give students an expanded horizon, to infuse in them intercultural competence, an understanding of global system and



an ability to focus on problems.

Quality Assurance-

It is suggested that NAAC and NBA should evolve criteria for assessing the suitability of institution, for offering programmes for international students. The first step would be the formulation of Self-Assessment Manuals. It may mention that AIU has already formulated guidelines, for enabling the grant of equivalence to degree offered in India by foreign universities. The main conditions laid down, to monitor quality assurance are, firstly, the Indian institution (partner) should have adequate infrastructure and facilities as substantiated by the report of a Review Committee of the AIU. Secondly, the programme be implemented jointly by the foreign and Indian Universities. (Or academic institutions affiliated to them) with both contributing to the academic programme, in approximately equal measure. Thirdly the foreign university gives an undertaking, in the form of a certificate, that the degree / diploma awarded to the student in India would be considered as equivalent to the corresponding degree/ diploma awarded by the university at home, and that it would be recognized in that country as being equivalent to the corresponding degree/ diploma of the university.

Suggestions-

The purpose of globalization of Indian education is three fold :

- (1) To make it a major source of earning foreign exchange,
- (2) To improve quality of Indian education
- (3) To spread Indian culture and values.

Setting up units abroad will create awareness about Indian education, but it will not help us to earn a substantial amount of Foreign exchange, because a major portion would be spent to run the institution.

Hence, looking at the purpose, of the three options of globalization of Indian education, the most appropriate option would be, to attract the maximum possible number of foreign students. Therefore, we need not limit ourselves to Asian African countries. Globalization of higher education is to be promoted, not only because it yields financial benefits, but also because of the academic, political and social advantage that accrue from the presence of international student on campuses.

Conclusion-

Globalization of higher education is

important, and many Indian universities are taking steps to implement it. For this purpose, it is necessary to undertake quality assurance measures. It is important that only programmes of high quality are offered As Lambert (1996) succinctly states: 'Everything that the school provides should reflect high quality, competence, taste and obvious commitment to service' The manager of Indian higher education institution could keep this in mind. If higher education is to succeed in its purpose of generating enlightened and useful human resources, one should think of what is relevant to education and how to support it with relevant inputs. Indian Educational institutes must prepare to appoint super-specialized faculty, research-oriented curriculum, consultancy services to industry, pooling -up exchange of resources, library, and faculty by various institutes via networking, video/tele-conferencing, and joint academic ventures seminars, workshops, supporting professional bodies for healthy interactions.

References

1. Beeby, C., 1966, The Quality of education in Developing Countries, Harvard University Press, Cambridge, Massachusetts, USA.
2. National Policy on Education, 1986 or 1992, MHRD, Govt. of India.
3. UNESCO, 1994, International Teacher's Day Address.
4. UNESCO, 1996 International Commission on Education for the 21st Century by Jacques Dectors.
5. Kumar Ashish, Private University : Education turns to be a commodity, University News, Sep 8-14 2003, Page- 25.
6. Jain, S.K. and Jain Jain Nidhi, Higher Education and HRM in INDIA, University News, July 21-27, 2003, Page-9.
7. Employment News, March 2012.
8. The Education Review Vol. 47 August 2004 No. 8 Page- 1-4.
9. Vol. 23 3009 Indian Journal Human Relation.
10. Press Councile of India 2011.

Website

www.mhrd.gov.in
 www.wikipedia.org
 www.mygov.in
 www.ncert.nic.in
 www.gse.harvard.edu



Democracy and Democratization



- Prabhat Raut
Head,
Dept. of Political Science
Shrikrishna Mahavidyalaya,
Gunjoti - 413606 , Dist.
Osmanabad (Maharashtra)

E-mail-
prabhatraut11@gmail.com

Abstract

What is democracy? Where and when – and in what guises – have there been democracies? Why has democracy emerged and held its own in some countries but not in others? What are the consequences of democracy? In this book, we present a long-term, comparative perspective on democracy and democratization, including a critical discussion of prominent answers to these questions. Others have reviewed the extant literature on democracy and democratization (e.g., Grugel 2002; Sørensen 2008; Haerpfer et al. 2009).

However, our take is novel in several ways. First, we use a general conceptual distinction between ‘thinner’ and ‘thicker’ definitions of democracy to show that many of the current disagreements – and some seemingly irreconcilable findings – can be bridged. This conceptual edifice enables us to appreciate a pivotal message of this book, namely that the distinction between different kinds of democracy has become very important in recent decades, both theoretically and empirically. Second, our proposed structure is arguably the first to integrate Conceptions, Conjunctures, Causes, and Consequences of democracy into a coherent framework, which students and scholars can use to grasp the literature on democracy and democratization as a whole. Third, we use a historical focus to not only lay bare the development in the conceptions of democracy and the corresponding empirical reality but also to discuss whether causal relationships differ in different periods and to assess the way this has been reflected by the development within the literature. This paper aims to focus on democracy and some important factors of the process of democratization.

Key words- *Democracy, Democratization, Constitution, Mixed Constitution, representative democracy etc.*

Introduction-

This is not as such a chronological take on democratization, but it is surely a logical one. We first need to understand conceptions before we can describe empirical trends, and only then does it make sense to discuss the causes of these trends, which, finally, paves the way for a discussion of the consequences of those very developments. This is a neat way of covering both democratic theory (‘the what?’), the empirical dynamics of democratization (‘the when and where?’),



explanations of this development ('the how and why?'), and the consequences of democracy ('the so what?'). The book is structured in strict accordance with this series of issues. The first part discusses the competing definitions of democracy in the literature and presents our own position. The second part analyzes the development of democracy across time and space based on these conceptual distinctions. In the third part, we provide a critical overview of attempts to explain democratic development in the past as well as in the present. In the final part, we assess the potential consequences of democracy.

Before delving into these issues, however, a more comprehensive introduction to the theme of democracy and democratization is called for. First and foremost, we need to explain why the issues of democracy and democratization are attracting so much attention today – and, by implication, why it is worthwhile reading a book such as this. This can be broken down into two sub-questions. First, why is democracy a term of universal praise? Second, why does the study of democratization figure so prominently within political science?

Democracy : from Pejorative to Honorific Concept-

'Democracy' comes from the Greek *demokratia*. It is a synthesis of *demos*, meaning people, and *kratos*, meaning rule, and it thus signifies 'rule by the people'. Over its considerable life span, the term (and the concept) has been the object of continuous disagreement and conflict. In a book outlining the history of democracy, John Dunn (2005) retells its stormy history. It is widely held that democracy was conceived in ancient Greece – more precisely in the 6th century BC (Hansen 2010b: 14–17) – where it thrived for more than four centuries before falling to the sword of Rome in 146 BC. Indeed, the proportion of democracies among the Greek *poleis* grew during this period. In the first half of the 4th century BC, about two-fifths of all city-states were democracies but in the early Hellenistic Period – before the Roman conquest in 146 BC – the majority of the Greek *poleis* were democratically

governed. From then on, however, oligarchy made a comeback, and in the late imperial period democracy had all but disappeared (Hansen 2010b : 16–17).

At the same time, the very word 'democracy' fell into disfavour. A major reason for this was that all the influential philosophical tracts, which survived from ancient Greece, were written by critics of democracy. Most vehement was Plato, who considered it to be the penultimate form of misrule, only just better than tyranny. But according to Dunn (2005), much of the blame must be attributed to the less hostile treatment of Aristotle. In his political writings, Aristotle referred to a well-functioning and stable democracy as *politeia*, while reserving *demokratia* for its pathological twin; what the Greek historian Polybius would later refer to as 'mob rule' (*ochlokratia*). Crucially, Aristotle sometimes construed *politeia* as an approximation of a mixed constitution, i.e., a blend between democracy and oligarchy (Hansen 2010a: 519–520).¹ This distinction was not quickly forgotten. Democracy retained some honorific meaning as a part of the so-called mixed constitution but only when tempered by monarchical and aristocratic institutions, and not on its own.

For almost 2000 years, democracy was not only extinct as a regime form, it was also – in its pure form – perceived as a regime that only had misery to offer. Democracy was used pejoratively throughout the middle Ages. Thomas Aquinas, for one, described it as an unjust form of government (*iniquum regimen*) (Naess et al. 1956: 92).² Nor do we, with a few New Englanders as the sole possible exception, find self-professed democrats during the period from the Renaissance to the French Revolution (Naess et al. 1956: 95). Hobbes, for instance, subscribed to Aristotle's view of democracy as the tyranny of the poor, a position we also meet much later with Edmund Burke (Naess et al. 1956: 99–113).

Aristotle's Distinction between Unjust Democracy and the Preferable Mixed Constitution-

Aristotle's distinction between unjust



democracy and the preferable mixed constitution thus held all the way until the reintroduction of democracy in the 19th and 20th centuries. A large part of the reason was that democracy was constantly equated with direct democracy, rather than with representative democracy. As documented by Mogens Herman Hansen (2010b : 13), both Diderot's *Encyclopaedia* (1754) and the contemporary *Encyclopaedia*

Britannica (1771) did so, and therefore construed democracy as a purely historical phenomenon associated with Antiquity.

Dunn (2005) traces democracy's return to the two major 'Promethean revolts' of the 18th century: the American (1776) and French (1789) revolutions. The American revolutionaries, however, did not describe themselves as democrats. James Madison, for one, did everything in his power to shore up against what he perceived to be the chaotic forces of democracy. In the *Federalist Papers*, he distinguished between a democracy (as in Athens) and a republic (as in America). While the former was subject to the whims of the masses, the latter was guided by elected representatives who were held accountable by an effective separation of powers.

However, in this respect Paine's was a lonely voice in the American debate. The course of events on the other side of the Atlantic played out differently. During the most rabid phase of the French Revolution, Maximilien Robespierre's so-called reign of terror, democracy returned as a rallying cry, at least for one particular group of actors. The revolutionary Jacobins in France were drawn to the word precisely due to its tantalizing message implying equal access to the exercise of power – that is, the very notion that Madison and his peers had warned against. Robespierre's grand project was scuttled by its own excesses, but the term democracy and the ideal of equality that was associated with it were to be denied no longer.

This was also the case with Madison's corrective, however. And the democratic ideal of equality and the republican notion of freedom were forged together over time, which serves to

emphasize how popular sovereignty has been combined with barriers establishing limits on the power of the people (Manin 1997; Dunn 2005).

However, the consensus in recent decades regarding the virtues of democracy does not mean that there is – or ever has been – common ground when it comes to defining democracy. Most telling is the fact that many of the decidedly non-democratic states of the 20th century were – by the governing elites – referred to as democracies. This is the case with the Eastern European 'people's democracies' during the communist period and with a number of military regimes, such as Nasser's 'presidential democracy' in Egypt, Sukarno's 'guided democracy' in Indonesia, Franco's 'organic democracy' in Spain, and Trujillo's 'neo-democracy' in the Dominican Republic (Finer 1962: 242). In all of these cases, the dictator or party has claimed to serve as the guarantor for putting the actual interest of the people into practice. The corresponding assertion has been that the regime was therefore more democratic than the states in which the members of an ignorant population made a more or less informed decision at the ballot-box.

The Democratization Literature-

The disagreements concerning the definitions have not prevented politicians, political scientists, historians, philosophers, and others from attempting – as long as democracy has existed – to take a step backwards and reveal its source. In other words, there is a veritable cornucopia of explanations as to what promotes democratization; that is, movements in the direction of (more) democracy. One of the first offerings was handed down by the aforementioned Aristotle. According to Aristotle (2008 [350 BC]) : 170 [1296a]), there are two possible explanations as to why autocratic rule in a city-state, a polis, collapses and democracy emerges in its place. First, the masses can revolt on the grounds that they have been treated unjustly. Second, internal conflicts can arise between the governing oligarchies, after which one faction allies itself with the masses.



Aristotle's explanation may appear somewhat superficial; a popular takeover is, after all, pretty much the definition of a transition to democracy. But for the first 2000 years after the birth of democracy in ancient Greece, it was more or less always such rather obvious explanations being pursued in the field. A telling example may be found as late as in the Renaissance, where Niccolò Machiavelli (1970 [1517] : 160, 247 [I.17, i.55]) postulated that a democracy – what he referred to as a republic – emerges when the citizens are equal and virtuous, while an aristocracy or monarchy results when the citizens are unequal and corrupted.

This shallowness is probably due to a feature of both Antique and Renaissance political thinking, which Bertrand Russell (2004 [1946]: 471) has observed with specific reference to Machiavelli, namely the preoccupation with concrete lawgivers or great founders and the concomitant absence of an understanding of other (less actor-centered) causal drivers of political change. On this basis, Russell (2004 [1946] : 471) notes that:

Looking for 'deeper' explanations accounting for democratization, we must therefore fast-forward to the first half of the 19th century. In his portrayal of the American democracy of his day, *Democracy in America* (*De la démocratie en Amérique*), Tocqueville (1998 [1835/1840]) attributes its vitality to finely branched voluntary organizations; what we today would call a strong civil society. According to this perspective, democracy is interlinked with the capacity of the citizenry to keep the state authority on a short leash.

Another example is found half a century later. In the first pages of *The Protestant Ethic and the Spirit of Capitalism* (*Die protestantische Ethik unter 'Geist' des Kapitalismus*), Max Weber (2005 [1904/1905]) formulated the thesis that the democratic development in Great Britain should be traced back to the Protestant Reformation. Here, it is the individualism produced by Protestantism which accounts for the emergence of democracy.

Finally, proceeding another 50 years forward in history, Seymour Martin Lipset (1959) wrote an article entitled 'Some Social Requisites of Democracy: Economic Development and Political Legitimacy' in which he pointed to a general connection between affluence and democracy. Lipset's admirably simple observation was that affluent countries are typically democratic, whereas this is rarely the case with impoverished countries.

Beginning with Lipset, the modern democratization literature has gradually established itself as a distinct discipline within political science. But though Lipset and a few other great names from the field, including Robert A. Dahl and Barrington Moore, provided a number of important contributions in the decades to follow, the democratization literature first gathered sustained momentum in the mid-1980s. The turning point was the publication of the four-volume work entitled *Transitions from Authoritarian Rule* in 1986. The fourth volume, which is a brief concluding essay, was written by Guillermo O'Donnell and Philippe Schmitter (1986). They took odds with the previous focus in the literature on structural conditions. Instead, they directed their attention to the societal elites and emphasized how the introduction of democracy is primarily the result of the contingent choices made by the significant actors and that democratization can therefore appear in the most unexpected places.

The Third Wave of Democratization-

The increased attention has certainly been fed by the veritable explosion in recent decades in the number of democratic countries. Samuel P. Huntington (1991) introduced his renowned book about democratization, *The Third Wave: Democratization in the Late Twentieth Century*, with a thrilling description of the Portuguese 'Carnation Revolution' in 1974. Huntington's point was that the bloodless revolution was the first indication of what he refers to as the 'third wave of democratization'. In the years to come, this wave flooded Southern Europe, where first Greece (later



the same year) and subsequently Spain (1978) turned their backs on their autocratic regimes. But that was not all. The tide continued, soon reaching Latin America and Southeast Asia before finally arriving in Sub-Saharan Africa and the former communist countries, where the fall of the Berlin Wall (1989) and disintegration of the Soviet Union (1991) symbolized the crumbling of some major barriers.

We analyze this third wave and the two previous waves in Chapters 5 and 6, while the historical roots of representative democracy are dealt with in Chapter 4. But a couple of figures quickly establish that the development has led to an unprecedented high water mark of democracy. According to our calculations, 26 percent of the world's countries were what we in this book term 'minimalist democracies' (see Chapter 3) in 1972. Twenty years later, this percentage had increased to roughly 53, and at the time of writing it is close to 60. Other counts indicate the same tendency, even though the absolute numbers vary. In short, and regardless of the measures used, the world has never been as democratic as in recent decades.

Conclusions-

First, the monopoly of democracy on legitimacy is one of the factors contributing to the third wave of democratization. More specifically, this is part of the reason why so many countries continue to carry out democratic elections, even though they are unable to maintain the rule of law ideal characteristic of Western democracies. In addition, as already pointed out, these illiberal combinations of democratic characteristics motivate many of the current studies addressing the subject. Second, researchers are humans too, and they are therefore influenced by Introduction 9 their political convictions. Just think of the great interest in Marxism that followed in the wake of the 'youth rebellions' of the 1960s and thrived in university milieus in the Western world in the 1970s and 1980s. Today, democratic theory and the study of democratization processes are among the big draws.

References

(1) Ake, Claude. *Democracy and Development in Africa*.

- Washington, D.C.: Brookings Institution, 1996.
- (2) Ake, Claude. *Democracy and Development in Africa*. Washington, D.C.: Brookings Institution, 1996.
- (3) Bastion, Sunil, and Robin Luckham. *Can Democracy Be Designed? The Politics of International Choice in Conflict-Torn Societies*. London : Zed, 2003. Beetham, David. *Democracy and Human Rights*. Cambridge : Polity, 1999.
- (4) Bull, Hedley, and Adam Watson, eds. *The Expansion of International Society*. Oxford : Clarendon, 1988.
- (5) Carothers, Thomas. *Aiding Democracy Abroad*. Washington, D.C.: Carnegie Endowment for International Peace, 1999.
- (6) Chernoff, Fred. "The Study of Democratic Peace and Progress in International Relations." *International Studies Review* 6, no. 1 (2004): 49–79.
- (7) Dahl, Robert A. *Democracy and Its Critics*. New Haven: Yale University Press, 1989. _____. *Polyarchy : Participation and Opposition*. New Haven : Yale University Press, 1971.
- (8) Diamond, Larry. *Developing Democracy : Toward Consolidation*. Baltimore : Johns Hopkins University Press, 1999.
- (9) Diamond, Larry, Juan J. Linz, and Seymour Martin Lipset, eds. *Democracy in Developing Countries*. Vol.- 1, Persistence, Failure, and Renewal. Vol.- 2, Africa. Vol.- 3, Asia. Vol. 4, Latin America. Boulder : Lynne Rienner, 1988, 1989.
- (10) Diamond, Larry, and M. F. Plattner, eds. *The Global Resurgence of Democracy*. Baltimore: Johns Hopkins University Press, 1993.
- (11) Donnelly, Jack. *International Human Rights*. 3rd ed., Boulder : Westview 2002.
- (12) Doyle, Michael W. "Kant, Liberal Legacies, and Foreign Affairs." *Philosophy and Public Affairs* 12, no. 3 (1983): 205–235.
- (13) _____. "Liberalism and World Politics." *American Political Science Review* 80, No. 4 (1986) : 1151–1169.
- (14) _____. "Three Pillars of the Liberal Peace." *American Political Science Review* 99, No.- 3 (2005) : 463–466.
- (15) Elklit, Jorgen, and Andrew Reynolds. "A Framework for the Systematic Study of Election Quality." *Democratization* 12, no. 2 (2005): 147–162.
- (16) Fukuyama, Francis. "The End of History?" *The National Interest* 16 (1989): 3–18.
- (17) Gills, Barry, et al., eds. "The Developmental State? Democracy, Reform, and Economic Prosperity in the Third World in the Nineties." *Third World Quarterly* 17, No.-4 (1996) : 585–855.
- (18) Haggard, Stephan, and Robert R. Kaufman. *The Political Economy of Democratic Transitions*. Princeton : Princeton University Press, 1995.





Received: 24 Jan., 2025; Accepted: 28 Feb. 2025, Published: January-March, 2025 Issue

मेरिया मान्टेसरी का शैक्षिक चिन्तन



— डॉ. रवेन्द्र राजपूत
एसोसिएट प्रोफेसर —
शिक्षक—शिक्षा विभाग,
श्री वाष्णीय महाविद्यालय, अलीगढ़—
(उत्तर प्रदेश)

ई—मेल:
ravendrarajput@hotmail.com

सारांश

मान्टेसरी विद्यालय में 3-7 वर्ष तक के बालक शिक्षा ग्रहण करते हैं। इनमें बालकों को खेल द्वारा शिक्षा दी जाती है। खेल के लिए मैदान होता है। बैठने के लिए छोटी-छोटी कुर्सियाँ व मेजें होती हैं। मैदान में कुछ कम्बल बिछा दिये जाते हैं जिन पर बैठकर बालक खेलते हैं। चाय पीने के लिए छोटे-छोटे कप व प्लेटें होती हैं, टी पॉट से चाय परोसते समय बालक सावधानी बरतते हैं कि चाय गिरे नहीं। विद्यालय के बड़े कमरों में पढ़ाई व छोटे कमरों में खाना बनाना व व्यायाम आदि होते हैं। सन्दूकों में शैक्षिक उपकरण होते हैं। श्यामपट पर छात्र चित्र भी बनाते हैं। पूर्व-प्राथमिक स्तर पर बच्चों की शिक्षा की एक स्पष्ट एवं वैज्ञानिक पद्धति प्रदान करके डॉ. मेरिया मान्टेसरी ने शिक्षा संसार पर बड़ा उपकार किया है। भारत में आकर उन्होंने स्वयं कुछ भारतीय शिक्षकों को अपनी विधि में दीक्षित किया। इसीलिए आज भारत में पूर्व प्राथमिक स्तर पर किण्डरगार्टन से अधिक मान्टेसरी विद्यालय हैं।

मान्टेसरी पद्धति की जन्मदात्री मैडम मेरिया मान्टेसरी ने शिशुओं की शिक्षा के उत्थान के लिए अत्यधिक सराहनीय कार्य किया। उन्हीं के प्रयासों के परिणामस्वरूप आज माँटेसरी पद्धति विश्व के अनेक देशों में लोकप्रिय बनी हुई है। शिशुओं के सम्पूर्ण व्यक्तिगत को निखारने में ये पद्धति अपने आप में परिपूर्ण है।

जीवन की झलक (Glimpse of Life)-

डॉ. मेरिया मान्टेसरी का जन्म इटली में 1870 ई. में हुआ था। इनके माता-पिता बुद्धिमान तथा सम्पत्तिशाली थे। मान्टेसरी की शिक्षा-दीक्षा विधिवत् हुई। 24 वर्ष की अवस्था में 1894 में आपने रोम के विश्वविद्यालय से M.D. उपाधि प्राप्त की। डाक्टरी की परीक्षा पास करने के बाद उन्हें इसी विश्वविद्यालय में पिछड़े व मन्दबुद्धि बालकों की शिक्षा का भार सौंपा गया। इस उत्तर दायित्व को इन्होंने सफलतापूर्वक निभाया और पिछड़े बालकों की शिक्षा के सम्बन्ध में अनेक अन्वेषण किये। पिछड़े व मन्द बुद्धि के बालकों के साथ काम करते-करते इन्होंने पाया कि शिक्षा में उनके पिछड़ने का कारण हीनता है, इसका कारण उन्हें तत्कालीन दूषित शिक्षा पद्धति प्रतीत हुई। अतः उन्होंने लीक से हटकर पिछड़े हुए बालकों की शिक्षा के लिए विशिष्ट पद्धति को जन्म दिया जिसे “माँटेसरी पद्धति” कहते हैं। यह विधि 3-7 वर्ष के शिशुओं के लिए बहुत उपयोगी सिद्ध हुई। जीवन पर्यन्त वे अपनी पद्धति को अधिकाधिक वैज्ञानिक बनाने में संलग्न रहीं। मान्टेसरी पद्धति धीरे-धीरे लोकप्रिय होती गई और यूरोप के अनेक देशों ने इसे अपना लिया।



1939 में वे भारत आई और अपनी पद्धति का प्रचार-प्रसार किया। मद्रास में मान्टेसरी संघ की स्थापना की तथा अहमदाबाद में 1000 व्यक्तियों को मान्टेसरी पद्धति में प्रशिक्षित किया तभी से मान्टेसरी पद्धति का भारत में प्रसार होता गया। 1952 में वे परलोक वासी हो गईं।

मान्टेसरी के शिक्षा सिद्धान्त—

मान्टेसरी अपनी शिक्षा-पद्धति में मनोवैज्ञानिक आधार को महत्व दिया है जिसे हम इन बिन्दुओं द्वारा स्पष्ट कर सकते हैं—

1. स्वतन्त्रता — रूसो की भाँति मान्टेसरी भी बालकों की पूर्ण स्वतन्त्रता के पक्ष में है। मान्टेसरी के अनुसार— स्वतन्त्र वातावरण में शिक्षा देने से बालक में स्वावलम्बन, आत्मसम्मान, आत्मविश्वास आदि गुणों का विकास किया जा सकता है।

2. वैयक्तिकता का विकास — मान्टेसरी ने शिक्षा विकास की प्रक्रिया मानी है और शिक्षा का उद्देश्य बालक की “वैयक्तिकता का विकास”। उन्होंने बालक के प्राकृतिक विकास पर बल दिया। उनके अनुसार बालक जो कुछ बनेगा वह उसमें जन्म के समय ही बीज रूप में निहित है। अतः शिक्षक का कार्य जन्म के समय उपस्थित शक्तियों के विकास का वातावरण प्रदान करना है।

3. आत्म-शिक्षा— मान्टेसरी कहती हैं— “सच्ची शिक्षा वह है जिसमें बालक अपनी आवश्यकतानुसार स्वयं सीखता है। अपने आप ज्ञान की खोज करने से ज्ञान का सच्चा रूप सामने आता है। आत्म शिक्षा के मान्टेसरी ने कुछ शैक्षिक यन्त्रों का निर्माण किया जिनसे बालक रुचि के साथ खेल खेलता है और आनन्दमय हो जाता है।

4. ज्ञानेन्द्रिय प्रशिक्षण द्वारा शिक्षा — मान्टेसरी के मत में ज्ञानेन्द्रिय की शिक्षा का अत्यधिक महत्व है। ज्ञान वस्तुतः ज्ञानेन्द्रियों पर ही आधारित होता है यदि ज्ञानेन्द्रियाँ निर्बल हुईं तो उस इन्द्रिय से प्राप्त ज्ञान भी दोषयुक्त होगा। उनके अनुसार 3-7 वर्ष की अवस्था के बीच ये ज्ञानेन्द्रियाँ विशेष रूप से क्रियाशील रहती हैं, यदि इस समय ज्ञानेन्द्रियों के विकास पर बल न दिया गया तो साधारण वृद्धि बालक भी मन्द बुद्धि बालक बन जायेगा।

5. कर्मेन्द्रियों की शिक्षा — ज्ञानेन्द्रियों की भाँति कर्मेन्द्रियों की शिक्षा भी मानव-जीवन के लिए आवश्यक है। शरीर के अंग सबल बने इसके लिए अंगों के सही संचालन की शिक्षा दी जाय। यदि बालक माँसपेशियों पर नियन्त्रण प्राप्त कर लेता है तो उसमें आत्मनिर्भरता आ

जाती है।

6. खेल द्वारा शिक्षा — बालक की सबसे प्रिय वस्तु खेल हैं अतः उसे शुरू में खेल द्वारा शिक्षा देना ठीक रहता है। बालक शैक्षिक यन्त्रों से खेल-खेल में वर्णमाला, गणित आदि विषय सीख जाता है, जिससे उसकी ज्ञानेन्द्रियों भी विकसित होती जाती हैं।

7. व्यक्तिगत आधार द्वारा शिक्षा — मान्टेसरी व्यक्ति की वैयक्तिकता को शिक्षा का उद्देश्य बताती है। वह शिक्षा, व्यक्तिगत आधार द्वारा देना चाहती हैं। बालक को उसके स्वभाव के अनुसार शिक्षा देनी चाहिए।

8. तार्किक अनुशासन का सिद्धान्त — यदि बालक को स्वतन्त्रता दी जाय और उन्हें आत्म-शिक्षा के लिए प्रेरित किया जाय तो छात्रों में अनुशासनहीनता का प्रश्न ही नहीं उठेगा। अनुशासन बाहर से नहीं लाया जा सकता है। वह तो अन्तः प्रेरणा की वस्तु है। छात्रों में उत्तरदायित्व की भावना भर दें जिससे वे अनुशासन के प्रति सजग हो जायें। ऐसा अनुशासन तर्क पर आधारित होने के कारण अच्छा रहेगा।

9. उपयुक्त वातावरण — बच्चों के उत्कृष्ट विकास के लिए शिक्षाप्रद वातावरण बहुत आवश्यक है। डॉ. मेरिया मॉन्टेसरी ने “बाल गृहों” को वास्तविक विद्यालय बताया है क्योंकि वहाँ पर बालक रचनात्मक कार्यों में जुट रहते हैं और रचनात्मक कार्यों में भाग लेते हुए वे बहुत सी बातें सीख जाते हैं। मान्टेसरी विद्यालयों में उपयुक्त वातावरण के निर्माण में बहुत बला दिया जाता है।

मान्टेसरी शिक्षण विधि —

मान्टेसरी शिक्षा पद्धति को 3 भागों में बाँटा जा सकता है—

1. कर्मेन्द्रियों की शिक्षा।
2. ज्ञानेन्द्रियों की शिक्षा।
3. भाषा की शिक्षा।

1. कर्मेन्द्रियों की शिक्षा — बालगृह में 3-7 वर्ष के बालकों की कर्मेन्द्रियों को प्रशिक्षित कर अपना कार्य स्वयं करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। बालगृह के उत्तम वातावरण से बालक चलना, फिरना, उठना, बैठना, हाथ मुँह धोना, कपड़े पहनना, उतारना, भोजन बनाना, भोजन परोसना, बर्तन माँजना आदि कार्य स्वयं करने लगते हैं। बालक इन कार्यों में आनन्द लेता है और सभ्य बनता चला जाता है और बातचीत करना भी सीख जाता है। इस प्रकार उसकी कर्मेन्द्रियों का विकास होता जाता है।



2. ज्ञानेन्द्रियों की शिक्षा — ज्ञानेन्द्रियों की शिक्षा के लिए शैक्षिक उपकरणों का सहारा लिया जाता है। बालक की चक्षु-इन्द्रिय के प्रशिक्षण के लिए विभिन्न रंगों की टिकिया, श्रवण इन्द्रियों के लिए घंटिया बजाना, स्पर्शेन्द्रिय के विकास के लिए चिकने, खुरदरे, मखमली, ऊनी, रूमाल, घ्राणेन्द्रिय के लिए गन्धयुक्त द्रव की बोतलें, स्वादेन्द्रिय के लिए नमक, चीनी, चाय की शीशियाँ दी जाती है। मान्टेसरी शिक्षा पद्धति में प्रयुक्त अन्य शैक्षिक उपकरण ये हैं—

(i) छेदों वाला तख्ता — एक बक्स में भीतर के तख्ते पर भिन्न-भिन्न माप के छेद बने होते हैं, बॉक्स में भिन्न-भिन्न नाप के गुटके भी होते हैं। बालक इन गुटकों को छेदों में बैठाने की कोशिश करता है।

(ii) वेलनाकार— छोटे बड़े कई बेलनों को बालक क्रम में लगाते हैं।

(iii) घन — छोटे-बड़े घनों से बालक खेलता है तथा इन्हें सजाता है।

(iv) आयताकार टुकड़े — बालक इनसे सीढ़ी बनाता है।

(v) विभिन्न रंगों की टिकियाँ — बालक इनसे रंगों की पहिचान करता है।

(vi) लकड़ी के अक्षर — इन पर हाथ रखकर फेरकर लिखना सीखता है।

(vii) लकड़ियाँ तथा टिकियाँ — चिकनी, खुरदरी, भारी, हल्की लकड़ियाँ व टिकियाँ इनसे बालक स्पर्शेन्द्रिय का विकास करता है।

मान्टेसरी एक समय में एक ही ज्ञानेन्द्रिय के विकास पर ध्यान केन्द्रित करने को अच्छा बताती हैं।

3. भाषा की शिक्षा — मान्टेसरी कहती हैं बालक को पहले सीखना चाहिए उसके बाद पढ़ना। लिखते-लिखते बालक पढ़ना तो अपने आप सीख जाता है। लिखना सिखाने से पहले बालक की माँसपेशियों का साधना आवश्यक है। शैक्षिक उपकरणों की सहायता के पहले बालक हाथ और आँख में समन्वय करना और अंगों का उचित संचालन करना सीखता है फिर वह कलम या पेन्सिल पकड़ना सीख जाता है। लिखना सीखने के लिए बालक लकड़ी अथवा गत्ते पर बने हुए अक्षरों पर उँगली फेरता है। उँगली फेरने के समय शिक्षिका अक्षर का उच्चारण करती रहती हैं। और बालक उस अक्षर का उच्चारण करना भी सीख जाता है।

मान्टेसरी विद्यालय—

मान्टेसरी विद्यालय में 3-7 वर्ष तक के बालक शिक्षा ग्रहण करते हैं। इनमें बालकों को खेल द्वारा शिक्षा दी जाती है। खेल के लिए मैदान होता है। बैठने के लिए छोटी-छोटी कुर्सियाँ व मेजें होती है। मैदान में कुछ कम्बल बिछा दिये जाते हैं जिन पर बैठकर बालक खेलते हैं। चाय पीने के लिए छोटे-छोटे कप व प्लेटें होती है, टी पॉट से चाय परोसते समय बालक सावधानी बरतते हैं कि चाय गिरे नहीं। विद्यालय के बड़े कमरों में पढ़ाई व छोटे कमरों में खाना बनाना व व्यायाम आदि होते हैं। सन्दूकों में शैक्षिक उपकरण होते हैं। श्यामपट पर छात्र चित्र भी बनाते हैं। इन विद्यालयों की अन्य विशेषतायें इस प्रकार हैं—

1. शिक्षक एक योग्य निर्देशक होता है।
2. बालक को किसी समय किसी आवश्यकता की चेतना तीव्र रूप में होती है, ऐसे क्षण को मान्टेसरी ने "मनोवैज्ञानिक क्षण" कहा है। इस क्षण का उपयोग करना बहुत आवश्यक है। मान्टेसरी विद्यालय में इसी मनोवैज्ञानिक क्षण का उपयोग किया जाता है।
3. मान्टेसरी विद्यालय में बालक को पूर्ण स्वतन्त्रता रहती है।
4. बुद्धि से अधिक इन्द्रियों पर ध्यान दिया जाता है।
5. बच्चों को व्यक्तिगत रूप से प्रशिक्षित किया जाता है।
6. स्पर्श की संवेदना मौलिक संवेदना है, अतः इसका सर्वाधिक ध्यान रखा जाता है।
7. कोई कठोर समय सारिणी नहीं होती।
8. कोई पुरस्कार नहीं दिया जाता, विकास ही पुरस्कार है।
9. शैक्षिक उपकरणों के सहारे शिक्षा दी जाती है।
10. रूसो व स्पेन्सर की आत्म शिक्षा पर अनुगमन होता है।

मान्टेसरी पद्धति का मूल्यांकन —

गुण —

1. मान्टेसरी पद्धति वैज्ञानिक है यह अनुभव व निरीक्षण पर बल देती है।
2. उपकरणों द्वारा शिक्षा देने का उनका विचार सराहनीय है।
3. छोटी उम्र के बच्चों के लिए यह विधि बड़ी उपयुक्त है क्योंकि बच्चों को वस्तुओं के प्रयोग में आनन्द



मिलता है।

4. मैडम मान्टेसरी व्यक्ति की महानता में विश्वास करती थीं और उनकी पद्धति में व्यक्तित्व के पूर्ण विकास पर ध्यान दिया जाता है।

5. वे ज्ञानेन्द्रियों की शिक्षा पर अधिक बल देती हैं, निस्संदेह ज्ञानेन्द्रियों से मस्तिष्क का विकास होता है।

6. उनका अनुशासन का विचार भी श्रेष्ठ है। उनके अनुसार अनुशासन बाहर से नहीं लादा जाता वरन् अन्दर से विकसित किया जाता है।

7. मान्टेसरी आत्म शिक्षा पर बल देती हैं क्योंकि बालक सीखी हुई बातों में रुचि लेता है।

8. लिखने की शिक्षा देने का उनका ढंग बालकों के विकास के अनुकूल है।

9. बालकों को खेल बड़ा प्रिय होता है। मान्टेसरी पद्धति में खेल द्वारा शिक्षा दी जाती है।

दोष –

विभिन्न शिक्षा शास्त्रियों ने मान्टेसरी पद्धति की आलोचना कर उसमें दोष बताये हैं— उनमें से कुछ के विचार निम्नवत हैं—

1. **किलपैट्रिक के अनुसार—** “इस पद्धति में बालक के व्यक्तित्व के विकास पर बल दिया जाता है परन्तु उसके सामाजिक विकास पर उचित ध्यान नहीं दिया जाता अतः बालक का एकांगी विकास होगा।”

2. **स्टर्न कहते हैं—** “शैक्षिक उपकरणों से बुद्धि का एकांगी विकास होता है। रंग, रूप, ध्वनि पर अलग-अलग बल देने से मस्तिष्क के स्वाभाविक विकास में बाधा पड़ती है।”

3. **स्प्रेगर का कहना है—** “मान्टेसरी पद्धति में काल्पनिक खेलों की उपेक्षा की गई है। बालकों की असंतुष्ट मूल प्रवृत्तियों का रेचन इन्हीं काल्पनिक खेलों से होता है। इस रेचन के अभाव में भावना ग्रन्थियों के बनने का भय होता है।”

4. **हेसन के अनुसार—** “मान्टेसरी पद्धति में खेल के वास्तविक सिद्धान्त का अभाव है। खेल, खेल के लिए हो तभी वह खेल होगा अन्यथा कार्य हो जायेगा।”

5. मान्टेसरी पहले लिखना सिखाना चाहती हैं यह प्रश्न विवादास्पद है।

6. जिस विधि से लिखना सिखाने के कार्य की योजना मान्टेसरी पद्धति में होती है यह वैज्ञानिक होते हुए भी मनोवैज्ञानिक नहीं कही जा सकती है। वर्ण व अक्षरों से

न चलकर वाक्य से चलना गेस्टाल्ट मनोविज्ञान के अधिक उपयुक्त है।

7. इस पद्धति में केवल एक ही ज्ञानेन्द्रिय की एक बार शिक्षा दी जाती है। ज्ञानेन्द्रियों की पृथक शिक्षा “शक्ति-मनोविज्ञान” पर आधारित समझ पड़ती है। किन्तु शक्ति-सिद्धान्त का मनोविज्ञान में अब परित्याग हो चुका है।

8. कहने को तो इस पद्धति में पूर्ण स्वतन्त्रता है किन्तु एक समय में एक उपकरण को देकर बालक की स्वतन्त्रता को हम सीमित देते हैं।

9. इस पद्धति द्वारा बालक में सामाजिक गुणों का विकास नहीं हो पाता है।

10. इस पद्धति में समय बहुत नष्ट होता है।

11. यह पद्धति अधिक खर्चीली है अतः गरीब समाज में कठिनता से लागू हो पाती है।

12. इसमें बालकों से कुछ ऐसे कार्य कराये जाते हैं जो उसकी अवस्था के अनुकूल नहीं कह जा सकते।

निष्कर्ष –

उपरोक्त दोषों के होते हुए भी मान्टेसरी की देनों को शिक्षा जगत भुला नहीं सकता है। पूर्व-प्राथमिक स्तर पर बच्चों की शिक्षा की एक स्पष्ट एवं वैज्ञानिक पद्धति प्रदान करके डॉ. मेरिया मान्टेसरी ने शिक्षा संसार पर बड़ा उपकार किया है। भारत में आकर उन्होंने स्वयं कुछ भारतीय शिक्षकों को अपनी विधि में दीक्षित किया। इसीलिए आज भारत में पूर्व प्राथमिक स्तर पर किण्डरगार्टन से अधिक मान्टेसरी विद्यालय हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक – टण्डन, उमा एवं गुप्ता, अरुणा।
2. शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय सिद्धान्त – लाल, रमन बिहारी।
3. शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय आधार – शर्मा एवं शर्मा।
4. शिक्षा के दार्शनिक सिद्धान्त – पचौरी, आशुतोष।
5. शिक्षा के दार्शनिक एवं सामाजिक आधार – त्यागी, जी. एस. डी.।



भारत की विदेश नीति का अध्ययन

सारांश



— लाल बाबू तिवारी
रिसर्च स्कालर —
रक्षा अध्ययन विभाग,
लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ —
226007 (उ.प्र.)

ई-मेल:
lalbabulkw20@gmail.com

शोध निर्देशक —
— प्रो. ओ. पी. शुक्ला
विभागाध्यक्ष —
रक्षा अध्ययन विभाग,
लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ —
226007 (उ.प्र.)

ई-मेल:
opshuklodefence@gmail.com

भारत की विदेश नीति एक जटिल और बहुआयामी विषय है, जो देश के इतिहास, भूगोल, अर्थव्यवस्था और सुरक्षा हितों से गहराई से जुड़ा हुआ है। भारत ने शीत युद्ध के दौरान किसी भी महाशक्ति गुट में शामिल न होने की नीति अपनाई, जिससे उसे अपनी स्वतंत्रता और हितों की रक्षा करने में मदद मिली। शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व के पाँच सिद्धान्त, जो भारत और चीन के बीच 1954 में हुए समझौते में निर्धारित किए गए थे। भारत हमेशा अन्तर्राष्ट्रीय विवादों के शान्तिपूर्ण समाधान का समर्थन करता रहा है। भारत वैश्विक मुद्दों पर अन्य देशों के साथ सहयोग करने के लिए प्रतिबद्ध है, जैसे कि जलवायु परिवर्तन, आतंकवाद और गरीबी। भारत की विदेश नीति का प्राथमिक उद्देश्य देश की सीमाओं और हितों की रक्षा करना है। भारत अपनी अर्थव्यवस्था को विकसित करने और अपने नागरिकों के लिए समृद्धि लाने के लिए विदेशी सम्बन्धों का उपयोग करता है। भारत अपने पड़ोसी देशों के साथ शान्तिपूर्ण और स्थिर सम्बन्ध बनाए रखने का प्रयास करता है। भारत एक प्रमुख वैश्विक शक्ति के रूप में अपनी भूमिका को मजबूत करना चाहता है। भारत की प्राचीन सभ्यता और सांस्कृतिक विरासत ने इसकी विदेश नीति को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। भारत की भौगोलिक स्थिति, जो इसे एशिया के केन्द्र में रखती है, इसकी विदेश नीति को प्रभावित करती है। भारत की बढ़ती अर्थव्यवस्था इसे अंतरराष्ट्रीय सम्बन्धों में एक महत्वपूर्ण खिलाड़ी बनाती है। भारत की सुरक्षा चिंताएं, जैसे कि सीमा विवाद और आतंकवाद, इसकी विदेश नीति को निर्देशित करती हैं।

मुख्य शब्द— विदेश, नीति, राजनीति, अर्थव्यवस्था ।

भूमिका—

भारत अपने पड़ोसी देशों के साथ सम्बन्धों को विशेष महत्व देता है, क्योंकि क्षेत्रीय स्थिरता इसकी सुरक्षा और विकास के लिए महत्वपूर्ण है। भारत संयुक्त राज्य अमेरिका, रूस, चीन और अन्य प्रमुख शक्तियों के साथ अपने सम्बन्धों को संतुलित करने का प्रयास करता है। भारत विकासशील देशों के साथ एकजुटता और सहयोग को बढ़ावा देता है। भारत संयुक्त राष्ट्र, विश्व व्यापार संगठन और अन्य अंतरराष्ट्रीय संगठनों में सक्रिय रूप से भाग लेता है।

भारत की विदेश नीति को समझना देश के इतिहास, राजनीति और अर्थव्यवस्था को समझने के लिए महत्वपूर्ण है। यह हमें वैश्विक मुद्दों और अंतरराष्ट्रीय संबंधों को बेहतर ढंग से समझने में मदद करता है। यह हमें भारत की विदेश नीति के भविष्य के बारे में सोचने और बहस करने में सक्षम



बनाता है।

गुटनिरपेक्षता, भारत की विदेश नीति का एक महत्वपूर्ण और ऐतिहासिक सिद्धान्त है। यह सिद्धान्त, द्वितीय विश्व युद्ध के बाद के शीत युद्ध के दौर में उभरा, जब दुनिया दो महाशक्तियों, संयुक्त राज्य अमेरिका और सोवियत संघ के नेतृत्व वाले गुटों में बंट गई थी। भारत ने इन दोनों गुटों से दूर रहने और अपनी स्वतंत्र विदेश नीति बनाए रखने का फैसला किया।

गुटनिरपेक्षता का अर्थ है किसी भी सैन्य या राजनीतिक गुट में शामिल न होना और सभी देशों के साथ मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध बनाए रखना। यह सिद्धान्त, शान्ति, समानता, न्याय और अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग पर आधारित है। गुटनिरपेक्षता का मुख्य उद्देश्य, भारत के राष्ट्रीय हितों की रक्षा करना है। यह सिद्धान्त, भारत को अपनी विदेश नीति स्वतंत्र रूप से बनाने और किसी भी बाहरी दबाव से मुक्त रहने की अनुमति देता है। भारत, विश्व शान्ति और स्थिरता को बढ़ावा देने के लिए प्रतिबद्ध है। गुटनिरपेक्षता, विभिन्न देशों के बीच संवाद और सहयोग को बढ़ावा देकर, शान्तिपूर्ण समाधानों को प्रोत्साहित करता है। भारत, विकासशील देशों के हितों का समर्थन करता है। गुटनिरपेक्षता, विकासशील देशों को अपनी आवाज उठाने और अन्तर्राष्ट्रीय मंच पर अपने अधिकारों की रक्षा करने में मदद करता है।

भारत, गुटनिरपेक्ष आन्दोलन के संस्थापकों में से एक है। यह आन्दोलन, उन देशों का एक समूह है जो किसी भी सैन्य या राजनीतिक गुट में शामिल नहीं हैं। गुटनिरपेक्ष आन्दोलन, विश्व शान्ति, निरस्त्रीकरण, विकास और समानता को बढ़ावा देने के लिए काम करता है।

हालांकि शीत युद्ध समाप्त हो गया है, लेकिन गुटनिरपेक्षता आज भी प्रासंगिक है। आज, दुनिया कई चुनौतियों का सामना कर रही है, जैसे कि आतंकवाद, जलवायु परिवर्तन और आर्थिक असमानता। गुटनिरपेक्षता, इन चुनौतियों का सामना करने के लिए एक महत्वपूर्ण उपकरण है। यह सिद्धान्त, विभिन्न देशों के बीच सहयोग और संवाद को बढ़ावा देता है, जो इन चुनौतियों का समाधान करने के लिए आवश्यक है।

भारत की विदेश नीति में पंचशील का महत्वपूर्ण स्थान है। यह पाँच सिद्धान्तों का एक समूह है जो अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों के संचालन के लिए एक रूपरेखा प्रदान करता है। इन सिद्धान्तों को पहली बार 1954 में

भारत और चीन के बीच एक समझौते में औपचारिक रूप दिया गया था।

एक दूसरे की क्षेत्रीय अखण्डता और सम्प्रभुता का सम्मान सिद्धान्त प्रत्येक देश के अधिकार को अपनी सीमाओं के भीतर स्वतंत्र रूप से कार्य करने और अन्य देशों द्वारा हस्तक्षेप से मुक्त होने के अधिकार को मान्यता देता है। एक दूसरे के खिलाफ आक्रामकता न करना देशों को एक दूसरे के खिलाफ बल प्रयोग करने से रोकता है, चाहे वह सैन्य, आर्थिक या राजनीतिक हो।

एक दूसरे के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप न करना देशों को दूसरे देश के घरेलू मामलों में हस्तक्षेप करने से रोकता है, चाहे वह कितना भी आकर्षक क्यों न हो। समानता और पारस्परिक लाभ के लिए सहयोग देशों को एक दूसरे के साथ समान शर्तों पर सहयोग करने के लिए प्रोत्साहित करता है, जिससे दोनों पक्षों को लाभ हो। शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व विभिन्न राजनीतिक और सामाजिक प्रणालियों वाले देशों को शान्तिपूर्वक एक साथ रहने के लिए प्रोत्साहित करता है।

साहित्य की समीक्षा –

पंचशील के सिद्धान्त अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में शान्ति और स्थिरता को बढ़ावा देते हैं। पंचशील के सिद्धान्त भारत को अपने राष्ट्रीय हितों की रक्षा करने में मदद करते हैं। पंचशील के सिद्धान्त भारत को विकासशील देशों के साथ मजबूत सम्बन्ध बनाने में मदद करते हैं। पंचशील के सिद्धान्तों ने भारत को वैश्विक मंच पर एक जिम्मेदार और शान्तिप्रिय राष्ट्र के रूप में अपनी भूमिका को मजबूत करने में मदद की है।

कुछ लोगों का तर्क है कि पंचशील के सिद्धान्त आदर्शवादी हैं और वास्तविक दुनिया में लागू करना मुश्किल है। कुछ लोगों का तर्क है कि पंचशील के सिद्धान्त भारत को अपनी सुरक्षा के लिए पर्याप्त रूप से मजबूत नहीं बनाते हैं। कुछ लोगों का तर्क है कि चीन ने पंचशील के सिद्धान्तों का उल्लंघन किया है।

पंचशील भारत की विदेश नीति का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। इन सिद्धान्तों ने भारत को अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में एक जिम्मेदार और शान्तिप्रिय राष्ट्र के रूप में अपनी भूमिका को मजबूत करने में मदद की है। पंचशील के सिद्धान्तों को आज भी प्रासंगिक माना जाता है और वे अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों के संचालन के लिए एक महत्वपूर्ण रूपरेखा प्रदान करते हैं।



भारत संयुक्त राष्ट्र शान्ति अभियानों में सक्रिय रूप से भाग लेता है और आतंकवाद के खिलाफ वैश्विक लड़ाई में सहयोग करता है। भारत विश्व व्यापार संगठन, जी20 और अन्य आर्थिक मंचों के माध्यम से वैश्विक आर्थिक विकास को बढ़ावा देता है। भारत पेरिस समझौते के तहत जलवायु परिवर्तन से निपटने के लिए प्रतिबद्ध है और अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय के साथ मिलकर काम कर रहा है।

भारत की विदेश नीति का अध्ययन—

भारत ने कोविड-19 महामारी के दौरान दुनिया भर के देशों को टीके और चिकित्सा सहायता प्रदान की। भारत अन्तर्राष्ट्रीय सांस्कृतिक और शैक्षिक आदान-प्रदान को बढ़ावा देता है। भारत की विदेश नीति अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग के माध्यम से विश्व शान्ति, विकास और समृद्धि को बढ़ावा देने के लिए प्रतिबद्ध है। भारत एक जिम्मेदार वैश्विक शक्ति के रूप में अपनी भूमिका निभाता रहेगा और अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय के साथ मिलकर काम करता रहेगा।

भारत की विदेश नीति हमेशा से ही वैश्विक मंच पर एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती रही है। स्वतंत्रता के बाद से, भारत ने गुटनिरपेक्षता, शान्ति, और सहयोग के सिद्धान्तों पर आधारित एक स्वतंत्र विदेश नीति का पालन किया है। बदलते वैश्विक परिदृश्य में, भारत की विदेश नीति ने भी कई महत्वपूर्ण बदलाव देखे हैं।

शीत युद्ध के दौरान, भारत ने किसी भी गुट में शामिल न होने का फैसला किया और गुटनिरपेक्ष आन्दोलन का नेतृत्व किया। भारत ने चीन के साथ पंचशील के पांच सिद्धान्तों (शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व, अहस्तक्षेप, समानता, आपसी लाभ, और क्षेत्रीय अखण्डता) पर आधारित एक समझौता किया। भारत अपने पड़ोसी देशों के साथ सम्बन्धों को मजबूत करने पर विशेष ध्यान देता है।

भारत संयुक्त राष्ट्र, विश्व व्यापार संगठन, और अन्य अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों में सक्रिय रूप से भाग लेता है। भारत अपनी आर्थिक विकास को बढ़ावा देने के लिए व्यापार और निवेश सम्बन्धों को मजबूत करने पर ध्यान केंद्रित कर रहा है। भारत ने संयुक्त राष्ट्र शान्ति अभियानों में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। भारत विकासशील देशों के हितों की रक्षा के लिए वैश्विक मंचों पर आवाज उठाता है।

भारत एक उभरती हुई आर्थिक शक्ति है और वैश्विक व्यापार और निवेश में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। भारत की संस्कृति और परंपराओं का वैश्विक

स्तर पर गहरा प्रभाव है। योग, आयुर्वेद और भारतीय सिनेमा दुनिया भर में लोकप्रिय हैं। भारत जलवायु परिवर्तन के खिलाफ लड़ाई में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। अन्तर्राष्ट्रीय सौर गठबन्धन जैसी पहलों के माध्यम से, भारत नवीकरणीय ऊर्जा को बढ़ावा देने और सतत विकास को प्रोत्साहित करने में महत्वपूर्ण योगदान दे रहा है।

भारत वैश्विक मंचों पर सक्रिय रूप से भाग लेता है और महत्वपूर्ण मुद्दों पर अपनी राय रखता है। भारत प्राकृतिक आपदाओं और अन्य संकटों के समय में अन्य देशों को मानवीय सहायता प्रदान करता है। भारत और चीन के बीच सीमा विवाद और अन्य मुद्दों ने सम्बन्धों को तनावपूर्ण बना दिया है। भारत आतंकवाद के खिलाफ लड़ाई में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। जलवायु परिवर्तन भारत के लिए एक बड़ी चुनौती है। भारत को अपनी आर्थिक विकास को बनाए रखने और गरीबी को कम करने की आवश्यकता है।

प्राचीन भारत में, विदेश नीति का मुख्य उद्देश्य व्यापार और सांस्कृतिक आदान-प्रदान को बढ़ावा देना था। मौर्य और गुप्त साम्राज्यों ने पड़ोसी देशों के साथ मजबूत सम्बन्ध स्थापित किए और भारतीय संस्कृति और धर्म दक्षिण पूर्व एशिया और मध्य एशिया में फैल गए। मध्यकाल में, भारत कई विदेशी आक्रमणों का शिकार हुआ। इसके परिणामस्वरूप, भारतीय शासकों ने अपनी सुरक्षा और संप्रभुता को बनाए रखने के लिए विभिन्न रणनीतियाँ अपनाईं।

आधुनिक भारत की विदेश नीति महात्मा गांधी और जवाहरलाल नेहरू के विचारों से गहराई से प्रभावित है। भारत ने गुटनिरपेक्षता की नीति अपनाई, जिसका उद्देश्य शीत युद्ध के दौरान किसी भी महाशक्ति के साथ गठबन्धन से बचना था। भारत ने उपनिवेशवाद और रंगभेद का विरोध किया, और इसने संयुक्त राष्ट्र और अन्य अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों में सक्रिय भूमिका निभाई।

भारतीय संस्कृति में अहिंसा और शान्ति के मूल्यों पर जोर दिया गया है। इन मूल्यों ने भारत की विदेश नीति को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। भारत एक विविध और सहिष्णु देश है। यह विविधता और सहिष्णुता भारत की विदेश नीति में भी दिखाई देती है। 'वसुधैव कुटुम्बकम्' का अर्थ है— 'विश्व एक परिवार है।' यह भारतीय दर्शन का एक महत्वपूर्ण सिद्धान्त है और यह भारत की विदेश नीति को निर्देशित करता है।



भारत की विदेश नीति लगातार विकसित हो रही है, क्योंकि देश वैश्विक मामलों में एक प्रमुख शक्ति के रूप में अपनी भूमिका को मजबूत कर रहा है। गुटनिरपेक्षता, भारत की विदेश नीति का एक महत्वपूर्ण और सफल सिद्धान्त रहा है। इस सिद्धान्त ने, भारत को एक स्वतंत्र और जिम्मेदार वैश्विक खिलाड़ी बनने में मदद की है। गुटनिरपेक्षता, आज भी प्रासंगिक है और यह भारत को भविष्य की चुनौतियों का सामना करने में मदद करेगा।

निष्कर्ष –

भारत की विदेश नीति ने वैश्विक मंच पर एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है और भविष्य में भी यह महत्वपूर्ण भूमिका निभाती रहेगी। भारत को अपनी विदेश नीति को बदलते वैश्विक परिदृश्य के अनुसार अनुकूलित करने और अपनी राष्ट्रीय हितों की रक्षा करने की आवश्यकता है। भारत की विदेश नीति एक जटिल और गतिशील विषय है, जो इसके समृद्ध इतिहास और विविध सांस्कृतिक विरासत से गहराई से प्रभावित है। भारत की विदेश नीति का इतिहास सदियों पुराना है और यह देश के बदलते भू-राजनीतिक परिदृश्य और वैश्विक भूमिका को दर्शाता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. अभ्यंकर आर. एम. – भारतीय कूटनीति, सामरिक स्वायत्तता से परे। नई दिल्ली – ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 2020। बाजपेयी, के. – 2021।

2. नरेन्द्र मोदी की पाकिस्तान और चीन नीति – मुखर द्विपक्षीय कूटनीति, सक्रिय गठबन्धन कूटनीति। अन्तर्राष्ट्रीय मामले 93 (1), पृष्ठ संख्या – 69–92।
3. बंधोपाध्याय जे. – भारत की विदेश नीति का निर्माण, निर्धारक, संस्थान, प्रक्रियाएँ और व्यक्तित्व। एलाइड पब्लिशर्स–2020।
4. बसरूर – मोदी की विदेश नीति के मूल सिद्धान्त, एक प्रक्षेप पथ अपरिवर्तित। अन्तर्राष्ट्रीय मामले। 2019–93 (1), पृष्ठ संख्या – 7–26।
5. आर. मोदी, हिन्दुत्व और विदेश नीति। अन्तर्राष्ट्रीय अध्ययन परिप्रेक्ष्य। 2019–20 (1), पृष्ठ संख्या – 7–11।
6. चाको पी. – भारत में दायीं मोड़ – सत्तावाद, लोकलुभावनवाद और नवउदारीकरण। समकालीन एशिया का जर्नल, 2020–48(4), पृष्ठ संख्या – 541–565।
7. चटर्जी एम. – क्या नेता की विचारधाराएँ विदेश नीति को प्रभावित करती हैं? नेहरूवाद बनाम मोदीतिवाद। एशिया नीति। 2020–27 (2) पृष्ठ संख्या – 176–178।
8. मिलर एम, सुलिवन, डी एस्ट्राडा के. – 70 की उम्र में भारत का उदय (विशेष अंक) अन्तर्राष्ट्रीय मामले। 2021–93 (1), पृष्ठ संख्या – 219।



भारत में सामाजिक समरसता, मानवीय मूल्यों की उपादेयता के सन्दर्भ में

सारांश



— डॉ. विन्दुमती देवी
सहायक आचार्य —
शिक्षाशास्त्र विभाग,
उत्तराखण्ड संस्कृत
विश्वविद्यालय, हरिद्वार-249402
(उत्तराखण्ड)

ई. मेल—
vindudwivediusvv@gmail.com

आज आवश्यकता है कि देश के सभी युवा, समाज में व्याप्त इन बुराइयों का स्वयं विरोध करें तथा इन्हें रोकने का हर संभव प्रयास करें। यदि यह प्रयास पूरे मन से होगा तो इन सामाजिक बुराइयों को अवश्य ही जड़ से उखाड़ फेंका जा सकता है। इन स्थितियों में सुधार के लिए और भी अधिक प्रयास करने की आवश्यकता है और लोगों के दिमाग की गहराई में बैठे हुये गलत विश्वासों, मान्यताओं व प्रथाओं को बदले बिना इन स्थितियों को सुधारना बहुत कठिन कार्य है। इस उद्देश्य के लिए सबसे उपयुक्त तरीका लोगों को विभिन्न सामाजिक समस्याओं के बारे में शिक्षित करना होगा और उन्हें अपनी सोच बदलने के लिए प्रेरित करना होगा। क्योंकि लोगों को खुद को बदलने के लिए प्रेरित किए बिना, कोई भी सरकारी या गैर-सरकारी संस्था के प्रयास आधे-अधूरे साबित होंगे। यदि हम भारत को सही में 21वीं शताब्दी का सच्चा विश्व नेता बनाना चाहते हैं तो ये अनिवार्य है कि हमें अपने सामाजिक स्तर में सुधार करने चाहिए।

भारत एक प्राचीन देश है, कुछ अनुमानों के अनुसार भारतीय सभ्यता लगभग 5 हजार वर्ष पुरानी है, इसलिए इसका समाज भी बहुत पुराना और जटिल प्रकृति का है। अपनी लम्बी ऐतिहासिक अवधि के दौरान, भारत बहुत से उतार-चढ़ावों और अप्रवासियों के आगमन का गवाह है। जैसे- आर्यों का आगमन, मुस्लिमों का आगमन आदि। ये लोग अपने साथ अपनी जातीय बहुरूपता और संस्कृति को लेकर आये साथ ही भारत की विविधता, समृद्धि व जीवन शक्ति में अपना योगदान दिया। इसलिए, भारतीय समाज विविध संस्कृतियों, लोगों, विश्वासों, मान्यताओं का जटिल मिश्रण है जो शायद कहीं से भी आया हो लेकिन अब इस विशाल देश का एक अभिन्न हिस्सा है। इस जटिलता और समृद्धि ने भारतीय समाज को एक जीवंत और रंगीन संस्कृति का अद्वितीय रूप दिया है।

भारत एक विशाल देश है जहां विभिन्न धर्मों, जाति व वेश-भूषा धारण करने वाले लोग निवास करते हैं, दूसरे शब्दों में अनेकता में एकता हमारी पहचान और हमारा गौरव है, परंतु अनेकता अनेक समस्याओं की जननी भी है। जाति, भाषा, रहन-सहन व धार्मिक विभिन्नताओं के बीच कभी-कभी सामंजस्य स्थापित रखना दुष्कर हो जाता है। विभिन्न धर्मों व संप्रदायों के लोगों की विचारधाराएँ भी विभिन्न होती हैं। देश में व्याप्त प्रांतीयता, संप्रदायवाद या जातिवाद इन्हीं विभिन्नताओं का दुष्परिणाम हैं। इसके चलते आज देश के लगभग सभी राज्यों से दंगे-फसाद, मारकाट, लूट-खसोट के समाचार प्रायः सुनने व पढ़ने को मिलते हैं।

नारी के प्रति अत्याचार, दुराचार तथा बलात्कार का प्रयास हमारे समाज में एक शर्मनाक समस्या है। प्राचीनकाल में जहां नारी को देवी तुल्य समझा



जाता था आज उसी नारी की भावनाओं को दबाकर रखा जाता है पुरुष का अह उसे अपने समकक्ष स्थान देने के लिए विरोध करता है।

हमारे पूज्य कवि तुलसीदास के अनुसार -

‘ढोल, गँवार, सूद, पशु, नारी।

सकल ताड़ना के अधिकारी ।।’

इससे पता चलता है कि तुलसीदास ने अपने युग की मान्यताओं को लिपिबद्ध किया है। समाज में स्त्रियों एवं शूद्रों की स्थिति बड़ी दयनीय थी। दहेज प्रथा जैसी सामाजिक कुरीतियाँ आज भी नारी को कष्टमय व असहाय जीवन जीने के लिए बाध्य करती है। केवल अशिक्षित ही नहीं अपितु हमारे कथित सभ्य-शिक्षित समाज में भी दहेज का जहर व्याप्त है। प्रतिदिन कितनी ही भारतीय नारियाँ दहेज प्रथा के कारण मनुष्य की बर्बरता का शिकार हो जाती है अथवा जिंदा जला दी जाती है।

अंधविश्वास व रूढ़िवादिता जैसी सामाजिक बुराई देश की प्रगति को पीछे धकेल देती है। अंधविश्वास व रूढ़िवादिता हमारे नवयुवकों को भाग्यवादिता की ओर ले जाती है फलस्वरूप वे कर्महीन हो जाते हैं। अपनी असफलताओं में अपनी कमियों को ढूँढ़ने वे इसे भाग्य की परिणति का रूप दे देते हैं।

भ्रष्टाचार भी हमारे देश में एक जटिल समस्या का रूप ले चुका है। सामान्य कर्मचारी से लेकर ऊँचे-ऊँचे पदों पर आसीन अधिकारी तक सभी भ्रष्टाचार का पर्याय बन गये हैं। जिस देश के नेतागण भ्रष्टाचार में डूबे हुए होंगे तो सामान्य व्यक्ति उससे परे कब तक रह सकता है। यह भ्रष्टाचार का ही परिणाम है कि देश में महंगाई तथा कालाबाजारी के जहर का स्वच्छंद रूप से विस्तार हो रहा है।

जातिवाद की जड़े समाज में बहुत गहरी हो चुकी हैं। ये समस्याएँ आज की नहीं हैं अपितु सदियों, युगों से पनप रही हैं। इनके परिणामस्वरूप सामाजिक विषमता पनपती है जो देश के विकास में बाधक बनती है। इसके अतिरिक्त भाई-भतीजावाद व कुरसीवाद समाज में असमानता व अन्य समस्याओं को जन्म देता है। भारत की राजनीतिक समस्याओं के समाधान के लिए सामाजिक स्तर पर जद्दोजहद करने की आवश्यकता है क्योंकि

‘जो भी हो संघर्षों की बात तो ठीक है

बढ़ने वाले के लिए यही तो एक लीक है।

फिर भी दुःख-सुख से यह कैसी निस्संगता!’

देश में अशिक्षा और निर्धनता हमारी प्रगति के मार्ग

की सबसे बड़ी रूकावट है। ये दोनों ही कारक मनुष्य के संपूर्ण बौद्धिक एवं शारीरिक विकास में अवरोध उत्पन्न करते हैं। जब तक समाज में अशिक्षा और निर्धनताई व्याप्त है, कोई भी देश वास्तविक रूप में विकास नहीं कर सकता है।

इन समस्याओं का हल ढूँढ़ना केवल सरकार की ही दायित्व नहीं है अपितु यह पूरे समाज तथा समाज के सभी नागरिकों का उत्तरदायित्व है। इसके लिए जनजागृति आवश्यक है जिससे लोग जागरूक बनें व कर्तव्यों को समझें। देश के युवाओं व भावी पीढ़ी पर यह जिम्मेदारी और भी अधिक बनती है।

सामाजिक बुराईयों के कारण -

लेकिन यही जटिलता अपने साथ बहुत सी सामाजिक समस्याओं और मुद्दों की जटिल प्रकृति को सामने लाती है। वास्तव में पूरे संसार के प्रत्येक समाज में भारतीय समाज की ही तरह अपने अलग-अलग सामाजिक मुद्दे होते हैं। भारतीय समाज बहुत गहराई से धार्मिक विश्वासों से जुड़ा हुआ है; यहां विभिन्न धार्मिक विश्वासों को मानने वाले लोग रहते हैं जैसे : हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई, पारसी आदि। ये सभी देश की सामाजिक-सांस्कृतिक किस्मों में जुड़ती है। भारतीय सामाजिक समस्याएँ भी लोगों की धार्मिक प्रथाओं और विश्वासों में निहित है। लगभग सभी सामाजिक मुद्दों और समस्याओं की उत्पत्ति भारत के लोगों की धार्मिक और सांस्कृतिक प्रथाओं से होती है। ये सामाजिक समस्याएँ बहुत लम्बे समय से विकसित हुई हैं और अभी भी अलग रूप में जारी हैं।

इसके अलावा, भारत बड़े पैमाने पर बहुत से युद्धों का गवाह रहा है; बहुत से विदेशी आक्रमणकारियों ने इसके लम्बे इतिहास में भारत पर हमला किया, जिनमें से कुछ ने इस देश को अपना लिया और अपने सामाजिक-धार्मिक प्रथाओं को मानने के लिए मजबूर कर किया जिससे सामाजिक स्थिति भी बिगड़ गयी, लम्बी अवधि के ब्रिटिश शासन ने देश को अंपंग बना दिया और पिछड़ेपन की ओर फेंक दिया। इस प्रकार, बहुत से कारणों को भारत की सामाजिक समस्याओं के लिए उद्धृत किया जा सकता है लेकिन वास्तविकता ये हैं कि हम ये मुद्दे रखते हैं और केवल हम ही इन्हें सुलझा सकते हैं।

भारत में सामाजिक मुद्दों के रूप

गरीबी -

गरीबी वो स्थिति है जिसमें एक परिवार जीने के लिए अपनी आधारभूत जरूरतों को पूरा करने में सक्षम नहीं होता है; जैसे : खाना, वस्त्र और घरा भारत में गरीबी विशाल स्तर



पर फैली हुई स्थिति है। स्वतंत्रता के समय से, गरीबी एक प्रचलित चिंता का विषय है। ये 21 शताब्दी है और गरीबी आज भी देश में लगातार खतरा के रूप में बनी हुई है। भारत ऐसा देश है जहां अमीर और गरीब के बीच बहुत व्यापक असमानता है। इसे ध्यान में रखा जाना चाहिए कि यद्यपि पिछले दो दशकों में अर्थव्यवस्था में प्रगति के कुछ लक्षण दिखाये गये हैं, ये प्रगति विभिन्न क्षेत्रों या भागों में असमान है। वृद्धि दर बिहार और उत्तर प्रदेश की तुलना में गुजरात और दिल्ली में ऊंची है। लगभग आधी जनसंख्या के पास रहने के लिए पर्याप्त आवास नहीं है, सभ्य स्वच्छता प्रणाली तक पहुंच, गाँवों में पानी का स्रोत कोई नहीं है साथ ही माध्यमिक विद्यालय भी नहीं है और ना ही उपयुक्त रास्ते हैं। यहां तक कि दलितों की तरह ही समाज के कुछ वर्ग सरकार द्वारा नियुक्त संबंधित अधिकारी वर्ग द्वारा अनुरक्षित गरीबी सूची में शामिल भी नहीं किये गये हैं। वो समूह जो सामाजिक रूप से अलग रख दिये गये हैं।

वो तत्व जिसने इस स्थिति को और भी पेचीदा और दूषित कर दिया है, वो हैं सरकार द्वारा प्रदत्त अनुदान प्रणाली जिसकी वितरण प्रणाली में घोटाले, भ्रष्टाचार और लीकेज है जिसके कारण वो परिवारों तक योजना के अनुसार नहीं पहुंच पा रही हैं।

असाक्षरता / अशिक्षा -

अशिक्षा वो स्थिति है जो राष्ट्र के विकास पर एक धब्बा बन गयी है। भारत बहुत बड़ी अशिक्षित जनसंख्या को धारण करता है। भारत में अशिक्षा वो समस्या है जो इससे जुड़े बहुत से जटिल परिणाम रखती है। भारत में अशिक्षा लगभग देश में विद्यमान असमानताओं के विभिन्न रूपों के साथ सम्बन्धित है। देश में व्याप्त असाक्षरता की दर को लिंग असन्तुलन, आय संतुलन, राज्य सन्तुलन, जाति असन्तुलन, तकनीकी बाधाएँ आदि आकार दे रही है। भारतीय सरकार ने असाक्षरता के खतरे का मुकाबला करने के लिए बहुत सी योजनाओं को लागू किया लेकिन स्वच्छता की घटिया परिस्थितियों, महंगी निजी शिक्षा, दोषपूर्ण मिड-डे गमील योजना के कारण अशिक्षा अभी भी अस्तित्व में हैं। केवल सरकार को ही नहीं बल्कि प्रत्येक साक्षर व्यक्ति को भी असाक्षरता के उन्मूलन को व्यक्तिगत लक्ष्य के रूप में स्वीकार करना चाहिए। सभी साक्षर व्यक्तियों द्वारा किये गये सभी प्रयास इस खतरे के उन्मूलन में महत्वपूर्ण योगदान दे सकते हैं।

बाल-विवाह -

संयुक्त राष्ट्र की एक रिपोर्ट के अनुसार, भारत बाल विवाह की दूसरी बड़ी संख्या रखता है। शादी को दो परिपक्व

(बालिग) व्यक्तियों की आपसी सहमति से बना पवित्र मिलन माना जाता है जो पूरे जीवनभर के लिए एक-दूसरे की सभी जिम्मेदारियों को स्वीकार करने के लिए तैयार होते हैं। इस सन्दर्भ में बाल विवाह का होना अनुचित प्रथा है। बाल-विवाह बचपन की मासूमियत की हत्या है। भारतीय संविधान में बाल-विवाह के खिलाफ कई कानूनों और अधिनियमों का निर्माण किया गया था। ये अधिनियम बालिग लड़के और लड़कियों की उम्र को परिभाषित करता है। इसके साथ ही नाबालिग के साथ यौन सम्बन्ध भारतीय दण्ड संहिता (इण्डियन पैनल कोड) की धारा 376 के अन्तर्गत एक दण्डनीय अपराध है। इस मुख्य परिवर्तन के लिए उचित मीडिया संवेदीकरण की आवश्यकता है। वही दूसरी तरफ, ये माना गया है कि बाल-विवाह को जड़ से खत्म करने, वास्तविक प्रयासों, सख्ती से कानून लागू करने के साथ ही अभी भी लगभग 50 साल लगेंगे तब जाकर कही परिदृश्य को बदला जा सकता है।

अकाल / भुखमरी -

भुखमरी कैलोरी ऊर्जा खपत में कमी की स्थिति को प्रदर्शित करती है, ये कुपोषण का एक गंभीर रूप है जिसकी यदि देखभाल नहीं की गयी तो अन्ततः मौत की ओर ले जाता है। ऐतिहासिक रूप से, भुखमरी भारत से अलग विभिन्न मामानव संस्कृतियों में स्थिर हो चुकी है। भुखमरी किसी भी देश में बहुत से कारणों से जन्म लेती है जैसे युद्ध, अकाल, अमीर-गरीब के बीच असमानता आदि। कुपोषण की स्थिति जैसे बच्चों को होने वाली बीमारी क्वाशियोरकॉर और सूखा रोग, अकाल या भुखमरी के कारण उत्पन्न गंभीर समस्या हैं। सामान्यतः क्वाशियोरकॉर और सूखा रोग उन परिस्थितियों में होता है जब लोग ऐसा आहार लेते हैं जिसमें पोषक तत्वों (प्रोटीन, मिनरल्स, कार्बोहाइड्रेट, वसा और फाइबर) की कमी हो। भारत के संदर्भ में ये कहने की आवश्यकता ही नहीं है कि ये भोजन प्रणाली के वितरण की दोषपूर्ण व्यवस्था है। सुप्रीम कोर्ट ने पिछले दशकों में एक आदेश पारित करते हुए सरकार को मिड-डे मील योजना और और गर्भवती व स्तनपान कराने वाली महिलाओं के स्वास्थ्य के लिए आवश्यक कदम उठाने के निर्देश दिये हैं। राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा बिल जो आस-पास के गरीबों की पहचान, कष्टों व विपत्तियों यन्त्र (ये शब्द किसके संदर्भ में है) और बच्चों के अधिकारों के संदर्भ में किये गये वादों और कार्यों को पूरा करने कते लिए इसके मापक के रूप में ये अधिनियम में मील का पत्थर बन गया है। ये बिल भी पूर्णतया दोष रहित नहीं है। लाभार्थियों की पहचान के सम्बन्ध में स्पष्ट तंत्र में परिभाषित नहीं किया गया है। गरीबी निर्धारण के संकेतकों को विशिष्ट बनाने की आवश्यकता थी जो इस बिल में



बिल्कुल भी स्पष्ट नहीं है।

बाल श्रम -

बाल श्रम से आशय बच्चों द्वारा किसी भी काम को बिना किसी प्रकार का वेतन दिये कार्य कराना है। बाल श्रम केवल भारत तक ही सीमित नहीं है, बल्कि वैश्विक स्तर पर फैला हुआ है। जहाँ तक भारत का सम्बन्ध है, ये मुद्दा दोषपूर्ण है क्योंकि ऐतिहासिक काल से यहाँ बच्चे अपने माता-पिता के साथ उनकी खेतों और अन्य कार्यों में मदद कराते हैं। अधिक जनसंख्या, अशिक्षा, गरीबी, ऋण-जाल आदि सामान्य कारण इस मुद्दे के प्रमुख सहायक हैं। जिम्मेदारी से दबें तथा ऋणग्रस्त माता-पिता अपनी परेशानियों के दबाव के कारण सामान्य बचपन के महत्व को नहीं समझ पाते हैं, जो बच्चों के मस्तिष्क में घटिया भावनाओं और मानसिक सन्तुलन का नेतृत्व करता है और जो कठोर क्षेत्र या घरेलू कार्यों को शुरू करने के लिए तैयार नहीं है। बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ भी बच्चों को कपड़ों का निर्माण करने वाली कम्पनियों में काम करने के लिए रखती है और कम वेतन देती है जो बिल्कुल ही अनैतिक है। बाल श्रम वैश्विक चिन्ता का विषय है जो अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भी व्याप्त है। बच्चों का अवैध व्यापार, गरीबी का उन्मूलन, निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा और जीवन के बुनियादी मानक बहुत हद तक इस समस्या को बढ़ने से रोक सकते हैं। विश्व बैंक, अन्तर्राष्ट्रीय मौद्रिक कोष गरीबी के उन्मूलन के लिए विकासशील देशों को ऋण प्रदान करके मदद करता है। बहुराष्ट्रीय कम्पनी औप अन्य संस्थाओं के द्वारा शोषण को रोकने के लिए श्रम कानूनों को सख्ती से लागू करना अनिवार्य है।

सामाजिक समस्याओं से जुड़े मुद्दों के और रूप भी हैं जैसे जातिवाद, अस्पृश्यता, बंधक मजदूर, लिंग असमानता, दहेज प्रथा, महिलाओं पर घरेलू हिंसा, महिलाओं के खिलाफ यौन हिंसा, बाल यौन शोषण, साम्यवाद, धार्मिक हिंसा, एस.सी. / एस.टी. से जुड़े मुद्दे, किशोर अपराध, वैवाहिक बलात्कार, कार्यक्षेत्र पर महिलाओं का यौन-शोषण आदि।

ये सूची जारी रहेगी और ये कोई व्यापक सूची नहीं है। देश में बहुत से जीवन्त सामाजिक मुद्दे और समस्याएँ हैं, लेकिन ऊपर वर्णित मुद्दे वास्तविकता में दबाव वाले मुद्दे हैं जिस पर तत्काल ध्यान देने की आवश्यकता है।

ऐसा नहीं है कि सामाजिक बुराईयों से लड़ा नहीं जा सकता; यहाँ तक कि प्राचीन काल से हमारे देश में बहुत से सामाजिक-सांस्कृतिक सुधारक हुये हैं, जैसे: बुद्ध, महावीर, कबीर, गुरुनानक, राजा राम मोहन राय, महात्मा गाँधी, डॉ. अम्बेडकर, विनोबा भावे आदि जिन्होंने उस समय में प्रचलित बुराईयों के खिलाफ आवाज उठायी और कुछ हद तक सफल

भी हुये। लेकिन आज भी देश इन्ही सामाजिक-सांस्कृतिक समस्याओं के विभिन्न रूपों से जूझ रहा है जो 21वीं शताब्दी के भारत का दुर्भाग्य है।

वर्तमान परिदृश्य -

हम संसार में अपने देश को आधुनिक, आगे बढ़ते हुए राष्ट्र के रूप में प्रस्तुत करते हैं और ये सत्य है कि भारत दुनिया में, वैज्ञानिक, आर्थिक और तकनीकी क्षेत्र में प्रोत्साहन और उन्नति के साथ एक राष्ट्र के रूप में प्रगति कर रहा है, लेकिन जहाँ तक सामाजिक विकास का सम्बन्ध है, यह अभी भी दुनिया के सबसे कम रैंक के साथ नीचे स्तर के देशों में से एक है। भारत के मानव विकास सूचकांक (एचडीआई), 2019 की रिपोर्ट के अनुसार इसे कुल 188 देशों में से 131 वाँ स्थान दिया गया है। ये भारत की सामाजिक संकेतकों में खेदजनक स्थिति को प्रदर्शित करता है। इससे ये भी दिखाई देता है कि हम आज भी रूढ़िवादी, मान्यताओं, विश्वासों के नकारात्मक दृष्टिकोण के समाज के रूप में हैं जो समानता और भाईचारे के सिद्धान्त में विश्वास नहीं करता है।

बहुत से सरकारी और गैर-सरकारी (एन.जी.ओ.) संगठन सामाजिक क्षेत्र में सुधारने के लिए कार्यरत हैं लेकिन परिणाम उत्साहवर्धक नहीं है। शायद ये समस्या देश के लोगों के विश्वासों और मान्यताओं में बहुत गहराई के साथ बैठी हुई है जो बदलाव की परिस्थितियों को स्वीकार नहीं करने दे रही है। उदाहरण के लिए कन्याभ्रूण हत्या का मुद्दा, हमारे देश में शर्मनाक प्रथाओं में से एक है। यद्यपि सरकार के बहुत से निषेधात्मक उपाय हैं और गैर-सरकारी संगठनों के प्रयास भी जारी हैं। इस के लिए असली कारण हमारे देश की समाज की पितृसत्तात्मक व्यवस्था है जिसमें ये माना जाता है कि पुरुष ही श्रेष्ठ हैं और महिलाएं उनकी अधीनस्थ हैं। जिसके कारण, लड़की की तुलना में लड़के की बहुत ज्यादा चाह में कन्या-भ्रूण हत्या जैसे शर्मनाक कार्य को अंजाम दिया जाता है। इस प्रकार, ये विश्वास प्रणाली या सांस्कृतिक मानसिकता वाले लोग समाज में तेजी से परिवर्तन होने में बाधा है।

हालांकि, अब समाज में बहुत से सकारात्मक परिवर्तन भी हुये हैं, जैसे- अब लड़कियाँ बहुत बड़ी संख्या में स्कूल जा रही हैं और उनकी रोजगार दर में भी वृद्धि हुई है, सम्पूर्ण अशिक्षा की दर में कमी हुई है, अनुसूचित जाति व जन-जातियों की स्थिति में सुधार हुआ है आदि, लेकिन स्थिति आज भी सन्तुष्टि के स्तर से बहुत दूर है।

हम अपने घरों में ही महिलाओं के साथ हो रहे असमानता के व्यवहार के गवाह हैं, हम महिलाओं के साथ हो रही यौन हिंसा के बारे दैनिक आधार पर सुन सकते हैं, कन्या-



भ्रूण हत्या लगातार जारी है, सामुदायिक-धार्मिक हिंसा अपने उत्थान पर है, छुआ-छूत अभी भी वास्तविकता है, बाल-श्रम बड़े पैमाने पर कराया जा रहा है आदि।

अतः इन स्थितियों में सुधार के लिए और भी अधिक प्रयास करने की आवश्यकता है और लोगों के दिमाग की गहराई में बैठे हुये गलत विश्वासों, मान्यताओं व प्रथाओं को बदले बिना इन स्थितियों को सुधारना बहुत कठिन कार्य है। इस उद्देश्य के लिए सबसे उपयुक्त तरीका लोगों को विभिन्न सामाजिक समस्याओं के बारे में शिक्षित करना होगा और उन्हें अपनी सोच बदलने के लिए प्रेरित करना होगा। क्योंकि लोगों को खुद को बदलने के लिए प्रेरित किए बिना, कोई भी सरकारी या गैर-सरकारी संस्था के प्रयास आधे-अधूरे साबित होंगे। यदि हम भारत को सही में 21वीं शताब्दी का सच्चा विश्व नेता बनाना चाहते हैं तो ये अनिवार्य है कि हमें अपने सामाजिक स्तर में सुधार करने चाहिए।

आवश्यकता है कि देश के सभी युवा, समाज में व्याप्त इन बुराइयों का स्वयं विरोध करें तथा इन्हें रोकने का हर संभव प्रयास करें। यदि यह प्रयास पूरे मन से होगा तो इन सामाजिक

बुराइयों को अवश्य ही जड़ से उखाड़ फेंका जा सकता है।

Reference

1. www.hindikiduniya.com
2. http://hi.wikipedia.org
3. www.essaysinhindi.com
4. http://www.hindujaggruti.org
5. http://www.gktoday.in



शोध-पत्र लेखकों को विशेष निर्देश

‘दि गुंजन’ और ‘अभिनव गवेषणा’ मल्टी डिस्प्लिनरी क्वार्टरली इण्टरनेशनल रेफ्रीड/पियर रिव्यूड रिसर्च जर्नल में पेपर प्रकाशित कराने के लिए पाँच प्रमुख बातों का होना बहुत ही आवश्यक है—

- (1) रिसर्च जर्नल पत्रिका के क्रमानुसार चार पेज से कम नहीं होना चाहिए।
- (2) रिसर्च जर्नल में कम से कम आठ सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (References) का होना आवश्यक है।
- (3) रिसर्च जर्नल में लेखक का नाम, पद, कालेज का पता, ऊपर अंकित होना चाहिए।
- (4) नवीनतम एक पासपोर्ट साइज फोटोग्राफ एवं ई-मेल एड्रेस।
- (5) रिसर्च जर्नल में प्रमाण-पत्र हेतु आपके निवास का पता अंकित होना जरूरी है।

यह आप सभी के स्नेह का ही परिणाम है कि आपके प्रबुद्ध विचारों को ‘दि गुंजन’ और ‘अभिनव गवेषणा’ मल्टी डिस्प्लिनरी क्वार्टरली इण्टरनेशनल रेफ्रीड/पियर रिव्यूड रिसर्च जर्नल के माध्यम से अपने पाठकों तक पहुँचाने का सुअवसर मिल रहा है। विस्तृत जानकारी हेतु कार्यालय अथवा मोबाइल पर सम्पर्क करें।

- प्रबन्ध सम्पादक

सम्पर्क - 8896244776

माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत आवासीय एवं गैर आवासीय विद्यार्थियों की भावात्मक परिपक्वता

सारांश



— शैलजा तिवारी
शोधार्थी—शिक्षक शिक्षा विभाग,
दयानन्द महिला प्रशिक्षण
महाविद्यालय, कानपुर—208001
(उत्तर प्रदेश)

ई. मेल—
pihu7822@gmail.com



रिसर्च सुपरवाइजर —
— डॉ. (श्रीमती) पूनम सरभाई
प्रोफेसर—एम.एड. विभाग,
दयानन्द महिला प्रशिक्षण
महाविद्यालय, कानपुर—208002
(उत्तर प्रदेश)

ई. मेल—
sarbhai.poonam@gmail.com

भावनात्मक परिपक्वता, शैक्षणिक दुश्चिन्ता और जोखिम उठाना आपस में गहराई से जुड़े हुए हैं। भावनात्मक परिपक्वता शैक्षणिक दुश्चिन्ता को कम करने में मदद करती है और भावनात्मक विनियमन और लचीलेपन को बढ़ाकर सकारात्मक जोखिम उठाने को बढ़ावा देती है। इसके विपरीत, उच्च शैक्षणिक दुश्चिन्ता जोखिम उठाने में बाधा डाल सकती है और निर्णय लेने की प्रक्रियाओं को बाधित कर सकती है, जब कि भावनात्मक परिपक्वता संतुलित और रचनात्मक जोखिम उठाने की सुविधा प्रदान करती है, जिसे आत्म-नियमन और आत्मविश्वास द्वारा समर्थित किया जाता है। विद्यार्थियों के भावनात्मक और शैक्षिक विकास का समर्थन करने वाले वातावरण को बढ़ावा देने के लिए इन सम्बन्धों को समझना महत्वपूर्ण है।

प्रस्तावना —

गैर-आवासीय विद्यार्थी से तात्पर्य ऐसे विद्यार्थियों से है, जिन विद्यालयों में विद्यार्थियों के लिए आवास (हास्टल) की व्यवस्था होती है, किन्तु विद्यार्थी आवास (हास्टल) की सुविधा नहीं लेते हैं। इन विद्यालयों में विद्यार्थी अपने घर से विद्यालय रोजाना आते-जाते हैं। गैर-आवासीय विद्यार्थियों को अपने माता-पिता का मार्गदर्शन एवं पारिवारिक समर्थन आसानी से उपलब्ध होता है। गैर-आवासीय विद्यार्थियों को घर के माहौल का लाभ मिलता है, एक अलग तरह की गतिशीलता प्रदान करते हैं। जो विद्यार्थियों में भावनात्मक परिपक्वता, शैक्षिक दुश्चिन्ता एवं शैक्षिक प्रदर्शन को प्रभावित करते हैं।

भावात्मक परिपक्वता का अर्थ और परिभाषा—

परिभाषा — भावनात्मक परिपक्वता से तात्पर्य किसी व्यक्ति की अपनी भावनाओं को प्रभावी ढंग से समझने, नियंत्रित करने एवं भावनात्मक स्थिरता बनाए रखने और विभिन्न जीवन स्थितियों के लिए उचित रूप से प्रतिक्रिया करने की क्षमता से है। इसमें आत्म-नियमन, सहानुभूति, लचीलापन और संतुलित, तर्कसंगत दृष्टिकोण के साथ पारस्परिक सम्बन्धों को चलायमान करने की क्षमता शामिल है। भावनात्मक परिपक्वता किसी व्यक्ति की भावनाओं से अभिभूत हुए बिना, तनाव प्रतिकूलता और परिवर्तन से निपटने की क्षमता को दर्शाती है।

गेरिग और जिमार्डो (2006) ने संवेग के सम्बन्ध में कहा है कि— "शारीरिक और मानसिक परिवर्तनों का एक जटिल स्वरूप है जिसके अंतर्गत शारीरिक उत्तेजना, भावनाएं, संज्ञानात्मक प्रक्रियाएं, दृश्यमान भाव (चेहरे और अंग विन्यास सहित) और विशिष्ट व्यवहार जो कि किसी परिस्थिति में की



जाने वाली प्रतिक्रिया स्वरूप होता है, को व्यक्तिगत रूप से सार्थक समझा जाता है।”

नोलेन और होकसेमा (2009) के अनुसार— “संवेग के साथ-साथ व्यवहार को भी निर्देशित और सक्रिय किया जा सकता है।”

फिस्ट और रोसेनबर्ग (2015) ने संवेग को— “चेतन अनुभव तथा शरीर विज्ञान में सूक्ष्म परिवर्तन जो की व्यक्तिगत रूप से सार्थक परिस्थितियों में प्रतिक्रिया स्वरूप घटित होता है, के रूप में परिभाषित किया है।”

फेल्डमैन (2015) ने संवेग को परिभाषित करते हुए कहा है कि— “भावनाएँ जिनमें आम तौर पर शारीरिक और संज्ञानात्मक दोनों तत्व होते हैं और जो कि व्यवहार को प्रभावित करते हैं।”

मिश्रा (2016) ने “संवेग को परिवर्तित होने वाली ऐसी अवस्था जिसमें भावनात्मक, संवेगात्मक परिस्थिति में व्यावहारिक रूप से उत्तेजना की अवस्था होती है, जिसके अन्तर्गत बाहरी और आन्तरिक शारीरिक परिवर्तन शामिल होते हैं” के रूप में परिभाषित किया गया।

आवासीय एवं गैर-आवासीय विद्यार्थी—

शैक्षिक वातावरण विद्यार्थियों के शारीरिक, भावनात्मक, संज्ञानात्मक और सामाजिक विकास को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। आवासीय विद्यालय के आवासीय एवं गैर-आवासीय विद्यार्थी शिक्षा के दो अलग-अलग मॉडल का प्रतिनिधित्व करते हैं। जिनमें से प्रत्येक अद्वितीय लाभ और चुनौतियों प्रदान करता है जो विद्यार्थी जीवन के विभिन्न पहलुओं को प्रभावित करते हैं, जिसमें भावनात्मक परिपक्वता, शैक्षिक दुश्चिन्ता और जोखिम लेने की क्षमता शामिल है।

आवासीय विद्यार्थी—

आवासीय विद्यार्थी से तात्पर्य आवासीय विद्यालय में निवास(हॉस्टल) करने एवं शिक्षा ग्रहण करने वाले विद्यार्थियों से है, विद्यालय आवासीय विद्यार्थियों को एक अत्यधिक संरचित वातावरण प्रदान करते हैं जहाँ विद्यार्थी अपने पूरे शैक्षिक वर्ष में अपने परिवारों से दूर विद्यालय परिसर में ही रहते हैं। यह संरचित वातावरण एक व्यापक शैक्षिक अनुभव प्रदान करता है, जो नियंत्रित वातावरण में सामाजिक, सांस्कृतिक और पाठ्येतर गतिविधियों के साथ शिक्षा को एकीकृत करता है। विद्यालय आवासीय विद्यार्थियों को स्वतंत्रता, आत्म-अनुशासन और समुदाय की एक मजबूत भावना विकसित करने के लिए प्रोत्साहित

करता है। सहपाठियों और संकाय विद्यार्थियों के साथ निरंतर बातचीत सामाजिक कौशल और भावनात्मक लचीलापन को बढ़ावा देता है। हालाँकि, पारिवारिक समर्थन की कमी और घर से दूर रहने का दबाव कभी-कभी तनाव और दुश्चिन्ता को बढ़ा सकता है, खासकर उन विद्यार्थियों के लिए जो आवासीय वातावरण में समायोजन के साथ संघर्ष करते हैं।

जोखिम उठाने की क्षमता के संदर्भ में विद्यालय के आवासीय विद्यार्थियों को शिक्षक, सहपाठी वातावरण और विद्यालय परिसर के भीतर नेतृत्व और पहल के अवसरों के कारण अधिक शैक्षिक और सामाजिक जोखिम लेने के लिए प्रोत्साहित कर सकते हैं। विद्यालय के आवासीय विद्यार्थियों की घनिष्ठ प्रकृति अक्सर एक सुरक्षा जाल बनाती है, जहाँ विद्यार्थी नई चुनौतियों का पता लगाने में अधिक सुरक्षित महसूस करते हैं, यह जानते हुए कि समर्थन भी आसानी से उपलब्ध है।

गैर-आवासीय विद्यार्थी—

गैर-आवासीय विद्यार्थी से तात्पर्य ऐसे विद्यार्थियों से है, जिन विद्यालयों में हॉस्टल(निवास) की सुविधा होने बावजूद विद्यार्थी स्थाई निवास नहीं करते हैं। जहाँ विद्यार्थी दिन में कक्षाओं में भाग लेते हैं और उसके बाद अपने घरों को लौट जाते हैं, गतिशीलता का एक अलग व्यवस्था प्रदान करते हैं। ये विद्यालय विद्यार्थियों को अपने परिवारों के साथ घनिष्ठ संबंध बनाए रखने की अनुमति देते हैं, एक स्थाई घरेलू वातावरण प्रदान करते हैं जो भावनात्मक समर्थन और मार्गदर्शन का एक महत्वपूर्ण स्रोत हो सकता है। परिवार के सदस्यों के साथ दैनिक बातचीत शैक्षिक दुश्चिन्ता को कम करने और सुरक्षा की भावना को बढ़ावा देने में मदद कर सकती है, जो विद्यार्थियों की समग्र भलाई के लिए महत्वपूर्ण है।

हालाँकि, विद्यालय के गैर-आवासीय विद्यार्थियों को शैक्षिक समय के अतिरिक्त सामाजिक संपर्क के लिए कम अवसर मिलते हैं, जो संभावित रूप से स्वतंत्रता और सामाजिक जोखिम लेने के विकास को सीमित करता है। विद्यालय के गैर-आवासीय विद्यार्थियों को घर के माहौल और माता-पिता की अपेक्षाओं के आधार पर शैक्षिक दबाव के विभिन्न स्तरों का भी अनुभव हो सकता है। विद्यालय और घरेलू जीवन के बीच संतुलन विद्यार्थियों की जोखिम लेने की इच्छा को प्रभावित कर सकता है, क्योंकि ये माता-पिता की निगरानी से अधिक सतर्क या संयमित



महसूस कर सकते हैं।

आवासीय और गैर-आवासीय माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों के बीच भावनात्मक परिपक्वता, शैक्षणिक दुश्चिन्ता (चिन्ता) और जोखिम लेने की क्षमता के तुलनात्मक अध्ययन से अलग-अलग मनोवैज्ञानिक और विकासात्मक रूपरेखा का पता चलता है। आवासीय विद्यार्थियों में बोर्डिंग स्कूलों के संरचित और स्वतंत्र वातावरण के कारण भावनात्मक परिपक्वता अधिक हो सकती है, जब कि गैर-आवासीय विद्यार्थी विविध घरेलू वातावरण से प्रभावित होते हैं। शैक्षणिक दुश्चिन्ता के स्तर अलग-अलग होते हैं, आवासीय विद्यार्थियों पर उच्च अपेक्षाओं का दबाव महसूस हो सकता है, जब कि गैर-आवासीय विद्यार्थियों को शैक्षणिक और घरेलू जिम्मेदारियों के बीच संतुलन बनाने में संघर्ष करना पड़ सकता है। आवासीय विद्यार्थियों में अक्सर अपने स्कूल के माहौल से प्रोत्साहित होकर जोखिम लेने की अधिक प्रवृत्ति दिखाते हैं, जब कि गैर-आवासीय छात्र सुरक्षात्मक घरेलू प्रभावों के कारण अधिक सावधानी दिखा सकते हैं। लिंग अंतर उल्लेखनीय हैं, माध्यमिक विद्यालय की लड़कियों में आमतौर पर उच्च शैक्षणिक चिन्ता और कम जोखिम लेने वाले व्यवहार का अनुभव होता है, जो दोनों समूहों को प्रभावी ढंग से समर्थन देने के लिए अनुरूप हस्तक्षेप की आवश्यकता को उजागर करता है।

भावनात्मक परिपक्वता से सम्बन्धित अध्ययन—

2021 अल्वारेज और लेडेसमा (2021)

माध्यमिक विद्यालय के छात्रों के बीच भावनात्मक परिपक्वता और शैक्षणिक तनाव के बीच सम्बन्धों की जांच की, जिसका उद्देश्य यह समझना था कि भावनात्मक विकास छात्रों की शैक्षणिक दबावों से निपटने की क्षमता को कैसे प्रभावित करता है। अध्ययन ने भावनात्मक परिपक्वता के स्तरों का आकलन करने और उन्हें शैक्षणिक तनाव के रिपोर्ट किए गए स्तरों के साथ सहसम्बन्धित करने के लिए एक मात्रात्मक दृष्टिकोण का उपयोग किया। निष्कर्षों में एक महत्वपूर्ण नकारात्मक सहसम्बन्ध का खुलासा किया, जो दर्शाता है कि उच्च भावनात्मक परिपक्वता वाले छात्रों ने शैक्षणिक तनाव के निम्न स्तर का अनुभव किया। यह अध्ययन बताता है कि भावनात्मक परिपक्वता को बढ़ावा देना छात्रों को शैक्षणिक तनाव का प्रबन्धन करने में मदद करने के लिए एक प्रभावी रणनीति हो सकती है, जो छात्रों की भलाई और शैक्षणिक प्रदर्शन

को बढ़ाने के लिए माध्यमिक शिक्षा में भावनात्मक विकास कार्यक्रमों को शामिल करने के महत्व को रेखांकित करता है।

2022 फोर्स और चटर्जी (2021) हाईस्कूल के छात्रों के बीच भावनात्मक परिपक्वता, शैक्षणिक चिन्ता और तनाव प्रबन्धन के बीच परस्पर क्रिया की जांच की। उनके अध्ययन का उद्देश्य यह समझना था कि भावनात्मक परिपक्वता छात्रों के शैक्षणिक चिन्ता के अनुभवों और तनाव को प्रतिबन्धित करने की उनकी क्षमता को कैसे प्रभावित करती है। शोध के निष्कर्षों ने संकेत दिया कि उच्च भावनात्मक परिपक्वता वाले छात्रों ने शैक्षणिक चिन्ता के निम्न स्तर का अनुभव किया और तनाव को प्रतिबन्धित करने में बेहतर थे। लेखकों का तर्क है कि हाईस्कूल के छात्रों में भावनात्मक परिपक्वता को बढ़ावा देने से तनाव प्रबन्धन में सुधार और चिन्ता के स्तर में कमी आ सकती है, इसलिए हाईस्कूल के पाठ्यक्रम में भावनात्मक विकास कार्यक्रमों को शामिल करने की वकालत की जाती है।

2024 सराफ, डॉ. संगीता और वर्मा, डॉ. चंकी राज (2024) विद्यालयों में विद्यार्थियों को अनेक प्रकार के नियमों का समय के अनुसार पालन करना अनिवार्य होता है। जैसे— स्कूल समय पर पहुँचना, शिक्षकों की आज्ञा मानना, सबसेमित्र पूर्णव्यवहार एवं सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार करना एवं शांति के साथ चलना फिरना, समय पर खेलकूद एवं अन्य कार्यक्रमों में भाग लेना आदि इन सभी बातों का पालन करना विद्यालयों की स्थापना का प्रमुख उद्देश्य एवं विद्यार्थियों की समस्त शक्तियों का विकास करते हुए उसका सर्वांगीण विकास करना होता है। शिक्षा की परिभाषा व्यापक अर्थ में शिक्षा एक ऐसी प्रक्रिया है जो आजीवन चलती रहती है और जीवन के प्रायः प्रत्येक अनुभव से उसके ज्ञान भण्डार में वृद्धि होती है। शिक्षा से मेरा भी प्रायः बाल कथा मनुष्य में निहित शारीरिक, मानसिक एवं आत्मिक श्रेष्ठ शक्तियों का सर्वांगीण विकास है। सर्वोच्च शिक्षा वही है जो सम्पूर्ण दृष्टि से हमारे जीवन का सामंजस्य सीपित करती है। शिक्षा से मेरा तात्पर्य बालक और मनुष्य के शरीर, मन तथा आत्मा की सर्वोच्च सर्वांगीण एवं उत्कृष्ट विकास है। मनुष्य के अन्दर को सम्पूर्ण रूप से जानना या अभिव्यक्त करना ही शिक्षा कहलाती है। शिक्षा मानव की सम्पूर्ण शक्तियों का प्रगतिशील सामंजस्यपूर्ण और प्राकृतिक विकास से होता है।



शोध अध्ययन का महत्व—

21वीं सदी संचार प्रणालियों के विकास का युग है। वैश्वीकरण और प्रौद्योगिकी के दुष्परिणाम हमारे समाज और सोचने के तरीके को नया रूप दे रहे हैं। इसलिए, बदलते समाज के लिए अगली पीढ़ी को तैयार करने का यह एक आवश्यक समय है। इस आदर्श की प्राप्ति के लिए हम शिक्षा को एक ऐसे उपकरण के रूप में उपयोग कर सकते हैं जो प्राचीन समाज और वर्तमान समाज के बीच की खाई को पाटता है। शिक्षा वास्तव में समाज में उपलब्धता लाने का सबसे अच्छा साधन है। यह नश्वर संभावनाओं के उत्थान में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। प्रत्येक देश बदलते समय की चुनौतियों का सामना करने के लिए अपनी शिक्षा प्रक्रिया विकसित करता है। भारत जैसे विकासशील देश में शिक्षा व्यवस्था लोगों और मानव जाति के बेहतर भविष्य के लिए इतिहास और वर्तमान की कमाई का उपयोग करना चाहिए। आधुनिक भारतीय समाज एकल परिवारों को स्वीकार करता है जहाँ अधिकांश माता-पिता कामकाजी होते हैं। ऐसे में उनके लिए अपने बच्चों की देखभाल करना एक बड़ी समस्या है। वे एक सुरक्षित जगह चाहते हैं जहाँ उनके बच्चे अच्छी आदतों, शैक्षिक प्रदर्शन, भावात्मक परिपक्वता, अनुकूलन शक्ति और सर्वांगीण विकास के साथ अच्छी शैक्षिक उपलब्धि के साथ बड़े हों।

किशोरावस्था को बाल्यावस्था एवं प्रौढ़ावस्था के मध्य का सन्धिकाल माना जाता है। किशोरावस्था में अत्यधिक भावात्मक उथल-पुथल के कारण के जीवन का सबसे कठिनकाल भी माना गया है। किशोर शारीरिक एवं मानसिक रूप से बहुत ही शक्तिशाली एवं सक्रिय होते हैं। माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत् विद्यार्थियों की आयु प्रायः 14 से 18 वर्ष के मध्य होती है। माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों को भावात्मक अस्थिरता, तनाव आदि का सामना करना पड़ता है। क्योंकि किशोर विद्यार्थी शैक्षिक दुश्चिन्ता, शैक्षिक उपलब्धि के प्रति, समाज में स्थान एवं कैरियर के प्रति चिन्तित रहते हैं। यदि किशोरों का भावात्मक विकास संतुलित ढंग से नहीं होता है, तो वह सही निर्णय लेने में सक्षम नहीं हो पाते हैं।

किशोरों में वांछित आदतों का निर्माण करने, अवांछित आदतों को दूर करने तथा सन्तुलित व्यक्तित्व का निर्माण करने के लिए मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से प्रस्तुत अध्ययन का विशेष महत्व है। किशोरों की समस्याओं की पहचान करके उनकी भावात्मक परिपक्वता, शैक्षिक

दुश्चिन्ता एवं जोखिम लेने की क्षमता के अनुसार लक्ष्य निर्धारण में उनका मार्गदर्शन किया जा सकता है।

प्रस्तुत शोध अध्ययन निम्नांकित प्रकार से भी महत्वपूर्ण है—

• किशोर-किशोरियों के शैक्षिक प्रदर्शन में विकासात्मक सुधार के अवसर प्रदान करना।

• विद्यार्थियों के भावात्मक परिपक्वता को सही दिशा में विकसित होने के अवसर प्रदान करना।

• विद्यार्थियों की शैक्षिक चिन्ता को सही दिशा में विकसित होने के अवसर प्रदान करना।

• कक्षा वातावरण के सुधार में सहायता किया जा सकता है।

• विद्यार्थियों को उचित मार्गदर्शन, प्रशिक्षण एवं सहयोग दिया जा सकता है।

• शिक्षक, अभिभावक एवं विद्यार्थियों के बीच संवाद को बढ़ाया जा सकता है।

• विद्यार्थियों की आवश्यकताओं, रुचि एवं क्षमताओं के अनुसार पाठ्यक्रम में विविधता एवं लचीलापन लाया जा सकता है।

• विद्यार्थियों में सकारात्मक जोखिम लेने की क्षमता के विकास में उन्हें सहायता दी जा सकती है जिससे उनका आत्मविश्वास बढ़े और वे स्वयं से सम्बन्धित सही निर्णय ले सकें।

• विद्यार्थियों को अपनी योग्यता एवं क्षमता के अनुसार लक्ष्यों के निर्धारण में सहायता की जा सकती है।

• विद्यालयों के वातावरण का मूल्यांकन एवं सुधार के लिए प्रोत्साहित किया जा सकता है।

इस अध्ययन के निष्कर्ष शिक्षकों, अभिभावकों और नीति निर्माताओं को भावनात्मक स्थिरता को बढ़ावा देने, शैक्षिक दुश्चिन्ता को कम करने और सकारात्मक जोखिम लेने को प्रोत्साहित करने के लिए आवश्यक सहायता प्रणालियों के बारे में सूचित करने में सहायक होंगे। ऐसा करने से, यह माध्यमिक शिक्षा के लिए एक अधिक व्यापक और प्रभावी दृष्टिकोण में योगदान देगा, अंततः छात्रों के समग्र विकास में सहायता करेगा और उन्हें भविष्य की शैक्षिक और जीवन चुनौतियों के लिए तैयार करेगा।

सर्वेक्षण के अध्ययन से प्राप्त निष्कर्षों का विश्लेषण—

शोध कार्य से सम्बन्धित समीक्षाओं का शोधार्थी द्वारा आलोचनात्मक विश्लेषण किया है। उपर्युक्त सम्बन्धित



साहित्य की विवेचना से प्राप्त निष्कर्ष के विश्लेषण द्वारा यह जानने में सहायता मिलती है कि प्रस्तुत शोध अध्ययन के क्षेत्र में शोधार्थियों द्वारा पहले से क्या किया जा चुका है एवं प्रस्तुत शोध अध्ययन के क्षेत्र में वर्तमान में क्या करने की आवश्यकता है जिससे प्रस्तुत शोध अध्ययन के उद्देश्यों की विद्यार्थी, व्यक्ति, विद्यालय संगठन एवं समाज के लिए प्रासंगिक सिद्ध हो सके।

अल्वारेज और लेडेसमा (2021) निष्कर्षों ने एक महत्वपूर्ण नकारात्मक सहसम्बन्ध को ज्ञात किया, जो दर्शाता है कि उच्च भावनात्मक परिपक्वता वाले छात्रों ने शैक्षणिक तनाव के निम्न स्तर का अनुभव किया। **शर्मा, सोनल (2021)** के अनुसार वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालय के छात्रों की भावनात्मक परिपक्वता और शैक्षिक उपलब्धि के बीच एक महत्वपूर्ण सकारात्मक रेखिक सम्बन्ध पाया गया। वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालयों के सरकारी स्कूलों में पढ़ने वाले छात्रों का भावनात्मक परिपक्वता का स्तर निजी स्कूलों में पढ़ने वाले छात्रों की तुलना में अधिक था। ग्रामीण वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों में शहरी वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों की तुलना में भावनात्मक परिपक्वता का स्तर अधिक था। **मिस्ट्री और कलिता (2019)** के अनुसार उच्च भावनात्मक परिपक्वता वाले किशोर अकादमिक रूप से बेहतर प्रदर्शन करते हैं। गौतम, हेमलता (2018) ने निष्कर्ष निकाला गया कि विभिन्न प्रकार के विद्यालयों में से आदर्श विद्यालयों के शिक्षकों-शिक्षिकाओं में संवेगात्मक परिपक्वता का स्तर उच्च है। **गुप्ता और सहगल (2018)** ने निष्कर्षों से पता चला कि उच्च भावनात्मक परिपक्वता वाले छात्रों ने काफी बेहतर शैक्षणिक परिणाम प्रदर्शित किए। **डेपामोली और स्वीनी (2018)** ने निष्कर्षों से पता चला कि उच्च भावनात्मक परिपक्वता वाले छात्रों ने काफी बेहतर शैक्षणिक परिणाम प्रदर्शित किए। यह सम्बन्ध यह बताता है कि भावनात्मक परिपक्वता तनाव को प्रतिबन्धित करने, ध्यान केन्द्रित करने और सूचित निर्णय लेने में सहायता करती है, जो शैक्षणिक सफलता के लिए महत्वपूर्ण है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. अस्थाना विपिन (2007), मनोविज्ञान और शिक्षा में सांख्यिकी, आगरा, विनोद पुस्तक मंदिर।
2. अस्थाना विपिन व अस्थाना श्वेता (2009), मनोविज्ञान और शिक्षा में मापन एवं मूल्यांकन, पन्द्रहवाँ संस्करण, आगरा, विनोद पुस्तक मंदिर।

3. अग्रवाल जे. सी. (1991), एजूकेशनल रिसर्च एण्ड इन्ट्रोडक्शन, नयी दिल्ली, आर्या बुक डिपो।
4. करलिंगर, एफ. एन. (2016), फाउन्डेशन ऑफ बिहैवियरल रिसर्च, दिल्ली, सुरजीत पब्लिकेशन्स।
5. कपिल एस. के. (2010), अनुसंधान विधियाँ, आगरा एच. पी. भार्गव बुक हाउस।
6. कपिल एस. के. (2010), अनुसंधान विधियाँ, चौदहवाँ संस्करण, आगरा एच. पी. भार्गव बुक हाउस।
7. कोठारी सी. आर. (2007), रिसर्च मेथडोलॉजी : मैथड एण्ड टैक्निस, सेकेण्ड एडिशन, नयी दिल्ली, न्यू एज इन्टरनेशनल पब्लिशर्स।
8. कौल लाकेश (2009), शैक्षिक अनुसंधान की कार्यप्रणाली, नयी दिल्ली, विकास पब्लिशिंग हाउस प्राइवेट लिमिटेड।
9. बेस्ट जे. डब्ल्यू., काहन जे. वी. एवं झा अरविन्द के. (2017), रिसर्च इन एजूकेशन (दसवाँ संस्करण), नोयडा : पियर्सन।
10. गैरेट एच. ई. (1981), स्टेटिक्स इन साइकोलॉजी एण्ड एजूकेशन बाम्बे : वकील्स, फेफर एण्ड साइमन लिमिटेड।
11. गुप्ता एस. पी. एवं गुप्ता अलका (2012), उच्चतर शिक्षा मनोविज्ञान, इलाहाबाद : शारदा पुस्तक भवन।
12. गुप्ता एस. पी. (2011), अनुसंधान संदर्शिका, इलाहाबाद, शारदा पुस्तक भवन



उत्तर-आधुनिकता और नारीवाद स्त्री अनुभव की विविधता: भिन्नता और प्रतिरोध का विमर्श



— डॉ. पूनम अस्थाना
असिस्टेंट प्रोफेसर —
समाजशास्त्र विभाग,
कालीचरन (पी.जी.) कालेज,
लखनऊ-226003 (उत्तर प्रदेश)

ई. मेल—
poonamasthana065@gmail.com

सारांश

उत्तर-आधुनिक नारीवाद नारीवादी चिंतन की एक महत्वपूर्ण बौद्धिक क्रांति है। यह स्त्री-अनुभव को एकल नहीं, बल्कि विविध, जटिल और बहुआयामी मानता है। इसके अनुसार— स्त्री की पहचान किसी एक सार्वभौमिक श्रेणी से नहीं, बल्कि उसकी सामाजिक-सांस्कृतिक स्थितियों से निर्मित होती है। इस दृष्टि से यह विमर्श न केवल "समानता" की माँग करता है, बल्कि "भिन्नता" की स्वीकृति भी चाहता है क्योंकि सच्ची समानता तभी संभव है जब विविधताओं को स्वीकार किया जाए।

परिचय (Introduction)-

उत्तर-आधुनिकता (Postmodernity) आधुनिकता (Modernity) की उस विचारधारा का प्रतिरोध है। जो एकल सत्य (Absolute Truth), वस्तुनिष्ठता (Objectivity) और सार्वभौमिक प्रगति (Universal Progress) जैसे सिद्धान्तों पर आधारित थी। उत्तर-आधुनिक चिंतन 20वीं सदी के उत्तरार्ध में उस समय उभरा जब यह अनुभव किया गया कि आधुनिकता द्वारा प्रस्तुत विकास, ज्ञान और तर्क की अवधारणाएँ वास्तव में सत्ता (Power) और प्रभुत्व (Domination) के औजार बन चुकी हैं।

दार्शनिक जीन-फ्रांसुआ लियोतार (Jean & Francois Lyotard) ने अपनी प्रसिद्ध कृति The Postmodern Condition (1979) में कहा कि उत्तर-आधुनिकता Grand Narratives अर्थात् महान आख्यानों (जैसे प्रगति, विज्ञान, तर्क या मुक्ति के विचार) को अस्वीकार करती है, क्योंकि ये आख्यान अपने भीतर सत्ता की संरचना को बनाए रखते हैं। मिशेल फूको (Michel Foucault) ने सत्ता और ज्ञान के पारस्परिक सम्बन्धों को रेखांकित करते हुए यह स्पष्ट किया कि ज्ञान वस्तुनिष्ठ नहीं होता, बल्कि हर ज्ञान सत्ता संरचना के भीतर से उत्पन्न होता है।

इसी दार्शनिक पृष्ठभूमि ने नारीवाद (Feminism) के भीतर भी एक नई विचारधारा उत्तर-आधुनिक नारीवाद (Postmodern Feminism) — को जन्म दिया। यह नारीवाद के पूर्ववर्ती चरणों जैसे उदार नारीवाद (Liberal Feminism) और मार्क्सवादी नारीवाद (Marxist Feminism) की सीमाओं को चुनौती देता है। उत्तर-आधुनिक नारीवाद इस धारणा का विरोध करता है कि "स्त्री" (Woman) एक एकल, सार्वभौमिक, और समान अनुभव का प्रतिनिधित्व करती है। इसके अनुसार स्त्री की पहचान वर्ग (Class), जाति (Caste), नस्ल (Race), धर्म (Religion), लैंगिकता (Sexuality) और संस्कृति (Culture) जैसे अनेक कारकों से निर्मित होती है।

उत्तर-आधुनिकता का सैद्धांतिक आधार

(Theoretical Foundation of Postmodernity)-



उत्तर-आधुनिकता का दर्शन वस्तुतः आधुनिकता की "ग्रैंड नैरेटिव" पर आधारित बौद्धिक परम्पराओं के विरुद्ध एक प्रतिक्रिया है। यह "सत्य" और "वास्तविकता" को स्थिर या सार्वभौमिक नहीं मानता, बल्कि उन्हें सामाजिक, ऐतिहासिक और सांस्कृतिक सापेक्षताओं (Relativities) का परिणाम मानता है। जैक्स देरिदा (Jacques Derrida) ने Deconstruction का सिद्धान्त प्रस्तुत किया, जिसके अनुसार— हर पाठ, हर विचार और हर अर्थ अपने भीतर कई परतें समेटे होता है। कोई भी अर्थ स्थायी या एकमात्र नहीं होता।

फूको के "Power/Knowledge" सिद्धान्त के अनुसार— समाज में जो भी सत्य माना जाता है, वह सत्ता के ढांचे द्वारा नियंत्रित होता है। उत्तर-आधुनिक चिंतन के ये पहलू नारीवाद के लिए अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुए क्योंकि नारीवाद भी पितृसत्ता (Patriarchy) के उस प्रभुत्वशाली ज्ञान-संरचना को तोड़ना चाहता है जो स्त्री को "अन्य" (Other) के रूप में परिभाषित करती है।

उत्तर-आधुनिक नारीवाद का उद्भव

(Emergence of Postmodern Feminism)-

1980 के दशक में उत्तर-आधुनिक नारीवाद एक सशक्त बौद्धिक आन्दोलन के रूप में उभरा। जूडिथ बटलर (Judith Butler), डोना हारावे (Donna Haraway), लूस इरिगारे (Luce Irigaray), जूलिया क्रिस्टेवा (Julia Kristeva), गायत्री चक्रवर्ती स्पिवक (Gayatri Chakravorty Spivak) और बेल हुक्स (Bell Hooks) जैसी विचारकाओं ने इस विमर्श को नई दिशा दी।

इन विचारकों का मानना था कि पारम्परिक नारीवाद अक्सर "स्त्री" की एक समान परिभाषा प्रस्तुत करता है। जैसे— कि सभी महिलाएँ एक जैसी हैं और सभी का उत्पीड़न एक समान है। परन्तु यह दृष्टिकोण पश्चिमी, श्वेत, मध्यमवर्गीय महिला के अनुभव को "सार्वभौमिक" (Universal) मान लेता है, जिससे अन्य महिलाओं की वास्तविकताएँ जैसे अश्वेत, दलित, या तीसरी दुनिया की महिलाएँ अदृश्य हो जाती हैं।

उत्तर-आधुनिक नारीवाद इस एकरूपता को चुनौती देता है और यह कहता है कि "स्त्री-अनुभव" (Female Experience) बहुआयामी है। यह अनुभव भौगोलिक, सांस्कृतिक, और सामाजिक संदर्भों में भिन्न-भिन्न रूपों में अभिव्यक्त होता है।

सार्वभौमिक स्त्री-अनुभव की आलोचना

(Critique of Universal Female Experience)-

उत्तर-आधुनिक नारीवाद का सबसे प्रमुख तर्क

यही है कि "Universal Womanhood" जैसी कोई वस्तु नहीं होती। नारीवाद की पूर्ववर्ती धाराएँ प्रायः इस धारणा पर आधारित थीं कि महिलाएँ एक समान वर्ग हैं जिनका उत्पीड़न समान कारणों से होता है।

गायत्री स्पिवक ने अपनी प्रसिद्ध कृति Can the Subaltern Speak (1988) में बताया कि "Subaltern" यानी हाशिये पर स्थित स्त्रियाँ मुख्यधारा के विमर्श में बोल नहीं पातीं क्योंकि उनका स्वर पितृसत्तात्मक और औपनिवेशिक शक्ति-संरचनाओं द्वारा दबा दिया जाता है। इस प्रकार, पश्चिमी नारीवाद "स्त्री" की एकल परिभाषा देकर अनजाने में उसी सत्ता को दोहराता है जिसका वह विरोध करता है।

उत्तर-आधुनिक नारीवाद इस तरह "Universalism" का खण्डन करते हुए "Particularism" की ओर झुकता है। यानी हर स्त्री का अनुभव उसके सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक संदर्भों में अद्वितीय होता है।

ग्रैंड नैरेटिव्स की आलोचना

(Critique of Grand Narratives)-

लियोतार के अनुसार— उत्तर-आधुनिकता का मूल भाव "Incredulity toward Metanarratives" है— अर्थात् महान आख्यानो के प्रति अविश्वास। नारीवाद में यह विचार उस समय प्रासंगिक हुआ जब यह महसूस किया गया कि "Womens Liberation" स्वयं एक ग्रैंड नैरेटिव बन गया है जो मानता है कि सभी महिलाओं की मुक्ति का मार्ग एक समान है।

परन्तु वास्तविकता यह है कि किसी महिला के लिए "मुक्ति" का अर्थ सामाजिक परिस्थिति के अनुसार बदलता है। दलित स्त्री के लिए यह जाति से मुक्ति हो सकती है, आदिवासी स्त्री के लिए भूमि और संसाधनों पर अधिकार, जब कि शहरी स्त्री के लिए यह लैंगिक समानता या आत्मनिर्भरता का प्रश्न हो सकता है।

उत्तर-आधुनिक नारीवाद इस विविधता को स्वीकार करता है और यह कहता है कि "एक ही समाधान सबके लिए" की अवधारणा पितृसत्ता की ही पुनरावृत्ति है।

लिंग श्रेणियों का पुनर्निर्माण

(Reconstruction of Gender Categories)-

जूडिथ बटलर की Gender Trouble (1990) उत्तर-आधुनिक नारीवाद की आधारभूत कृति है। बटलर कहती हैं कि "Gender is a performance" — अर्थात् लिंग कोई स्थायी जैविक या प्राकृतिक तथ्य नहीं बल्कि एक सामाजिक प्रदर्शन (Social Performance) है।



हम अपने व्यवहार, भाषा, वस्त्र, और भूमिकाओं के माध्यम से "पुरुष" या "स्त्री" बनते हैं। ये दोहराव (Repetitions) ही लिंग की श्रेणियों को स्थायित्व का भ्रम देते हैं। इस प्रकार, लिंग एक तरल (Fluid) और निर्मित (Constructed) अवधारणा है।

इस दृष्टिकोण से "पुरुष" और "स्त्री" जैसी श्रेणियाँ पितृसत्तात्मक समाज द्वारा गढ़ी गई सीमाएँ हैं जिन्हें विखण्डित (Deconstruct) करना आवश्यक है।

भिन्नता और विविधता का विमर्श

(Discourse of Difference and Diversity)-

उत्तर-आधुनिक नारीवाद "Equality" से अधिक "Difference" को महत्व देता है। फ्रांसीसी विचारक लूस इरिगारे ने कहा कि स्त्रियों को समानता नहीं, बल्कि अपनी भिन्नता की स्वीकृति चाहिए।

भिन्नता का यह विमर्श स्त्री के विशिष्ट अनुभवों को महत्व देता है। जैसे- मातृत्व, भावनात्मकता, देखभाल, और संवेदनशीलता, जिन्हें पितृसत्ता ने अक्सर "कमजोरी" के रूप में देखा। उत्तर-आधुनिक नारीवाद कहता है कि स्त्री के इन अनुभवों को भी शक्ति और ज्ञान के स्रोत के रूप में देखा जाना चाहिए।

उत्तर-आधुनिक नारीवाद और उपनिवेशोत्तर विमर्श (Postmodern Feminism & Postcolonial Discourse)-

उत्तर-आधुनिक नारीवाद और उपनिवेशोत्तर नारीवाद (Postcolonial Feminism) के बीच गहरा सम्बन्ध है। स्पिवक, चन्द्रा तलपड़े मोहंती और ओमोलारा ओगुनये जैसे विचारकों ने दिखाया कि पश्चिमी नारीवाद तीसरी दुनिया की महिलाओं को "Voiceless Victim" की तरह प्रस्तुत करता है।

मोहंती ने Under Western Eyes (1984) में कहा कि पश्चिमी नारीवाद ने तीसरी दुनिया की महिलाओं को एक समान और असहाय वर्ग के रूप में चित्रित किया, जबकि वास्तविकता में उनके अनुभव विविध और संदर्भानुसार हैं।

उत्तर-आधुनिक नारीवाद इस आलोचना को अपनाते हुए कहता है कि किसी भी विमर्श को "स्थानिकता" (Context) के साथ समझना चाहिए।

आलोचनात्मक मूल्यांकन (Critical Evaluation)-

उत्तर-आधुनिक नारीवाद की सबसे बड़ी उपलब्धि यह है कि इसने नारीवाद को अधिक समावेशी (Inclusive) और बहुलतावादी (Pluralistic) बनाया। यह स्त्रियों के बीच के भेदों - वर्ग, जाति, लैंगिकता, धर्म को स्वीकार करता है।

हालाँकि, इसकी आलोचना भी की गई है। कुछ विद्वानों का मत है कि उत्तर-आधुनिकता के अत्यधिक सापेक्षवाद (Relativism) के कारण यह राजनीतिक क्रियाशीलता (Political Agency) को कमजोर कर देती है। यदि हर अनुभव अद्वितीय है, तो सामूहिक संघर्ष की एकता कैसे संभव होगी?

इसके बावजूद, उत्तर-आधुनिक नारीवाद ने नारीवादी विमर्श को नई बौद्धिक गहराई दी है। यह न केवल पितृसत्ता की सत्ता-संरचनाओं को चुनौती देता है, बल्कि नारीवाद के भीतर छिपे एकरूपता-वाद (Essentialism) को भी प्रश्नांकित करता है।

निष्कर्ष (Conclusion)-

उत्तर-आधुनिक नारीवाद नारीवादी चिंतन की एक महत्वपूर्ण बौद्धिक क्रांति है। यह स्त्री-अनुभव को एकल नहीं, बल्कि विविध, जटिल और बहुआयामी मानता है। इसके अनुसार स्त्री की पहचान किसी एक सार्वभौमिक श्रेणी से नहीं, बल्कि उसकी सामाजिक-सांस्कृतिक स्थितियों से निर्मित होती है।

इस दृष्टि से यह विमर्श न केवल "समानता" की माँग करता है, बल्कि "भिन्नता" की स्वीकृति भी चाहता है क्योंकि सच्ची समानता तभी संभव है जब विविधताओं को स्वीकार किया जाए।

सन्दर्भ सूची (References)

1. Lyotard, J-F. (1979). The Postmodern Condition : A Report on Knowledge. University of Minnesota Press.
2. Butler, Judith. (1990). Gender Trouble: Feminism and the Subversion of Identity. Routledge.
3. Spivak, Gayatri Chakravorty. (1988). Can the Subaltern Speak? Macmillan.
4. Foucault, Michel. (1980). Power/Knowledge : Selected Interviews and Other Writings 1972-1977. Pantheon Books.
5. Haraway, Donna. (1985). A Cyborg Manifesto: Science, Technology and Socialist-Feminism in the Late Twentieth Century. Routledge.
6. Irigaray, Luce. (1985). This Sex Which Is Not One. Cornell University Press.
7. Mohanty, Chandra Talpade (1984), Under Western Eyes : Feminist Scholarship and Colonial Discourses, Boundary 2.
8. Hooks, Bell. (1984). Feminist Theory : From Margin to Center, South End Press.
9. Derrida, Jacques, (1978), Of Grammatology, Johns Hopkins University Press.
10. Kristeva, Julia, (1984), Revolution in Poetic Language, Columbia University Press.



जनपद कन्नौज के उत्तरोत्तर विकास में कृषि का योगदान



— राजबहादुर सिंह
शोधार्थी — भूगोल विभाग,
नामांकन संख्या—
MSDU242140004002,
मेजर एस. डी. सिंह यूनीवर्सिटी,
फतेहगढ़, फर्रुखाबाद—209601
(उत्तर प्रदेश)

ई-मेल:
rajbahadursingh9455521127@g
mail.com



शोध पर्यवेक्षक—
— डॉ. ललित कुमार यादव
एसोसिएट प्रोफेसर—भूगोल विभाग,
मेजर एस. डी. सिंह विश्वविद्यालय,
फतेहगढ़, फर्रुखाबाद—209601
(उत्तर प्रदेश)

ई-मेल:
lalitkryadav11@gmail.com

सारांश

जनसंख्या एवं भूमि संसाधन का अन्योन्याश्रय सम्बन्ध होता है। वर्तमान समय में निरन्तर बढ़ती हुई जनसंख्या के फलस्वरूप जनसंख्या एवं भूमि संसाधनों का अन्तर दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। इस प्रकार निरन्तर बढ़ती हुई जनसंख्या की खाद्यान्न आवश्यकताओं की पूर्ति सीमित भूमि संसाधनों द्वारा कर पाना एक भयावह समस्या है और इसके निवारण हेतु आवश्यक है कि विभिन्न क्षेत्रों के कृषि विकासस्तर का आकलन किया जाये। कृषि विकासस्तर को ज्ञात करने के लिए मानव द्वारा फसलों के उत्पादन में किये गये प्रयास एवं परिश्रम आदि को सम्मिलित किया जाता है। अतः जनसंख्या एवं खाद्य संसाधनों में सन्तुलन बनाये रखने एवं उनके नियोजन के लिये कृषि विकासस्तर का अध्ययन अत्यावश्यक है।

प्रस्तावना —

कन्नौज जनपद भी एक कृषि प्रधान क्षेत्र है। यहां की अधिकांश जनसंख्या लगभग 78 प्रतिशत प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से कृषि के माध्यम से ही अपना जीविकोपार्जन करती है। जनपद में लगभग 346322 टन अन्न उपजाया जाता है, जो लगभग समस्त खाद्यान्न हेतु प्रयोग कर लिया जाता है। इसके अतिरिक्त यहां के निवासी कृषि से उत्पादित व्यापारिक पदार्थों एवं शाक-सब्जी को बेंचकर मुद्रा प्राप्त करते हैं, जिससे वे अपनी अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं। पशु-पक्षी भी जनपद का एक महत्वपूर्ण अंग है, इनका जीवन भी अधिकांश रूप से कृषि पर ही आश्रित है। अतः कृषि संसाधन मनुष्य की आवश्यकताओं की पूर्ति के साथ-साथ अन्य खाद्य संसाधनों के उत्पादन में भी सहायता प्रदान करती है।

जनपद का भौगोलिक परिचय —

कन्नौज जनपद भौगोलिक दृष्टि से गंगा-यमुना के निचले दोआब का भाग है तथा यह 26° 40' उत्तर से 27° 5' उत्तरी अक्षांशों एवं 77° 25' से 80° 1' पूर्वी देशान्तरों के मध्य विस्तृत है। सम्पूर्ण जनपद का कुल क्षेत्रफल 2129.21 वर्ग किमी. है एवं जनपद की जनसंख्या 2011 की जनगणना के अनुसार 1375775 व्यक्ति है। प्रशासनिक दृष्टिकोण से जनपद कन्नौज कानपुर मण्डल में स्थित है। इसके उत्तर में फर्रुखाबाद, पूर्व में हरदोई, दक्षिण-पूर्व में कानपुर देहात, दक्षिण में औरैया तथा पश्चिम में मैनपुरी जनपद स्थित है। सम्पूर्ण जनपद तीन तहसीलों कन्नौज, छिबरामऊ एवं तिर्वा तथा आठ विकासखण्डों में क्रमशः छिबरामऊ, तालग्राम, सौरिख, गुगरापुर, जलालाबाद, कन्नौज, उमर्दा एवं हसेरन में विभक्त है।

कन्नौज जनपद गंगा नदी के दाहिने किनारे पर स्थित है।



सारणी क्रमांक 1

कन्नौज जनपद : शुद्ध बोये क्षेत्रफल का परिवर्तित स्वरूप
(वर्ष 2005-06 से 2020-21)

क्र. सं.	विकासखण्ड का नाम	शुद्ध बोया गया क्षेत्रफल (प्रतिशत में)			
		2005-06	2010-11	2015-16	2020-21
1	छिबरामऊ	74.01	73.12	73.10	72.23
2	तालग्राम	67.40	73.09	72.12	74.17
3	सौरिख	63.77	66.82	69.32	67.72
4	हसेरन	64.75	60.68	56.81	62.46
5	जलालाबाद	67.40	77.51	62.34	78.38
6	कन्नौज	67.62	70.26	73.85	74.57
7	उमर्दा	49.46	61.37	63.35	63.08
8	गुगरापुर	—	—	68.02	73.36
योग जनपद		64.92	68.98	68.36	69.27

स्रोत : भूराजस्व विभाग, जनपद कन्नौज

अध्ययन क्षेत्र से होकर जाने वाली सबसे प्राचीन सड़क जी. टी. रोड वर्तमान नगरीय सीमा (सरायमीरा) से होकर गुजरती है। सरायमीरा मुख्यतः कन्नौज नगर से 2 किमी. दूर है। कन्नौज जनपद सड़क तथा रेलमार्गों द्वारा एक ओर कानपुर जनपद तो दूसरी ओर फर्रुखाबाद जनपद से जुड़ा हुआ है। कन्नौज जनपद से कानपुर 80 किमी. दूर है एवं फर्रुखाबाद 60 किमी. की दूरी पर स्थित है। कन्नौज नगर का प्राचीन प्रचलित नाम कान्यकुब्ज है और यह इसी नाम से महान विद्वानों के महाकाव्य तथा पौराणिक ग्रन्थों में वर्णित है। कन्नौज का उद्भव ईसा से लगभग दो शताब्दी पूर्व हुआ था।¹ आठवीं शताब्दी में कन्नौज का सबसे प्रसिद्ध राजा हर्षवर्धन हुआ, जिसने साम्राज्य को पुनः विकसित किया।³

व्याख्या —

जनपद कन्नौज में वर्ष 2020-21 में कुल प्रतिवेदित क्षेत्रफल के 64.92 प्रतिशत क्षेत्रफल पर शुद्ध बोया गया क्षेत्रफल था। सर्वाधिक बोया गया क्षेत्रफल विकासखण्ड छिबरामऊ (74.01 प्रतिशत), न्यूनतम क्षेत्रफल 49.46 प्रतिशत उमर्दा विकासखण्ड में है। वर्ष 2010-11 में शुद्ध बोया गया क्षेत्रफल बढ़कर 68.98 प्रतिशत हो गया। विकासखण्डवार देखा जाये तो अधिकतम बोया गया क्षेत्रफल जलालाबाद (77.51 प्रतिशत) तथा न्यूनतम

क्षेत्रफल 66.68 प्रतिशत हसेरन विकासखण्ड में है। वर्ष 2015-16 में शुद्ध बोया गया क्षेत्रफल थोड़ा घटकर 68.36 प्रतिशत रह गया। विकासखण्ड के क्रम से देखा जाये तो अधिकतम 73.85 प्रतिशत शुद्ध बोया गया क्षेत्रफल कन्नौज विकासखण्ड एवं न्यूनतम क्षेत्रफल 56.81 प्रतिशत हसेरन विकासखण्ड में है। वर्ष 2020-21 में जनपद स्तर पर शुद्ध बोया गया क्षेत्रफल बढ़कर 69.27 प्रतिशत हो गया। विकासखण्ड स्तर पर सर्वाधिक बोया गया क्षेत्रफल जलालाबाद (73.38 प्रतिशत) एवं न्यूनतम हसेरन (62.46 प्रतिशत) है। विस्तृत विवरण हेतु सारणी 1 प्रस्तुत है। शुद्ध बोया गया क्षेत्रफल यह दर्शाता है कि जनपद में भूमि सुधार करके कृषि योग्य भूमि को बढ़ाया जा रहा है। इससे सिद्ध होता है कि कृषक अपनी उन्नति हेतु वैज्ञानिक कृषि विधियों को अपना रहे हैं।⁴ (सारणी क्रमांक - 1 देखें)

कृषि भूमि उपयोग —

कन्नौज जनपद में कृषि भूमि उपयोग के अन्तर्गत शुद्ध बोया गया क्षेत्रफल 1,44,755 हेक्टेयर (63.39 प्रतिशत) है। जनपद में एक बार से अधिक बोया गया क्षेत्रफल 83,599 हेक्टेयर (36.61 प्रतिशत) है। अतः सकल बोये गये क्षेत्र के आधार पर रबी फसल 130996 हेक्टेयर (57.37 प्रतिशत), खरीफ फसल 84,640 हेक्टेयर (37.07 प्रतिशत) एवं जायद फसल 12718 हेक्टेयर (5.57 प्रतिशत) भाग पर बोई जाती है। (सारणी क्रमांक - 2 देखें)।

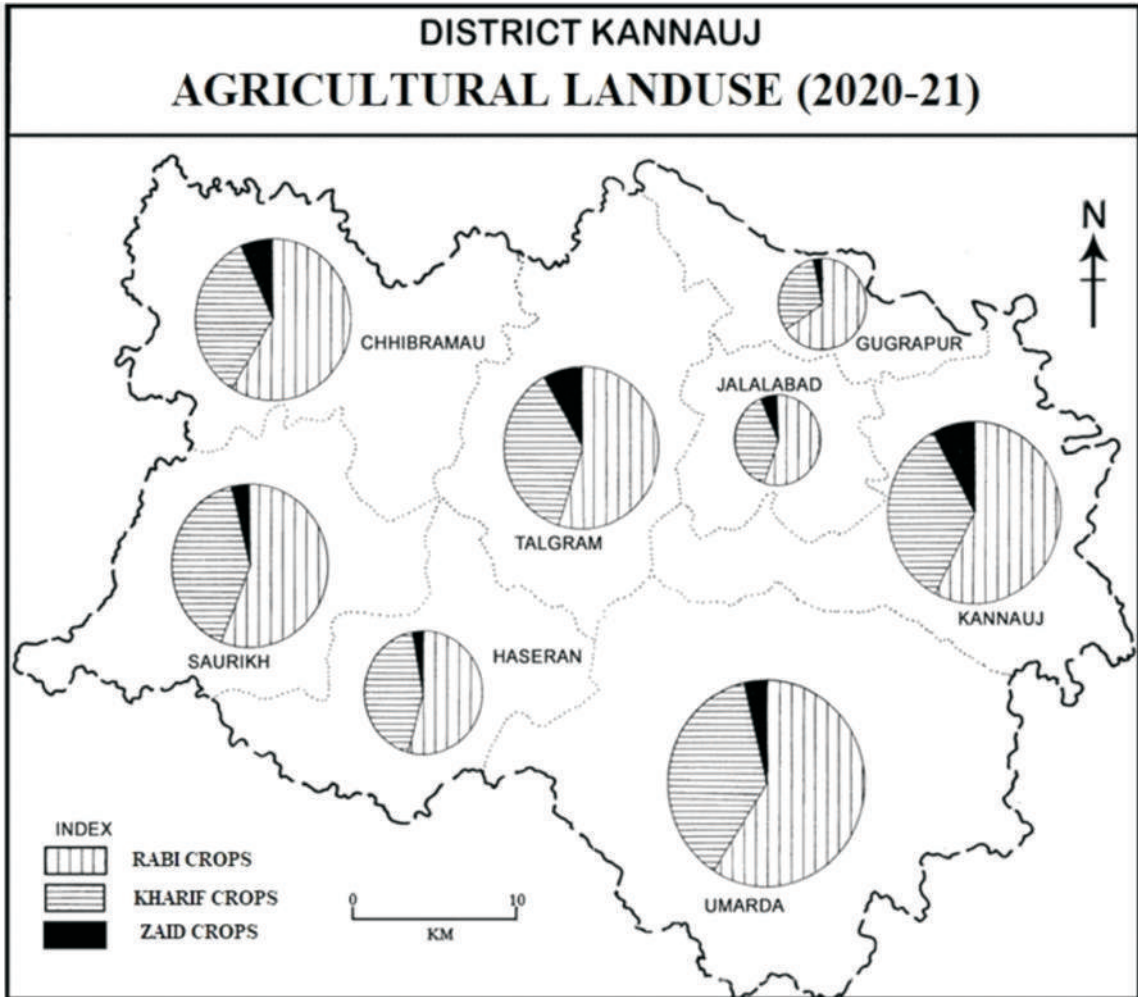


सारणी क्रमांक - 2

कन्नौज जनपद : कृषि भूमि उपयोग (2020-21)

क्र. सं.	विकासखण्ड का नाम	शुद्ध बोया क्षेत्र	एक बार से अधिक बोया गया	सकल बोया गया क्षेत्र	रबी	खरीफ	जायद	सकल बोया क्षेत्र
1	छिबरामऊ	20806	12209	33015	19307	11435	2273	33015
2	तालग्राम	20073	13845	33918	18642	12553	2723	33918
3	सौरिख	18401	9599	28000	15783	11159	1058	28000
4	हसेरन	14235	6559	20794	11285	8938	571	20794
5	जलालाबाद	9559	5746	15305	8439	5899	967	15305
6	कन्नौज	22555	11690	34245	19669	11828	2748	34245
7	उमर्दा	33151	18734	51885	30509	19357	2019	51885
8	गुगरापुर	5975	5217	11192	7362	3471	359	11192
	योग ग्रामीण	144755	83599	228354	130996	84640	12718	228354
	योग नगरीय	—	—	—	—	—	—	—
	योग जनपद	144755	83599	228354	130996	84640	12718	228354

स्रोत : राजस्व अभिलेख एवं सांख्यिकी पत्रिका, कन्नौज जनपद, 2020-21





सारणी क्रमांक – 3

कन्नौज जनपद : कृषि भूमि उपयोग का परिवर्तित स्वरूप
(वर्ष 2000-01 से 2015-16)

क्र. सं.	विकासखण्ड का नाम	एकबार से अधिक बोया गया क्षेत्र			
		2001-01	2005-06	2010-11	2015-16
1	छिबरामऊ	12608	11928	11693	12209
2	तालग्राम	7339	12315	12736	13845
3	सौरिख	7246	6982	6580	9599
4	हसेरन	5344	6597	6458	6559
5	जलालाबाद	6916	6001	5937	5746
6	कन्नौज	16429	11679	11836	11690
7	उमर्दा	6470	16997	17332	18734
8	गुगरापुर	—	—	4708	5217
योग जनपद		62352	72499	77280	83599

अतः कृषि भूमि उपयोग का विकासखण्डवार अध्ययन करने पर शुद्ध बोया गया क्षेत्र सर्वाधिक विकासखण्ड उमर्दा में 33151 हेक्टेर (63.89 प्रतिशत) एवं सबसे कम विकासखण्ड गुगरापुर में 5975 हेक्टेयर (53.39 प्रतिशत) है। एक बार से अधिक बोये ये क्षेत्र में सर्वाधिक विकासखण्ड उमर्दा में 18734 हेक्टेयर (36.11 प्रतिशत) एवं सबसे विकासखण्ड गुगरापुर में 5217 हेक्टेयर (46.61 प्रतिशत) है। सकल बोये गये क्षेत्र में रबी फसल के अन्तर्गत सर्वाधिक विकासखण्ड उमर्दा में 30509 हेक्टेयर (58.80 प्रतिशत) एवं सबसे कम विकासखण्ड गुगरापुर में 7362 हेक्टेयर (65.78 प्रतिशत) है। खरीफ फसल में सर्वाधिक विकासखण्ड उमर्दा में 19357 हेक्टेयर (37.31 प्रतिशत) एवं सबसे कम विकासखण्ड गुगरापुर में 3471 हेक्टेयर (31.01 प्रतिशत) है। जायद फसल में सर्वाधिक विकासखण्ड कन्नौज में 2748 हेक्टेयर (8.02 प्रतिशत) एवं सबसे कम विकासखण्ड गुगरापुर में 359 हेक्टेयर (3.21 प्रतिशत) है। सारणी क्रमांक – 2 दृष्टव्य है।

अग्रलिखित सारणी क्रमांक – 3 के अवलोकन से ज्ञात होता है कि कृषि योग्य भूमि के क्षेत्रफलीय आकार में वर्ष 2005-06 से 2010-11 तक क्रमशः वृद्धि होती जा रही है। एक बार से अधिक बोया गया क्षेत्रफल विगत 15 वर्षों में 62352 हेक्टेयर से बढ़कर 83599 हेक्टेयर हो गया है। इसे ऐसे भी समझा जा सकता है कि आधार वर्ष 2000-01 में एक बार से अधिक बार बोये गये क्षेत्रफल में

वर्ष 2005-06 में 16.27 प्रतिशत की वृद्धि और वर्ष 2010-11 में 9.35 प्रतिशत की वृद्धि तथा वर्ष 2015-16 में 5.45 की वृद्धि परिलक्षित हो रही है। इससे सिद्ध होता है कि कृषि योग्य भूमि का व्यापक सदुपयोग कृषकों द्वारा किया जा रहा है। (सारणी क्रमांक – 3 देखें)

रबी भूमि उपयोग –

कन्नौज जनपद में रबी भूमि उपयोग के अन्तर्गत 10 फसलों का उत्पादन किया जा रहा है। जनपद में 183692 हेक्टेयर भूमि पर रबी फसल की उपज की जाती है। जिसमें क्रमशः 73983 हेक्टेयर (40.28 प्रतिशत) पर गेहूँ, 38786 हेक्टेयर (21.11 प्रतिशत) पर सब्जियां, 37916 हेक्टेयर पर (20.64 प्रतिशत) पर आलू, 16812 हेक्टेयर (9.15 प्रतिशत) पर तिलहन, 9808 हेक्टेयर (5.34 प्रतिशत) पर सरसों, 2038 हेक्टेयर (1.11 प्रतिशत) पर चना, 1675 हेक्टेयर (0.91 प्रतिशत) पर जौ, 1522 हेक्टेयर (0.83 प्रतिशत) पर मटर, 905 हेक्टेयर (0.49 प्रतिशत) पर चारा एवं 247 हेक्टेयर (0.13 प्रतिशत) पर मसूर का उत्पादन किया जा रहा है। सारणी क्रमांक – 4 दृष्टव्य है। (सारणी क्रमांक – 4 देखें)

निष्कर्ष –

विकास एक सतत प्रक्रिया है जिसकी माप तुलनात्मक दृष्टि से करना अधिक समीचीन होगा। विश्व बैंक द्वारा प्रकाशित विश्व विकास रिपोर्ट में विकास मानकों (संकेतकों) का संकलन किया गया जिसमें 125 देशों के



क्र. सं.	विकासखण्ड का नाम	गोहूँ	जौ	मटर	सरसों	मक्का	मसूर	चना	चारा	सब्जियाँ	तिलहन	आलू	कुल योग
1	छिबरामऊ	37.95	1.03	0.92	4.36	—	0.07	1.10	0.64	24.28	8.00	21.65	15.19
2	तालग्राम	32.35	0.80	1.06	3.88	—	0.11	0.78	0.30	21.27	8.96	30.49	15.40
3	सौरिख	48.79	1.06	0.93	5.16	—	0.06	1.14	0.88	23.70	6.43	11.85	10.63
4	हसेरन	60.15	0.94	0.89	6.96	—	0.15	3.16	0.72	9.81	8.97	8.25	07.10
5	जलालाबाद	30.38	0.76	0.51	5.03	—	0.03	0.77	0.25	27.07	8.49	26.70	07.13
6	कन्नौज	28.60	0.63	1.29	4.67	—	0.34	0.67	0.47	26.56	10.73	26.05	16.60
7	उमर्दा	47.39	0.88	0.43	6.57	—	0.03	1.09	0.41	17.01	9.62	16.57	22.52
8	गुगरापुर	45.80	1.80	0.28	7.79	—	0.45	1.20	0.27	14.07	12.62	15.71	05.42
	योग ग्रामीण	40.28	0.91	0.83	5.34	—	0.13	1.11	0.49	21.11	9.15	20.64	100.00
	योग नगरी	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
योग जनपद		40.28	0.91	0.83	5.34	—	0.13	1.11	0.49	21.11	9.15	20.64	100.00

उत्पादन, उपभोग, निवेश, मांग, औद्योगीकरण, ऊर्जा आपूर्ति, व्यापार, पूंजी प्रवाह, जनसंख्या-वृद्धि, प्रजनन, श्रम-शक्ति, नगरीकरण, जीवन प्रत्याशा, स्वास्थ्य और आय वितरण के सांख्यिकीय आंकड़े दिये गये हैं जिनके अवलोकनोपरान्त विभिन्न क्षेत्रों, राज्यों एवं देशों के विकास के स्तर का निर्धारण किया जा सकता है।⁵

जनसंख्या एवं भूमि संसाधन का अन्योन्याश्रय सम्बन्ध होता है। वर्तमान समय में निरन्तर बढ़ती हुई जनसंख्या के फलस्वरूप जनसंख्या एवं भूमि संसाधनों का अन्तर दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है।⁶ इस प्रकार निरन्तर बढ़ती हुई जनसंख्या की खाद्यान्न आवश्यकताओं की पूर्ति सीमित भूमि संसाधनों द्वारा कर पाना एक भयावह समस्या है और इसके निवारण हेतु आवश्यक है कि विभिन्न क्षेत्रों के कृषि विकासस्तर का आकलन किया जाये। कृषि विकासस्तर को ज्ञात करने के लिए मानव द्वारा फसलों के उत्पादन में किये गये प्रयास एवं परिश्रम आदि को सम्मिलित किया जाता है।⁷ अतः जनसंख्या एवं खाद्य संसाधनों में सन्तुलन बनाये रखने एवं उनके नियोजन के लिये कृषि विकास स्तर का अध्ययन अत्यावश्यक है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. तिवारी, हरिश्चन्द्र (1989) फर्रुखाबाद जनपद के ग्रामीण विकास में लघु नगरीय केन्द्रों का योगदान, अप्रकाशित शोध-ग्रन्थ, कानपुर विश्वविद्यालय, कानपुर, पृष्ठ संख्या -

80 |

2. Nevill, H.N. (1911) Farrukhabad Gazetteer, Page-224.
3. Mishra, Pramanand, Gazetteer of Uttar Pradesh. Page-275.
4. Singh, A.L. (1975) New Measures of Agricultural Efficiency, The Geographer, Vol. XXII, No. 1, Jan, Page-25-35.
5. Wagner, P.L. & Mikesell, M.W. (Edited) (1962) Reading in Cultural Geography", The University of Chicago Press, Page-290.
6. Zimmerman, E.W. (1951) World Resources and Industries, New York, Page-172.
7. Behari, B., (1976) Rural Industrialization in India, Vikas Publishing House, New Delhi, Page- 105.



पूर्व मध्यकालीन भारतीय इतिहास में धार्मिक संरचना एवं विकास

सारांश



— श्याम नारायण

शोध छात्र —

प्राचीन इतिहास, पुरातत्व

एवं संस्कृति विभाग,

दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर

विश्वविद्यालय, गोरखपुर-273009

(उत्तर प्रदेश)

ई-मेल:

shyamn19@gmail.com

सांख्य चिन्तन के तरह उनके चिन्तन में प्रकृति की स्वतंत्र सत्ता को स्वीकार नहीं किया गया है बल्कि उसे ब्रह्म से अभिन्न माना गया है। शंकराचार्य ने ब्रह्म और जीव की एकता पर बल देते हुए यह घोषित किया कि ब्रह्म और जीव दोनों एक ही तत्व से निर्मित हैं तथा दोनों मूलतः एक हैं। रामानुज ने इस विचार में आंशिक परिवर्तन प्रस्तुत किया। इनके अनुसार यद्यपि दोनों एक ही तत्व से निर्मित हैं किन्तु दोनों मूलतः एक नहीं हैं। ब्रह्म यदि द्रव्य है तो जीव गुण है। ब्रह्म अगर असीम है तो जीव सीमित।

पूर्व मध्यकाल भारतीय इतिहास में एक अत्यन्त महत्वपूर्ण कालखण्ड के रूप में जाना जाता है। इस काल में राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक रूप से अनेकों परिवर्तन तथा विकास परिलक्षित होते हैं। परन्तु सबसे महत्वपूर्ण परिवर्तन हमें धार्मिक संरचना के विकास में दिखाई देता है। इस काल में पुराणों पर आधारित शैववाद एवं वैष्णववाद का विकास हुआ। इस काल में हरिहर की संकल्पना प्रस्तुत की गई जिससे धार्मिक सद्भाव को प्रोत्साहन मिला। इस काल में आर्य तथा गैर आर्य तत्वों के बीच सामंजस्य के परिणाम स्वरूप तंत्रवाद का विकास हुआ। इस कालखण्ड में तंत्रवाद ने लगभग सभी समकालीन पंथों को गहरे स्तर तक प्रभावित किया। इसी के परिणामस्वरूप शक्ति की अवधारणा का विकास हुआ। शैवधर्म के अन्तर्गत कापालिक एवं कालामुख जैसे उपसम्प्रदाय विकसित हुए आगे चलकर नाथपंथ का विकास हुआ। उसी प्रकार बौद्ध धर्म के अन्तर्गत वज्रयान, सहजयान तथा मंत्रयान जैसी शाखायें विकसित हुईं। यदि एक दृष्टि से देखा जाय तो तंत्रवाद महज धार्मिक आन्दोलन नहीं था बल्कि एक सामाजिक आन्दोलन भी था क्योंकि इसने शूद्रों एवं महिलाओं के लिये अपना दरवाजा खोल दिया। इससे समाज में हासिये पर स्थित समूहों को मुख्य धारा में सम्मिलित होने का एक सुअवसर प्राप्त हुआ।

इसके अतिरिक्त यही वह कालखण्ड है जब दक्षिण में अलवार और नयनार सन्तों के द्वारा भक्ति आन्दोलन प्रारम्भ किया गया। आरम्भ में यह एक धार्मिक आन्दोलन के साथ-साथ सामाजिक आन्दोलन भी था। क्योंकि इसने धार्मिक समानता के साथ सामाजिक समानता की भी मांग उठायी थी। इस काल में शंकराचार्य जैसे महत्त्वपूर्ण चिन्तक का उदय हुआ। उन्होंने वेदान्त दर्शन को पुर्नजीवित किया। शंकराचार्य एक महान समन्वयवादी थे। उन्हें हिन्दू धर्म के उद्धार का श्रेय दिया जाता है। शंकराचार्य के आगमन के पूर्व ब्राह्मण धर्म अपना प्रभाव खो चुका था तथा उपनिषद के द्वारा प्रतिपादित



अद्वैत चिन्तन पृष्ठभूमि में जा चुका था। 9वीं सदी में शंकराचार्य का आगमन हुआ। उन्होंने अद्वैत चिन्तन को पुर्नजीवित किया। इनके द्वारा आत्मा एवं ब्रह्म के सम्बन्धों की व्याख्या की गई। धार्मिक, आध्यात्मिक क्षेत्र में उनका समन्वयवाद उल्लेखनीय है। शंकराचार्य का अद्वैत चिन्तन विद्वानों को आकर्षित कर सकता था इन्होंने हिन्दू धर्म के प्रचार हेतु बौद्ध संघ के परन्तु सामान्य जन को नहीं इसीलिये उन्होंने सामान्य लोगों के लिये मूर्ति पूजा को स्वीकृति प्रदान की। शंकराचार्य ने भावनात्मक एकता को बनाये रखने के लिये भारत में चार भिन्न-भिन्न छोरों पर चार मठों की स्थापना की। मॉडल पर सन्यासियों का एक संगठन बनाया तथा अन्य पंथों के प्रचारकों के साथ-साथ शास्त्रार्थ पर भी बल दिया। इन्हीं कारणों से शंकराचार्य को हैन्दव धर्मोद्धारक की संज्ञा प्राप्त हुई।

आगे चलकर रामानुज ने शंकराचार्य के अद्वैत तथा भक्तिवाद के बीच सामंजस्य स्थापित किया। रामानुज ने विशिष्टाद्वैत का प्रतिपादन किया। इसके साथ भक्ति आन्दोलन का दार्शनिक स्वरूप तैयार कर दिया। शंकराचार्य की तरह रामानुज ने प्रकृति को त्याज्य नहीं माना है, बल्कि उसे ब्रह्म से अभिन्न तथा उसी की अभिव्यक्ति स्वीकार किया। इस प्रकार देखा जाय तो रामानुज का चिन्तन यहा सांख्य दर्शन के निकट प्रतीत होता है। परन्तु विश्लेषण करने पर यह ज्ञात होता है कि रामानुज का चिन्तन सांख्य दर्शन से अलग है। सांख्य चिन्तन के तरह उनके चिन्तन में प्रकृति की स्वतंत्र सत्ता को स्वीकार नहीं किया गया है बल्कि उसे ब्रह्म से अभिन्न माना गया है। शंकराचार्य ने ब्रह्म और जीव की एकता पर बल देते हुए यह घोषित किया कि ब्रह्म और जीव दोनों एक ही तत्व से निर्मित हैं तथा दोनों मूलतः एक हैं। रामानुज ने इस विचार में आंशिक परिवर्तन प्रस्तुत किया। इनके अनुसार यद्यपि दोनों एक ही तत्व से निर्मित है किन्तु दोनों मूलतः एक नहीं है। ब्रह्म यदि द्रव्य है तो जीव गुण है। ब्रह्म अगर असीम है तो जीव सीमित। दूसरी तरफ शंकराचार्य का मानना था कि जीव और ब्रह्म के बीच जो अन्तर नजर आता है, वह अज्ञानता के कारण है। अतः जीव की मुक्ति हेतु ज्ञान आवश्यक है। यद्यपि रामानुज ने भी ज्ञान के महत्व को स्वीकार किया है। किन्तु रामानुज मानते हैं कि जीव की मुक्ति के लिये ज्ञान से भी अधिक आवश्यक 'भगवत अनुग्रह' अथवा ईश्वर की कृपा है।

उसी प्रकार शंकराचार्य का बल इस बात पर था

कि जीव की चरम स्थिति ब्रह्म में लीन हो जाने में है, वहीं रामानुज ने माना कि जीव की चरम स्थिति ब्रह्म में लीन हो जाने में नहीं बल्कि उनसे मिलने में है तथा मिलन का साक्षी बनकर उसे महसूस करने में है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. कल्हण : राजतरंगिणी, एम. ए. स्टीन, दो भाग— 1900, वाराणसी, 1961, आर. एस. पण्डित, 1935।
2. चन्द्रबरदाई : पृथ्वीराज रासो, संपादक— श्यामसुन्दर दास, वाराणसी — 1904।
3. उपाध्याय, वासुदेव : प्राचीन भारतीय स्तूप, गुहा एवं मन्दिर, पटना — 1972।
4. मिश्र, जयशंकर : प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास।
5. शर्मा रामशरण : पूर्व मध्यकालीन भारत में सामाजिक परिवर्तन, दिल्ली — 1975।
6. बासम, ए. एल. : द वन्दर दैट वाज इण्डिया, लंदन, 1951



जनपद फर्रुखाबाद के ग्रामीण क्षेत्र में कृषि विकास स्तर का भौगोलिक अध्ययन



— श्रुष्टी गंगवार
शोधार्थी — भूगोल विभाग,
नामांकन संख्या—
MSDU241140004001,
मेजर एस. डी. सिंह यूनीवर्सिटी,
फतेहगढ़, फर्रुखाबाद—209601
(उत्तर प्रदेश)

ई-मेल:
gangwarsrishti7525@gmail.com



शोध पर्यवेक्षक—
— डॉ. ललित कुमार यादव
एसोसिएट प्रोफेसर—भूगोल विभाग,
मेजर एस. डी. सिंह विश्वविद्यालय,
फतेहगढ़, फर्रुखाबाद—209601
(उत्तर प्रदेश)

ई-मेल:
lalitkryadav11@gmail.com

प्रस्तावना —

ग्रामीण विकास का मुख्य उद्देश्य जनपद के निवासियों का जीवन—स्तर ऊपर उठाने के लिए उत्पादन, उत्पादकता तथा आय के स्तर में अभिवृद्धि करना होता है। विकास का क्रम निचले स्तर से अर्थात् प्रथम गाँव से विकासखण्ड और जिले से राज्य स्तर पर होना अति लाभकारी होता है। ग्रामीणोंचल में कृषि के अतिरिक्त उससे सम्बन्धित अन्य कार्यों में भी रोजगार के अवसरों में विस्तारीकरण किया जाना आवश्यक है; जिससे ग्रामीण क्षेत्रों के निवासियों को जीविकोपार्जन हेतु लाभकारी रोजगार उपलब्ध हो सकें। ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगारी और अर्द्धबेरोजगारी समाप्त करने, ग्रामीणों के रहन—सहन के स्तर में सुधार करना तथा ग्रामीण निर्धनों की प्राथमिक आवश्यकताओं को रेखांकित करने और उनकी पूर्ति हेतु व्यापक रूप में सर्वेक्षण अत्यन्त आवश्यक है। ग्रामीण अर्थव्यवस्था को पूर्णरूपेण आत्मनिर्भर बनाने हेतु भारतीय बैंकों को अधिक ध्यान देना होगा।

जनपद की भौगोलिक अवस्थिति —

उत्तर प्रदेश राज्य के कानपुर मण्डल के अन्तर्गत स्थित फर्रुखाबाद जनपद कृषि प्रधान जनपद है। इसका अक्षांशीय विस्तार 27° 9' 02" उत्तर से 27° 43' 31" उत्तर तक तथा देशान्तरीय विस्तार 79° 4' पूर्व से 79° 44' 21" पूर्व तक है। गंगा नदी इसकी उत्तरी एवं उत्तरी—पूर्वी सीमा का निर्धारण करती है। उत्तर दिशा में शाहजहाँपुर एवं बदायूँ जनपद, दक्षिण में कन्नौज जनपद, पूर्व में हरदोई जनपद तथा पश्चिम में एटा एवं मैनपुरी जनपद स्थित हैं।

अध्ययन क्षेत्र लगभग वर्गाकार आकृति में है। उत्तर—पूर्व का कम्पिल वाला क्षेत्र नुकीला तथा उभरा हुआ है। शाहजहाँपुर जनपद की सीमा उत्तर दिशा में थोड़ी सी धसी हुई है। जनपद को पतंगाकार कहा जा सकता है। जनपद की उत्तर से दक्षिण लम्बाई 56 किलोमीटर तथा पूर्व से पश्चिम चौड़ाई 45 किमी. है। उत्तर—पश्चिम से दक्षिण—पूर्व अधिकतम लम्बाई 62.50 किमी. है। यही लम्बाई इसे पतंग का आकार प्रदान करती है।

जनपद में अधिवासित ग्राम 881 तथा अनाधिवासित 129 ग्राम हैं। सर्वाधिक अधिवासित ग्राम 150 कायमगंज विकासखण्ड में है। तहसील सदर फर्रुखाबाद में 40 ग्राम पंचायतें तथा 228 ग्राम सभायें हैं। कमालगंज विकासखण्ड में सर्वाधिक 17 ग्राम पंचायतें 96 ग्राम सभायें हैं तथा 162 अधिवासित ग्राम हैं। 9 न्याय पंचायतें, 49 ग्राम सभायें, 81 अधिवासित ग्राम तथा 15 अनाधिवासित ग्राम नवाबगंज विकासखण्ड में हैं। तहसील अमृतपुर में 13 न्याय पंचायतें तथा 72 ग्राम सभायें हैं। राजेपुर विकासखण्ड में 136 अधिवासित ग्राम हैं। जनपद फर्रुखाबाद में कुल ग्रामों की संख्या 1010 है



सारणी क्रमांक – 1

जनपद फर्रुखाबाद : ग्रामीण प्रतिरूप (वर्ष 2023-24)

क्र. सं.	विकासखण्ड / तहसील का नाम	न्याय पंचायत	ग्राम संख्या	अधि वासित ग्राम	अनाधि वासित ग्राम	कुल योग
1	कायमगंज	12	76	150	27	177
2	नवाबगंज	9	57	88	2	90
3	शमसाबाद	13	78	143	31	174
	तहसील कायमगंज	34	211	381	60	441
4	बढ़पुर	9	49	81	15	96
5	कमालगंज	17	96	162	23	185
6	मोहम्मदाबाद	14	83	121	1	122
	तहसील सदर फर्रु0	40	228	364	39	403
7	राजेपुर	13	72	136	30	166
	तहसील अमृतपुर	13	72	136	30	166
	जनपद फर्रुखाबाद	87	511	881	129	1010

स्रोत : भूराजस्व रिकार्ड, जनपद फर्रुखाबाद

जिसमें 881 अधिवासित ग्राम हैं तथा 129 अनाधिवासित ग्राम हैं। (सारणी क्रमांक – 1 देखें)

जनपदीय अर्थव्यवस्था मुख्यतः ग्रामीण अर्थव्यवस्था है। यहाँ की लगभग 77.92 प्रतिशत जनसंख्या गाँवों में निवास करती है। इस प्रकार प्रत्येक चार भारतीयों में से 3 गाँवों में निवास करते हैं। देश की राष्ट्रीय आय का लगभग 34 प्रतिशत प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से कृषि से ही प्राप्त होता है। अतः यह निर्विवाद है कि भारत के आर्थिक विकास का मुख्य आधार ग्रामीण अर्थव्यवस्था ही है। विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विकास हेतु कृषि, सिंचाई, पशुपालन, परिवहन, संचार, स्वास्थ्य, सहकारिता एवं ग्रामीण उद्योग आदि पर विशेष ध्यान दिया गया तथा अर्थव्यवस्था के समग्र विकास हेतु विभिन्न कार्यक्रम प्रारम्भ किये गये। इन विकास कार्यक्रमों में सबसे महत्वपूर्ण कार्यक्रम समाकलित ग्रामीण विकास कार्यक्रम (आई.आर.डी.पी.) है। इस कार्यक्रम के साथ-साथ ग्रामीण निर्धनता निवारण हेतु ट्राइसेम, जवाहर रोजगार योजना आदि कार्यक्रमों का संचालन भी किया जा रहा है।

विभिन्न कार्यक्रमों के मूल्यांकन से इस बात की पुष्टि तो हुई है कि इनका लाभ ग्रामीण निर्धन व्यक्तियों

तक पहुँच रहा है, लक्ष्य प्राप्ति में भी सफलता मिली है, परन्तु आय बढ़ाने की दृष्टि से उपलब्धियाँ लगभग आधी ही बैठती हैं। लक्ष्यों की पूर्ण प्राप्ति न हो पाने का प्रमुख कारण इन कार्यक्रमों के संचालन में समय-समय पर अनेक प्रकार के अवरोधों का उत्पन्न होना है। (चित्र – 1 देखें)

अध्ययन का उद्देश्य –

सर्वप्रथम ग्रामीण विकास की सभी योजनाओं को मिलाकर एक समाकलित कार्यक्रम बनाया गया जिसमें निर्धनता उन्मूलन, रोजगार के अवसरों का सृजन, प्रशिक्षण तथा वित्तीय अनुदान और सहायता आदि कार्यक्रमों को सम्मिलित किया गया। शोधार्थी द्वारा अध्ययन क्षेत्र का चयन करके इस शोधलेख में समाकलित ग्रामीण विकास के माध्यम से निम्न उद्देश्यों को प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है –

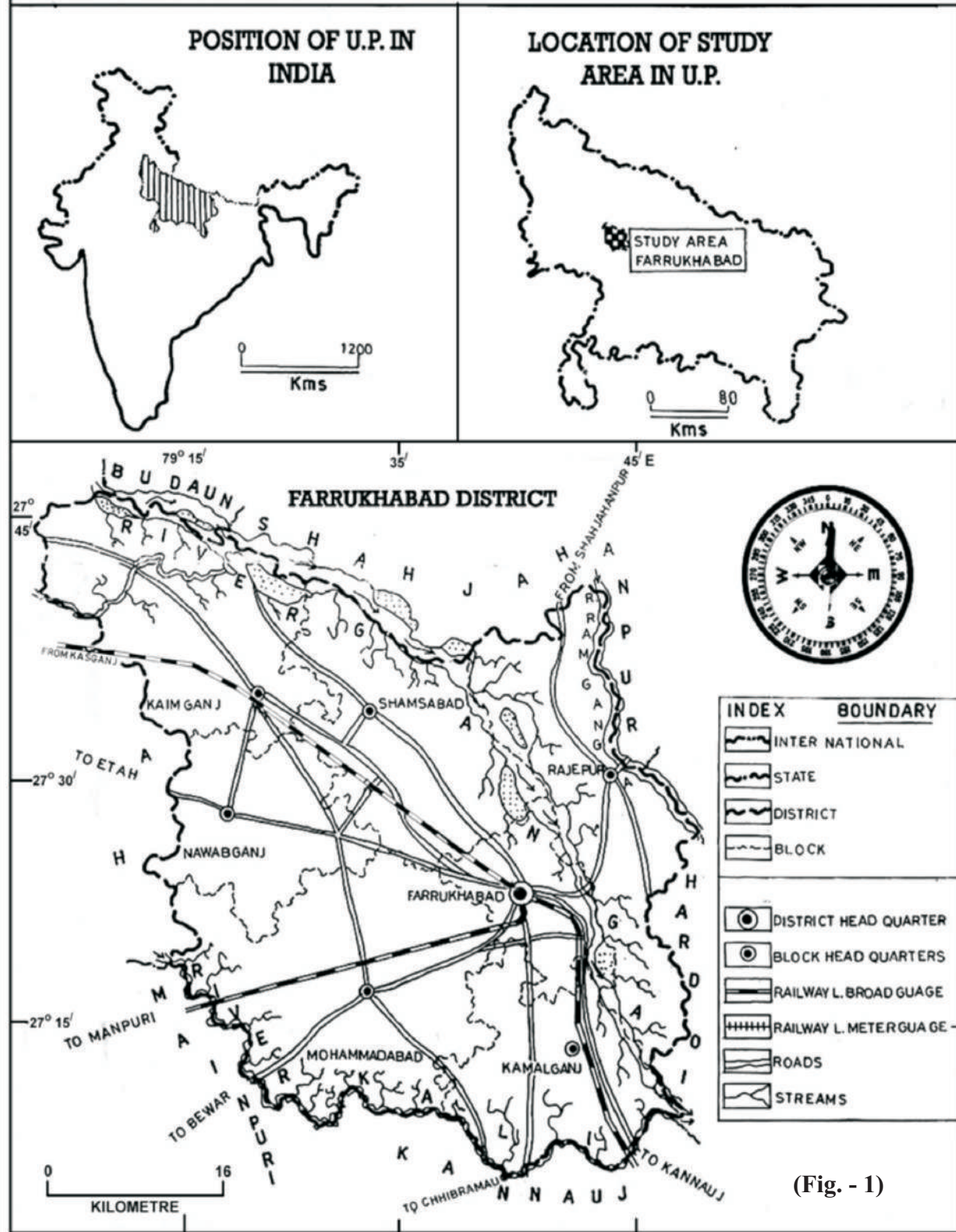
1. ग्रामीण विकास का मुख्य उद्देश्य कृषि संसाधनों का विश्लेषण करके विकास एवं नियोजन प्रस्तुत करना है।

2. वर्तमान कृषि स्वरूप के संदर्भ में ग्रामीण जनसंख्या का सामाजिक-आर्थिक प्रारूप के अन्तर्सम्बन्ध की व्याख्या प्रस्तुत करना है।

3. समग्र ग्रामीण विकास हेतु आधारभूत अवसंरचना



LOCATION MAP OF FARRUKHABAD DISTRICT



(Fig. - 1)



का नियोजन एवं विकास करना है।

साहित्य का पुनरावलोकन –

सिंह² (2010) ने समाकलित ग्रामीण विकास उपागम के माध्यम से अपेक्षित उद्देश्य की पूर्ति हेतु भू-वैज्ञानिक नियोजन के द्वारा ग्रामीण निवास्य प्रत्यावर्तन प्रक्रिया को आवश्यक मानकर इस संकल्पना को एक नया आयाम प्रदान किया है। श्रीवास्तव³ (1992) के अनुसार— समाकलित ग्रामीण विकास अपेक्षाकृत अधिक संतुलित, विस्तृत एवं सर्वांगीण विकास का एक उपागम है जिसके द्वारा भौगोलिक, संस्थागत, आर्थिक एवं सामाजिक समन्वयन स्थापित करके ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करने वाले अधिकांश निर्धन जनसंख्या के जीवन-स्तर में सुधार एवं उनके विकास-माध्यम को आत्मनिर्भर बनाने का प्रयास किया जाता है। भार्गव⁴ (2006) के अनुसार – समाकलित ग्रामीण विकास के सर्वांगीण उपागम की उत्पत्ति ग्रामीण क्षेत्रों में विद्यमान विपन्नता एवं द्वैधात्मक अर्थतन्त्र के विभिन्न कारणों यथा उच्च जन्मदर, बेरोजगारी, कृषि निवेशों एवं प्राविधिकी की अनुपलब्धि, सक्षम ग्रामीण संस्थाओं प्राधिकृत जनसहयोग के साथ ही शिक्षा एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी सेवाओं के अभाव जैसी समस्याओं के निराकरण से सम्बन्धित है।

परिकल्पनायें –

प्राचीन समय में मानवीय सामर्थ्य को जनसंख्या के संख्यात्मक रूप में स्वीकार किया जाता था तब परम्परागत कृषिगत समाज मानवीय श्रम की अधिकांश कार्यों में आवश्यकता होती थी। अतः संख्यात्मक दृष्टि से अधिक जनसंख्या का अभिप्राय अधिक उत्पादकता और समृद्धि से लगाया जाता था किन्तु वर्तमान में इन सन्दर्भ में विज्ञान तकनीकी और औद्योगिक विकास के परिणामस्वरूप पर्याप्त परिवर्तन हुए हैं जिससे मानवीय संख्यात्मक स्थिति के ऊपर निर्भरता कम हुई है तथा तकनीकी के अत्यधिक उन्नति साधनों के संचालित करने के लिए बौद्धिक क्षमता एवं सामर्थ्य की आवश्यकता है जिससे उत्पादन, बहुविधि तथा बहुगुणित हो सके। इस प्रकार जनसंख्या का गुणात्मक विकास संख्यात्मक वृद्धि से अधिक महत्वपूर्ण होता गया, तथा किसी भी क्षेत्र की आर्थिक दक्षता व उत्पादकता, विकास पर सांस्कृतिक मूल्यों, सामाजिक और राजनीतिक संगठनों की गुणवत्ता की छाप होती है। क्या कृषि विकास से ही ग्रामीण विकास सम्भव है। इस परिकल्पना को सिद्ध करना है।

विधितंत्र –

ग्रामीण समस्याओं के निराकरण हेतु प्राथमिक एवं द्वितीयक स्तर के समकों का उपयोग किया गया है। प्राप्त समकों का सांख्यिकीय विधियों से आगणन करके मानचित्रण कार्य किया गया है। इस हेतु गतिणीय मानचित्रात्मक एवं रेखाचित्र विधियों का उपयोग किया गया है। जनपद की ग्रामीण जनसंख्या की वर्तमान प्रवृत्तियों का कृषि के परिप्रेक्ष्य में रैखिक विधि द्वारा मानक विचलन के आधार पर क्षेत्रीय प्रतिरूपों को स्पष्ट किया गया है।

कृषि विकास स्तर –

कृषि विकास स्तर एवं कृषि दक्षता समान अर्थप्रदायक है, कृषि विकास स्तर में मानव द्वारा फसलों के उत्पादन में प्रयुक्त प्रयास एवं परिणाम का अभाव होता है। जबकि कृषि दक्षता में कृषि उत्पादन क्षमता का अभिज्ञान होता है। अतः कृषि विकास स्तर क्षेत्रीय वितरण में विषमताओं के आधार पर कृषि प्रतिरूप के नियोजन को निर्धारित करता है, कृषि दक्षता भौतिक एवं सांस्कृतिक कारकों के द्वारा निर्धारित होती है। लेकिन कृषि विकास स्तर में मनुष्य के आर्थिक एवं सांस्कृतिक कारकों का प्रभाव सर्वाधिक होता है। अतः जनसंख्या एवं कृषि संसाधनों में सन्तुलन एवं नियोजन हेतु कृषि विकास स्तर का अध्ययन अति आवश्यक होता है। जनपद फर्रुखाबाद में सूचकांकों को आधार मानते हुए कृषि विकास स्तर के निर्धारण हेतु निम्नलिखित विधि अपनाई गई है –

प्रयुक्त सूचकांक –

1. शुद्ध बोया गया क्षेत्र / कुल भौगोलिक क्षेत्रफल।
2. शुद्ध बोया गया क्षेत्र / कृषक श्रमिकों की संख्या।
3. सिंचित क्षेत्र / असिंचित क्षेत्र।
4. एक बार से अधिक बार बोया गया क्षेत्र / शुद्ध बोया गया क्षेत्र।
5. मुद्रा दायिनी फसलों का क्षेत्र / खाद्यान्न फसलों का क्षेत्र।
6. कृषि श्रमिकों की संख्या / कृषकों की संख्या।
7. लोहे के हलों की संख्या / लकड़ी के हलों की संख्या।
8. ट्रैक्टरों की संख्या / शुद्ध बोया गया क्षेत्र।
10. प्रति हेक्टेयर उर्वरकों का प्रयोग (मीट्रिक टन में)।

क्र. सं.	विकासखण्ड	विकास सूचकांक	विकास कोटि
1	कायमगंज	14.17	मध्यम
2	नबावगंज	08.97	निम्न
3	शमसाबाद	16.09	उच्च
4	राजेपुर	11.08	मध्यम
5	बढ़पुर	14.02	मध्यम
6	मोहम्मदाबाद	09.65	निम्न
7	कमालगंज	17.40	उच्च

11. प्रति वयस्क उपलब्ध खाद्यान्न की वार्षिक मात्रा (कुन्तल में)

कृषि विकास स्तर की गणना हेतु उपर्युक्त सभी सूचकांकों का वास्तविक मान तथा उनका औसत माध्य ज्ञात किया जाए। तत्पश्चात् वास्तविक मानों में समानता लाने हेतु वास्तविक मानों का औसत माध्य से भाग देकर प्राप्त हुए मान का योग करके प्राप्त सूचकांक के आधार पर कृषि विकास स्तर ज्ञात किया गया है।

कृषि विकास स्तर की कोटियाँ –

कृषि विकास स्तर सूचकांक के आधार इसको उच्चतम, उच्च, मध्य, निम्न एवं निम्नतम पाँच कोटि वर्गों में विभाजित करके श्रेणीबद्ध किया गया है। फर्रुखाबाद जनपद में कृषि विकास स्तर अधिकांश क्षेत्रों में माध्यम एवं मध्यम से भी नीचे निम्न एवं निम्नतम है। अतः कृषि संसाधनों एवं जनसंख्या में संतुलन बनाए रखने के लिए नियोजनों हेतु निम्न कृषि विकास स्तर के क्षेत्रों में कृषि की नवीन वैज्ञानिक विधियों का प्रयोग करके कृषि विकास स्तर में वृद्धि की जा सकती है। इसके महत्व को स्पष्ट करते हुए 'कुलकर्णी' आदि ने भी इसकी संस्तुति प्रदान की है। कृषि फसलों के उत्पादन एवं कृषि भू-दृश्यों का विभिन्न सांख्यिकीय विधियों द्वारा विश्लेषण करने के उपरान्त स्पष्ट होता है कि विभिन्न कृषित पदार्थों का सम्बन्ध वर्तमान जनसंख्या की आवश्यकता से बहुत कम है।¹ जिससे मनुष्य को उपयुक्त भोजन नहीं मिल पा रहा है। फलस्वरूप मनुष्य विभिन्न प्रकार के रोगों से पीड़ित है अतः मनुष्य को

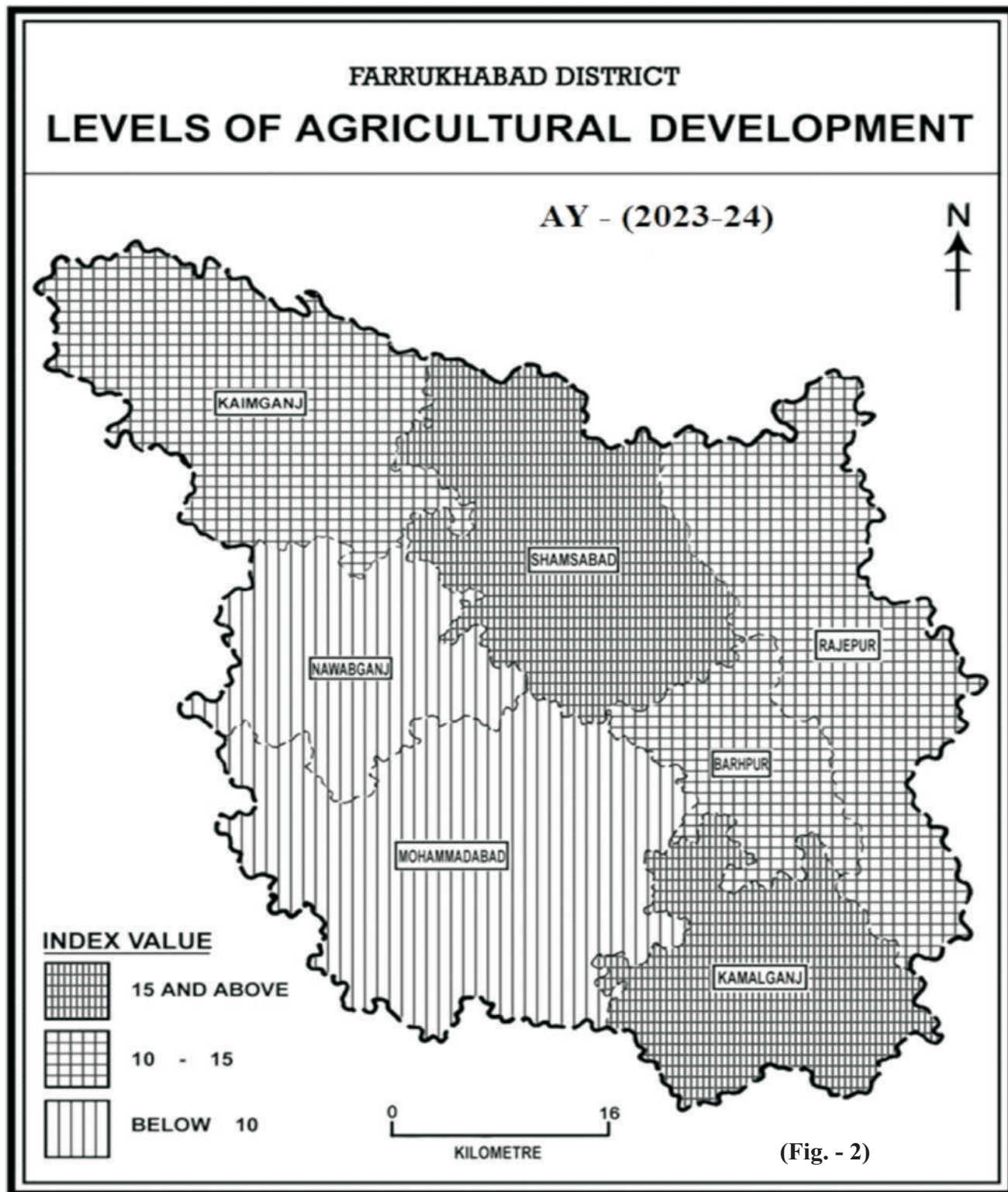
संतुलित भोजन उपलब्ध कराने हेतु खाद्य पदार्थों के उत्पादन में वृद्धि करना आवश्यक है।

उक्त सूचकांकों के आधार पर विकास स्तर मापन किया गया तो निम्नलिखित परिदृश्य उभरकर सामने आये कि सम्पूर्ण जनपद में उच्च कृषि विकास स्तर 17.40 कमालगंज विकासखण्ड में पाया गया जो कि सर्वाधिक है। शमसाबाद भी उच्च विकास स्तर वाला क्षेत्र है। मध्यम विकास स्तर जनपद के तीन विकासखण्डों कायमगंज, राजेपुर तथा बढ़पुर में पाया गया है। जनपद में निम्न विकासस्तर नबावगंज और मोहम्मदाबाद विकासखण्डों में है। (चित्र – 2 देखें)

निम्न व मध्यम कृषि विकास स्तर वाले क्षेत्रों में कृषि की नवीन वैज्ञानिक विधियों को अपनाकर उत्पादन बढ़ाया जा सकता है। यहाँ उल्लेखनीय है कि क्षेत्रों की बढ़ती हुई जनसंख्या भी विकास स्तर को प्रभावित करती है अतः जनसंख्या वृद्धि को नियोजित करके वांछित विकास स्तर पाया जा सकता है। संतुलित नियोजन हेतु कृषि का विकास एवं प्रति हेक्टेयर उत्पादन स्तर को बढ़ाना अति आवश्यक है। विस्तृत विवरण हेतु सारणी क्रमांक 2 एवं मानचित्र क्रमांक 2 को देखा जा सकता है।

कृषि विकास हेतु नियोजन –

ग्रामीण विकास प्रक्रिया में कृषि नियोजन अत्यन्त महत्वपूर्ण पक्ष है। ग्रामीण जनसंख्या का मुख्य आर्थिक आधार कृषि सम्बन्धित क्रियायें हैं। इसमें संशोधन एवं परिमार्जन करके ही निरन्तर बढ़ रही मांगों की पूर्ति सम्भव है। फर्रुखाबाद जैसे जनपद जिसकी आय का



अधिकांश भाग कृषि द्वारा ही प्राप्त होता है तथा अधिकांश श्रमिक कृषि कार्यों में संलग्न रहते हैं; ग्रामीण कृषि नियोजन समाकलित ग्रामीण विकास की दिशा में एक सामयिक एवं सही प्रयास है। नियोजन प्रक्रिया में आवश्यकतानुसार परिमार्जन एवं संशोधन की सुविधा के

साथ समयानुसार परिवर्तित परिस्थितियों के सन्दर्भ में परिवर्तन की सम्भावना रहनी चाहिए। कृषि नियोजन का उद्देश्य ग्रामीण समाज को इस प्रकार व्यवस्थित करना है जो परिवर्तित सामाजिक प्राविधिकीय परिस्थिति के अनुकूल समाज के सदस्यों के लिये सर्वाधिक हित के



साधन प्रस्तुत कर सकें।⁶

कृषि नियोजन हेतु प्राकृतिक, आर्थिक, प्राविधिकीय एवं सामाजिक कारकों को महत्वपूर्ण तत्व के रूप में स्थापित करके कृषि नियोजन की रूपरेखा प्रस्तुत की गई है क्योंकि उक्त तत्वों के समन्वित प्रभाव से ही समाकलित ग्रामीण विकास की अवधारणा विकसित होती है। किसी क्षेत्र के कृष्येत्तर रोजगार अवसरों में वृद्धि, विकास कार्यक्रमों की आत्मनिर्भरता, जागरुकता तथा स्थानीय जनसहयोग कृषि नियोजन कार्यक्रम के मुख्य तत्व हैं। कृषि नियोजन का महत्वपूर्ण कार्य कृषि से सम्बन्धित व्यक्तियों को आंशिक तथा बेरोजगार ग्रामीण जनसंख्या को पूर्णकालिक रोजगार प्रदान करना है।⁷ राष्ट्रीय आय में वृद्धि हेतु निर्यात की जानी वाली फसलों जैसे – तम्बाकू, जूट, कपास, गन्ना, मसाला एवं सब्जियों के उत्पादन में वृद्धि हेतु प्रयास भी कृषि नियोजन का एक अंग है। तीव्र गति से बढ़ती हुयी जनसंख्या, औद्योगीकरण व अनियोजित नगरीकरण के परिणामस्वरूप कृषि योग्य भूमि का तीव्रता से ह्रास हो रहा है। कृषि व मानव हित को दृष्टिगत रखते हुए आवश्यक हो जाता है कि इसको रोकने के उपाय सोचे जायें।

भारतीय कृषि को समय के साथ चलाने हेतु नवीनतम शोधों और तकनीकों का सहारा लेना होगा। कृषि उत्पादों की पैकेजिंग को और अधिक संशोधित करना होगा। कृषि उत्पादों के श्रेणीकरण, प्रमाणन और विपणन की सम्पूर्ण व्यवस्था को नवीनीकृत करना होगा। कृषि के विकास और वाणिज्यीकरण की दिशा में 'गाँधी आश्रम' एक आधार स्तम्भ है। गाँधी आश्रम उद्योगों, लघु और ग्रामोद्योगों के लिए एक मुख्य विपणन केन्द्र के रूप में प्रतिष्ठित है। गाँधी आश्रम जैसी संस्थाओं को नवीनीकृत करके व्यक्तियों को इससे जोड़ने की आवश्यकता है। अरोड़ा⁸ के शब्दों में "यह विशेष विचारणीय है कि किसी क्षेत्र के विकास में जो प्रणाली या योजना सफल हुई है उसे पूर्ण रूप से दूसरे क्षेत्र में संचालित नहीं किया जा सकता है।"

निष्कर्ष –

फर्रुखाबाद जनपद की 77.92 प्रतिशत जनसंख्या कृषि की धुरी पर घूमती हो और उस क्षेत्र की ही सबसे अधिक उपेक्षा हो; तो यह उस क्षेत्र का ही नहीं अपितु उस देश का भी सबसे बड़ा दुर्भाग्य है। कृषि प्रधानता जिस अनुपात में मुहावरे की तरह भाषाई व्यवहार में प्रयुक्त हुई है, उसी अनुपात में क्रियाशील व्यवहार में उपेक्षित रही है। देश

एवं जनपद फर्रुखाबाद का कृषि व्यवहार ऐसा ही है जो देश की रीढ़ की हड्डी होने पर भी केन्द्रीय विचार-विमर्श की परिधि में नहीं आता है। कृषि के विकास और विस्तार की नीति से कृषकों के वंचित रहने से ही जमींदारी उन्मूलन, भूमि सुधार, न्यूनतम मजदूरी एवं कम फसल मूल्य की उपलब्धता आदि जैसे अनेक कार्य अब तक राजनीतिक विवशता के रूप में सामने आये हैं। वे लोग जो मात्र कृषि या औद्योगिक उत्पादन के विषय में ही चिन्तित रहते हैं वे देश की सर्वांगीण अर्थव्यवस्था के साथ न्याय नहीं करते। जब दोनों (कृषि और औद्योगीकरण) की बात एक साथ होगी तभी आर्थिक गतिविधियों का समुचित उपयोग किया जा सकेगा और उन्नति के पथ पर निरन्तर अग्रसर होकर कृषि और उद्योगों के साथ न्याय किया जा सकेगा जो अभी तक अपनी वास्तविक लोकतान्त्रिक नियति से वंचित है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. बाजपेयी, ए. डी. एन. (1989) – ग्रामीण विकास नियोजन में प्राथमिकताओं का निर्धारण : ग्रामीण विकास संकल्पना उपागम एवं मूल्यांकन, कुरुक्षेत्र, जून, पृष्ठ – 28।
2. सिंह, अजब, (2010) – ग्रामीण विकास हेतु संचालित योजनायें, कुरुक्षेत्र, मार्च, पृष्ठ – 21।
3. श्रीवास्तव, दिलीप कुमार (1992) – विकासखण्ड बेरुआरवारी (बलिया) में समन्वित ग्रामीण विकास हेतु योजना, अप्रकाशित शोध प्रबन्ध, पूर्वांचल विश्वविद्यालय, जौनपुर, पृष्ठ – 69-70।
4. भार्गव, एस. पी. , (2006) – ग्रामीण विकास की दिशा में नई पहल, प्रतियोगिता दर्पण, मई पृष्ठ – 1819।
5. उपाध्याय, आर्येन्द्र, (2008) – समन्वित ग्रामीण विकास की रूपरेखा, कुरुक्षेत्र, जून, पृष्ठ – 17।
6. सिंह, सत्येन्द्र, (1985) – समन्वित ग्राम्य विकास : अवधारणा, अभिप्राय एवं उद्देश्य, उत्तर भारत भूगोल पत्रिका, दिसम्बर, पृष्ठ – 21।
7. Tripathi, S.K. (1991) - Spatial Organisation and Microlevel Planning of Auraiya Tehsil, District Etawah (U.P.) Unpublished Ph.D. Thesis, Page- 293.
8. Arora, R. C. (1976) - Integrated Rural Development, S. Chand & Company Ltd., New Delhi, Page - 3-4.



अज्ञेय की दृष्टि में प्रकृति-प्रेम



— दीप्ति कुमारी
शोधार्थी — हिन्दी विभाग,
विनोबा भावे विश्वविद्यालय,
हजारीबाग-825301 (झारखण्ड)

ई-मेल:
diptikumari255@gmail.com

सारांश

कविता में प्रयोगवाद और नई कविता के अग्रणी कवि के रूप में अज्ञेय का महत्व निर्विवाद है। उनकी पहचान ही आधुनिक संदर्भ में नई अवधारणा की नींव पर खड़ी है। सबसे बड़ी विशेषता यह है कि अज्ञेय के आधुनिक बोध के मूल में व्यक्तित्व की खोज नजर आती है। प्रकृति मानव जीवन का सत्य आधार है। प्रकृति के सौन्दर्य के मोह से हर कोई आकर्षित होता रहा है। और अज्ञेय के लिए तो यह उनकी साथी ही रही है। इस आलेख में प्रकृति के जितने भी आयाम हैं उन सभी पर विचार किया गया है बिंब प्रतीकों के माध्यम से भी कवि प्रकृति को नजदीक के देखा है। कभी बारिश से प्रकृति के हरेपन तो कभी बादलों की गड़गड़ाहट परिलक्षित होती है। प्रकृति कवि के सुख-दुख के साक्षी के रूप में उनकी कविताओं में उत्तर आती है।

शब्द-सूत्र— प्रयोगवाद, निर्विवाद, प्रेम, प्रकृति, अर्द्धस्फूट, चिरयौवना।

मुख्य आलेख—

कविता हमेशा विकसित होती है और उन कविताओं में नए-नए रूप, कलेवर, काल और स्थिति के आधार पर दिखायी देती है। कविता चिरयौवना और चिरनवीनता हुआ करती है। आदिकाल से कविता का आधार प्रकृति रहा है। वैसे आधार तो कई रहे हैं परन्तु प्रकृति अज्ञेय की कविताओं का मुख्य आधार रहा है क्योंकि उनका जन्म ही देहात से भी बाहर एक वीरान भूमि में बहुत से टूटे-फूटे खण्डहरों के पास लगे हुए एक खेत में हुआ था। वहाँ माटी की सोंधी गंध इनके तन-मन में पूर्ण रूप से समायी हुई थी और वही माटी के गंध उनकी रचनाओं में प्रस्फुटित भी हुई। छायावादोत्तर हिन्दी कविता में प्रगति के साथ नवीन प्रयोग की जो दूसरी धारा प्रवाहित हुई उसके प्रमुख अज्ञेय ही रहे हैं। प्रयोगवाद से लेकर नई कविता तक के लम्बे विस्तार में अज्ञेय की सृजनशीलता का कोई जोड़ नहीं है। नए कवियों में अज्ञेय निःसंदेह सबसे प्रखर व्यक्तित्व के स्वामी हैं। इनकी ही कविताओं के साक्ष्य के आधार पर कहा जा सकता है कि अज्ञेय आधुनिक हैं, नए हैं, भीड़ में चलने वाले कवि हैं। अज्ञेय की कविताओं में प्रकृति को प्रमुखता मिली है उनकी कविताओं का प्रकृति वर्णन बिंब और प्रतीकों के माध्यम से अपेक्षाकृत अधिक आया है तथा कहीं-कहीं कवि बिंब और प्रतीकों की मर्यादा को तोड़कर शुद्ध प्रकृति का वर्णन भी किया है। अज्ञेय की प्रकृति चेतना का संबन्ध सौन्दर्य चेतना से भी जुड़ी है तथा अज्ञेय की प्रकृति की पवित्र दृष्टिव्य है—

“घिर गया नभ, उमड़ आए मेघ काले



रिसर्च सुपरवाइजर
— डॉ. शारदा शर्मा
एसोसिएट प्रोफेसर—हिन्दी विभाग,
के. बी. महिला महाविद्यालय,
हजारीबाग-825301 (झारखण्ड)

ई-मेल:
shardashrma11@gmail.com



भूमि के कंपित उरोजों पर झुका—सा
विशद, श्वासाहत, चिरातूर
छा गया इन्द्र का नील वक्ष
वज्र—सा यदि तड़ित से झुलसा हुआ सा
आह, मेरा स्वास है उतप्त
धमनियों में उमड़ आई लहू की धार
प्यार है अभिशप्त तुम कहाँ हो नारि ?
मेघ व्याकुल गगन को मैं देखता था
बन विरह के लक्षणों की मूर्ति ।¹

अज्ञेय की कविताओं में लोकजीवन के साथ प्रकृति का संयोग एक नए विचार को जन्म देती है अज्ञेय का कवि मन उस असीम सत्ता से अपना संबंध जोड़ने के लिए हमेशा नए-नए रास्ते निकालते रहता है, जिसे वह ईश्वर नहीं कहता, उसे वह देख नहीं पाता। फिर भी वह उसे अपने अन्दर अनुभव करता है। प्रत्येक व्यक्ति को अपने होने की अनुभूति होती है। व्यक्ति स्वयं आगे बढ़ने के साथ-साथ प्रकृति को भी अपने सामिप्यता के साथ सामंजस्य बनाने का प्रयास करता है। किसी वस्तु, पदार्थ या विचारों के प्रति सौन्दर्य और उसका अनुभव मानव जीवन को सदैव प्रभावित करता रहा है और प्रकृति मानव जीवन का मूल आधार है। प्रकृति के सौन्दर्य मोह से कोई भी मनुष्य बिना आकृष्ट हुए नहीं रह सकता प्रकृति अज्ञेय के लिए भाई बंधु जैसे हैं। अज्ञेय कहते हैं कि—

**“बंधु है नदिया: प्रकृति भी बंधु है
और क्या जाने कदाचित
बंधु
मानव भी ।”²**

कविता की इन पंक्तियों में अज्ञेय को प्रकृति पर इतना विश्वास है कि नदी को मानव से अधिक अपना और विश्वसनीय मानते हैं। वर्तमान परिवेश में जो रिश्तों में दूरियाँ, ईर्ष्या, अविश्वास आदि का स्थान अधिक महत्व रखने लगा है वहीं अज्ञेय ने प्रकृति को उसमें भी खासकर नदियों को अपना बन्धु मानते हैं। वे पूर्ण प्रकृति को अपना बंधु-बांधव मानते हैं। जिसके माध्यम से यह भूमि पर रहने वाले प्रत्येक जीव को जीने का सहारा मिलती है। अज्ञेय की कविताओं में हिन्दी महीनों के नाम का प्रयोग प्रायः दिखाई देता है। माघ, चैत, हेमंत, वसंत, फागुन आदि नामों के साथ लोकजीवन का सौन्दर्य दिखाई देता है। माघ-फाल्गुन-चैत की इस कविता में क्रमशः मौसम के करवट लेने का दृश्य अज्ञेय ने बहुत सुन्दरता से उभारा है—

“आया हचकोला फाग का
खग लगे परखने नए-नए सुर,
अपने-अपने राग का,
बिसरा कर सुध कल बन जाएगा,
यही बगूला आग का,
बिगड़ी बयार को ले जाने दो,
सूखे पीले पाँत पुरानी चैत के
इठलाती आयी फुनगी,
पावस में डोल उठी हरखाई

नैया-दिन बदला उनका अब काम खेवैया ।”³

अज्ञेय को प्रकृति से अत्यंत लगाव है। उनका मानना है कि प्रकृति असीम सौन्दर्य से परिपूर्ण है। उसका रूप अत्यंत मनमोहक, अवर्णनीय तथा अद्भुत है। मनुष्य सबसे पहले प्रकृति के गोद में ही अपने चक्षु खोले तथा प्रकृति के साथ ही पले-बढ़े और उच्च तथा उन्नत बने। वन, पर्वत, वृक्ष, लताएँ द्वीप, समुद्र, महाद्वीप, नदी-झरने, पशु-पक्षी सब प्रकृति ही अंग है। यह प्रकृति में ही अपने विभिन्न रूपों द्वारा मानव को हमेशा अपनी ओर आकर्षित करती है, प्रकृति कभी कोयल ललित किसलयों एवं पराग से पूरित बसन्त ऋतु का स्वरूप धारण करके हमारे हृदय को बरबस अपनी ओर खिंचती है, तो कभी तड़ित किरणों द्वारा अग्नि वर्षा द्वारा हमें भयभीत कर देती है। कभी बादलों के द्वारा गगन मण्डल में खूबसूरत, वर्षा सुन्दरी के रूप में हमारे हृदयों को प्रसन्न कर देती है। अज्ञेय ने अपनी कविता में व्यक्तित्व की प्रधानता पर जोर दिया है फिर भी प्रकृति के प्रति उपेक्षा नहीं दिखाई दी तथा उनकी कविता में प्रकृति के विविध रूपों का चित्रण हुआ है। अज्ञेय जी ने चिन्ता, इत्यलम तथा भग्नदूत इत्यादि काव्य रचनाओं में प्रकृति के सुन्दर चित्रों का वर्णन किया है। इत्यलम काव्य संग्रह की ‘आयी’ (बसन्त के एक दिन) की पंक्तियाँ द्रष्टव्य है—

**“फूल काँचनार के
प्रतीक मेरे प्यार के।
प्रार्थना—सी अर्धस्फुट काँपती रहे कली,
पत्तियों का सम्पुट, निवेदिता ज्यों अंजली।
आए फिर दिन मनुहार के, दुलार के,
फूल काँचनार के!
सुमन—वृंत बावले बबूल के!
झोंके ऋतुराज के बसन्ती दुकूल के ।”⁴**

अज्ञेय नई कविता के पुरोधा माने जाते हैं। जिस



व्यक्ति ने सबसे अत्यधिक बदनामी अपने सिर पर नई कविता के लिए ओढ़ी हो वह व्यक्ति भला प्रकृति का अपने इर्द-गिर्द कैसे नहीं महसूस कर सकता है। अज्ञेय के जितने भी काव्य हैं उनमें सृष्टि व्यष्टि तथा समष्टि और उनके मध्य मधुर संबंधों को निरूपण बहुत ही बेहतरीन तरीके से किया गया है। प्रकृति ही मानव के अनमोल जीवन का मुख्य आधार माना गया है। भोर की किरण कवि को भोर का आनन्द प्रदान करती है और जिसमें कवि सोच-विचार करके मानवीकरण रूप का आरंभ करता है और कहता है कि—

“तू नहीं कहेगा ?

मैं फिर भी सुन ही लूँगा

किरण भोर की पहली भोलेपन से बतलावेगी।

झरना शिशु सा अनजान उसे दुहरावेगा

धोंध गीली पीली-रेती पर धीरे-धीरे आँकेगा

पत्तों का मर्मर कन बतियों में

जहाँ-वहाँ फैलावेगा

पंछी की तीखी कूक —

फरहरे-मढ़े शल्य-सी आसमान पर टाँकेगी

फिर दिन सहसा खुलकर —

उसको सब पर प्रकटावेगा।

निर्मम प्रकाश से सब कुछ पर —

सुलझा सब कुछ लिख जावेगा।”⁶

प्रकृति हमें और हम प्रकृति को अत्यधिक प्रेम करते हैं। यह हमारे चारों ओर फैली हुई है और इसकी छटा हमें अपनी ओर आकृष्ट करती रहती है। व्यक्ति जन्म से ही प्रकृति के साथ अपना सामन्जस्य बैठा लेता है और जीवनपर्यन्त ये प्रकृति को अपना सहचर मान लेता है। यह कहने की कोई आवश्यकता नहीं कि मनुष्य का जीवन प्रकृति के बिना मुश्किल ही नहीं अपितु असंभव भी प्रतीत होता है। व्यक्ति अपनी श्वास से लेकर प्रत्येक चीजे प्रकृति से ही प्राप्त करता है जिससे उसकी मूलभूत आवश्यकता की पूर्ति हो सके भोजन, वस्त्र और आवास भी हमें प्रकृति प्रदत्त ही है। प्रकृति ने ही मानव के जीवन को सरल और संभव बनाया है। जल, भूमि, वायु, प्रकाश, पर्वत, झील, नदी, झरना इत्यादि प्रकृति के ही श्रृंगार सब हैं — अज्ञेय ने प्रकृति को माँ मानकर अपूर्व शांति से जीवन जीया। उसके विभिन्न सौन्दर्य के आयामों को निहारा है जब खुद को शहर के परिवेश में पाता है तो मन में बेचैनी को भूल जाता है और फूल, पत्ते, पृथ्वी आदि का वर्णन करता है—

“क्षण भरा भुला सकें हम

नगरी की बेचैन बुदकती गड्ड-गड्ड अकुलाहट

और न माने उसे पलायन

क्षण भर देख सकें आकाश, धरा, दूर्वा, मेघाती

पौधे, लता दोलती, फूल, झरे, पत्ते, तितली-मुनगे

फुनगी पर पूँछ उठाकर इतराती छोटी-सी चिड़िया

और न सहसा चोर कह उठे मन में—

प्रकृतिवाद स्खलन

क्योंकि युग जनवादी है।

क्षण-भर अनायास हम याद करें।

तिरती नाव नदी में।”⁶

साहित्य का निर्माण केवल कल्पना एवं भावना का सामन्जस्य अनिवार्य होता है। काव्य केवल भावना से सृजित नहीं होता। काव्य की मूल भावना ही संवेदना है। सर्वोत्कृष्ट साहित्य सृजन के लिए कल्पना, भावना तथा संवेदना का होना अत्यंत अनिवार्य है। अज्ञेय कवि के रूप में जीवन के प्रत्येक क्षण का आनन्द लेते हैं और जीवन के आस्वादन में विश्वास करते हैं। उनकी कविताओं में अपने तो ‘सेतु के रूप’ में देखते हुए भी नारायण की आँखों की व्यथा अपनी आँखों में ले लेते हैं तथा यह एक मिसाल कायम करते हैं कि दूसरे का दुख अपने अन्दर कैसे समेटा जा सकता है कवि पूरे प्रकृति को अपना सगा मानते हैं। कहते हैं कि प्रकृति के जितने भी अंश हैं के हमारे मित्र हैं, कहीं पर यमुना नदी की गाथा का वर्णन करते हैं तो कहीं पर बन्धुत्व की बात करते हैं। पंक्तियाँ द्रष्टव्य है—

“इसी जमुना के किनारे एक दिन

मैंने सुनी थी दुःख की गाथा तुम्हारी

और सहसा कहा था बेबस:

तुम्हें मैं प्यार करता हूँ

गहे थे दो हाथ मौन समाधि में स्वीकार की

इसी जमुना के किनारे आज

मैंने फिर कहा है वह

तुम्हें मैं प्यार करता हूँ।

और उत्तर में सुनी है दुःख की गाथा तुम्हारी

गहे हैं दो हाथ मौन समाधि में उत्सर्ग की

X X X X X

बन्धु है नदियाँ : प्रकृति भी बन्धु है

और क्या जाने कदाचित

बन्धु

मानव भी।”⁷



अज्ञेय प्रकृति के चितरे कवि रहे हैं, कवि ने अपने जीवन को प्रकृति के साथ भोगा है। प्राकृतिक दृश्यों और उसके विविध आयामों को जीवन्त होते हुए भी अनुभव किया है। कवि ने जब प्रकृति को देखा तो महसूस किया कि प्रत्येक क्षण आत्मीयता से जिया और भोगा है। जो भी पेड़-पौधे हैं उनकी पत्तियाँ डाल पर लगी हुई है वह पत्ती भी कवि के नजर से बच नहीं पाई। कवि ने उस वृक्ष के पत्तियाँ का यथार्थ चित्रण किया है। पंक्तियाँ द्रष्टव्य है—

“सरसराती

पत्ती ने डाल से

मुक्ति तो माँगी थी

पर यह नहीं सोचा था

कि उनकी माँग

मान ली जायेगी

यह मुक्ति क्या जाने मृत्यु हो

भरे बसन्त में.....

यह सोच

वह पीली पड़ गई।

और फैला में थरथराती

झड़ गई...।”

प्रकृति और साहित्य का आपसी तारतम्यता सदा-सदा से रहा है। आदिकवि वाल्मीकि, कालिदास, तुलसीदास आदि अनेक कवियों ने प्रकृति के विविध रूपों और सौन्दर्यों का अद्भुत चित्रण किया है। यहाँ अज्ञेय का महत्व प्रकृति के साथ नई विचारधारा और नई अभिव्यक्ति करने से है। अज्ञेय नए-नए उपमानों से प्रकृति के विविध स्वरूपों का पूरे आत्मीयता के साथ चित्रण किया है। प्रकृति के रूप में खीली धूप की चर्चा उन्होंने की है और कहा कि धीरे-धीरे प्रभात होते ही सूर्य का प्रकाश फैल रहा है। धूप वातावरण में गर्मी पैदा हो रही है जिसमें जीवन्त रात्रि को विश्राम करते हैं और जब उठते हैं तो प्रकृति के विभिन्न दृश्यों को देखते हैं। कवि अज्ञेय प्रकृति की अद्भुत छटा को देखकर दृश्यों विभोर हो उठते हैं। पंक्तियाँ द्रष्टव्य है—

“मैंने धूप से कहा : मुझे थोड़ी गरमाई दोगी उधार?

चिड़िया से कहा : थोड़ी मिठास उधार दोगी ?

मैंने घास की पत्ती से पूछा: तनिक, हरियाली दोगी

तिनके की नोंक भरा ?

शंखपुष्पी से पूछा : उजास दोगी

किरण की ओक भरा ?

मैंने हवा से माँगा : थोड़ा खुलापन बस एक प्रश्वास

लहर के एक रोम की सिहरन भर उल्लास
मैंने आकाश से माँगी

आँख की झपकी भर अस्मिता उधार।”⁹

संसार की नश्वरता की बात करते हुए अज्ञेय वायु को एक जीवन के रूप में सक्रियता पर जोर देते हुए कहा बताते हैं। वायु को क्रियाशीलता से जोड़ते हैं जिससे वायु के प्रति उनकी नवीन अवधारणा को दर्शाता है। नवीन धारणा और नवीन सौन्दर्य की दृष्टि ज्ञात होती है अज्ञेय के काव्य में या काव्य रचनाओं को अध्ययन करने से पूर्व हमें यह ज्ञात करना होगा कि पाठक का दिल और दिमाग में एक ऐसा प्रतिबिम्ब बने जिससे यह प्रतीत हो कि अज्ञेय आधुनिक कवि हैं। अज्ञेय प्रयोगशील कवि होने के साथ-साथ प्रगतिवादी कवि हैं। नई कविताओं में प्रगतिवाद का सामाजिक ताना-बाना से मुक्त नहीं रखा जा सकता है। कवि का मानना है कि यह संसार मरनशील है, नश्वर है, अतः कवि अज्ञेय अपनी कविताओं में नश्वरता की बात करते हैं तथा कहते हैं कि—

“तुम पर्वत हो अभ-भेदी शिला खण्डों के गरिष्ठ पुंज
चापे इस निर्झर को रहो

रहो

तुम्हारे रंघ-रंघ से

तुम्हीं को रस देता हुआ

फूट कर बहूँगा

तुम्हीं ने दिया यह स्पन्द

तुम्हीं ने धमनी में बाँधा है लहू का रंग

यह मैं अनुक्षण जानता हूँ

गति जहाँ सब कुछ है

तुम धृति पारमिता जीवन के सहज छन्द

तुम्हें पहचानता हूँ

माँगों तुम चाहे जो : माँगोगे दूँगा :

तुम दोगे जो मैं सहूँगा।”¹⁰

अज्ञेय जी का प्रकृति-चित्रण भावपूर्ण रूप से दिखाई पड़ता है तथा अज्ञेय जी ने अपनी कविताओं में प्रकृति के विभिन्न स्वरूपों, आलम्बनों उद्दीपन तथा अलंकार के रूपों को बहुत ही सरल तरीके से प्रकट करने का सफल प्रयास किया है। अज्ञेय का जो प्रकृति प्रेम है वह पंत जी से इतर है प्रकृति जो विविध रूपों में हमारे समक्ष उपस्थित है हर क्षण नवीन नूतन दिखाई पड़ता है करि प्रस्तुत कविता में प्रकृति को साक्षात् स्वरूप प्रकट करता है और कहता है कि—



“सींच रही है ओस
हमारे गाने
धने कुहासे में
क्षिपते
चेहरे पहचानते
खम्भों पर बतियाँ
खड़ी है मीठी
ठिठक गए है
पल—छिन
आने—जाने
उठी ललक लिए उमँगा अवकहनी अलसानी
जगी लालसा मीठी
खड़े रहो ढिग गहो हाथ पाहुन मनमाने
ओ प्रिय, रहो साथ
भर—भर कर अँजुली पी लो।”¹¹

अज्ञेय की कविताओं में लगभग सभी रसों का परिपाक हुआ है यहाँ तक कि इस रसों को पुष्ट करने के लिए कवि को ज्यादा अपनी ओर से कोई प्रयास वही करना पड़ी डॉ. रमाशंकर शुक्ल ‘रजाल’ ने उचित ही लिखा है कि— “काव्य का संबंध यदि रह सकता है और हो सकता है तो प्रकृति से प्रकृति का सौन्दर्य हमें अपनी दुनिया से दूर एकाग्र करके हमें शेष दुनिया के अलग कर देता है और हम प्रकृति में पूर्ण रूप से तन्मय होकर आत्मानुभूति की स्थिति प्राप्त कर लेते हैं।”¹²

कवि प्रकृति के साथ मिलकर उनसे नवजीवन का अनुभव करता है आज के परिवेश में व्यक्ति प्रकृति से दूर होता जा रहा है चूँकि वह शहर के वातावरण में रहकर प्रकृति को भूल हो चुका है। शहर में धूल भरी जिंदगी—प्रदूषण से भरा आकाश, जल, मिट्टी का नाम नहीं अर्थात् पूरी तरह से कृत्रिमता भर दिया गया है उस परिवेश में जब कभी कवि सोचता है कि प्रकृति की छटा का आनन्द कितना प्रभामयी होता है तो वह पाता है कि प्रकृति के जितने भी उपमान हो कवि उसमें अपने आप को समाहित कर लेता है। पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं—

“हाँ मुझे स्मरण है :
दूर पहाड़ी से काले मेघों की बाढ़
हाथियों का मानों चिधाड़ रहा हों यूथ
घरघराहट चढ़ती बँहिया की
रेतीले कगार का गिरना छप—छड़ाप
झंझा की फुफकार तप्त

पेड़ों का अररा कर टूट—टूट कर गिरना
आँखों की करी चपत।”¹³

निष्कर्ष—

उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि अज्ञेय के काव्य में अनूठे भाव एवं कला पक्ष के अद्भुत समागम है। छायावादोत्तर कविता में अज्ञेय का एक विशिष्ट योगदान है अज्ञेय पर चिंतन के विविध फलक विद्यमान दिखाई देती हैं। प्रकृति के चितरे कवि अज्ञेय से हिन्दी साहित्य का कोई भी विधा अछूती नहीं रहीं। कवि की सभी रचनाएँ उत्कृष्टता के साथ समाज प्रकृति से व्यक्ति और समष्टि को जोड़ती हुई दिखाई देती है। इनकी कविताओं में प्रकृति के अंग पर्वत, नदी, धूप, घास, पानी, समुद्र, लता, पशु, पक्षी आदि का अद्भुत चित्रण हुआ है। अज्ञेय सचमुत्त प्रकृति को अपने हृदय के अन्तःकरण में प्रविष्ट कर अपने अनुभवों को समाज तक प्रेषित करने में सफल सिद्ध हुए है।

संदर्भ संकेत

1. अज्ञेय (संपा.)— तारसप्तक, असाध्य वीणा, नई दिल्ली : भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, सातवाँ संस्करण—1996, पृष्ठ—123।
2. अज्ञेय (संपा.)— सदानीरा—1, नई दिल्ली : नेशनल पब्लिशिंग, 1986, पृष्ठ— 245।
3. अज्ञेय (संपा.)— सदानीरा—1, नई दिल्ली : नेशनल पब्लिशिंग, 1986, पृष्ठ— 205।
4. अज्ञेय, इत्यलम (आयी : बसंत के एक दिन), नई दिल्ली : प्रगति प्रकाशन, 1946, पृष्ठ—63।
5. पालीवाल, कृष्णदत्त (संपा.)— अज्ञेय रचनावली (हारीहास पर क्षणभर), नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन, 2016, पृष्ठ— 79।
6. पालीवाल, कृष्णदत्त (संपा.)— अज्ञेय रचनावली (बंधु हैं नदियाँ), नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन, 2016, पृष्ठ— 295।
7. पालीवाल, कृष्णदत्त (संपा.)— अज्ञेय रचनावली (पक्षधर), नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन, 2016, पृष्ठ— 157।
8. पालीवाल, कृष्णदत्त (संपा.)— अज्ञेय रचनावली (विश्वप्रिया), नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन, 2016, पृष्ठ— 131।
9. पालीवाल, कृष्णदत्त (संपा.)— अज्ञेय रचनावली (आँगन के पार द्वार), नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन, 2016, पृष्ठ— 139।
10. अज्ञेय (संपा.)— बाबरा अहेरी (आज तुम शब्द न दो), नई दिल्ली : वाग्देवी प्रकाशन, 1954, पृष्ठ— 11।
11. अज्ञेय (संपा.)— बाबरा अहेरी (चाँदनी जी लो, सुनहरे शैवाल), नई दिल्ली : वाग्देवी प्रकाशन, 1954, पृष्ठ— 48।
12. मिश्र, डॉ. दुर्गा शंकर. अज्ञेय का काव्य एक विश्लेषण. लखनऊ : हिन्दी साहित्य भण्डार, 1971, पृष्ठ— 76।
13. अज्ञेय — अपने अपने अजनबी, नई दिल्ली : भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, 1961, पृष्ठ— 28।





Received: 22 Jan., 2025; Accepted: 28 Feb. 2025, Published: January-March, 2025 Issue



महाकवि भवभूति की नवीन कल्पना का उद्भव (छाया सीता) : एक विश्लेषण



— सुजाता प्रभाकर
शोध गवेषिका — संस्कृत विभाग,
ललित नारायण मिथिला
विश्वविद्यालय, कामेश्वर नगर,
दरभंगा — 846004 (बिहार)

ई. मेल—
mrinalkumarbiet@gmail.com

सारांश

महाकवि भवभूति की अद्भूत कल्पना छाया अंक की उपयोगिता इस विषय में है कि राम जिस दुःख को निरन्तर बारह वर्षों तक अपने अन्तःकरण में दबाये हुए व्यथित किन्तु मूक बने रहे, उसे अनावृत करके मन को कुछ शांत करने का अवसर पा सकें। साथ ही वे स्वयं को, अपने राजधर्म को और जिस प्रजा को प्रसन्न करने के लिए प्राणों से भी प्रिय सीता का परित्याग किया, किन्तु जिसने बारह वर्षों के अन्दर कभी भूलकर भी सीता का नाम तक नहीं लिया, उस लोक को भी उपालम्भ देने का अवसर पा सकें। यह महाकवि की विधान—चातुरी ही है कि, इस अंक में सीता तो राम को देख सकती है किन्तु राम सीता को न देख सकें। इससे यह बात बनती है कि राम की दारुण दशा देखकर तथा अपनी स्वर्णमयी मूर्ति की चर्चा राम के मुख से सुनकर जानकी द्रवित होकर राम की ओर अभिमुख होती है। उनका राम के प्रति बारह वर्षों तक निरन्तर बना हुआ निर्वासन जनित क्षोभ नष्ट हो जाता है और हृदय पूर्ववत् निर्मल, निष्कलुष एवं आत्मीयता पूर्ण प्रेम से ओत—प्रोत हो जाता है।

महाकवि भवभूति विरचित उत्तररामचरितम् का तृतीय अंक 'छाया सीता' के रूप में हमारे समक्ष उपस्थित है। छाया सीता के रूप में यह अंक महाकवि की नवीन कल्पना का अनूठा प्रयोग है जिसे महाकवि ने मर्यादित किन्तु यथार्थ आलोचना के रूप में प्रस्तुत किया है।¹ जिस निर्वासन रूपी अन्तरदाह की व्यथा को जानकी स्वयं प्रकट हो कर नहीं कह सकती उसे छाया रूप धारण कर सशक्त रूप से प्रस्तुत करती है। सम्पूर्ण तृतीय अंक में जानकी छाया के रूप में अदृश्य होकर उपस्थित है। इस अंक में जानकी की मनोदशा का चित्रण जितना हृदय स्पर्शी है उतना ही जीवंत और यथार्थ भी।²

इस अंक के प्रारंभ में ही नदी देवी मुरला ने सीता वियोग से उत्पन्न राम की अवस्था का वर्णन करते हुए कहा है कि राम सीता वियोग जन्य अपार शोक—सन्ताप की पीड़ा का अपने हृदय में उसी प्रकार अनुभव कर रहे हैं जैसे पुटपाक की विधि में होने वाला अन्तर्दाह केवल मिट्टी के पात्रों के भीतर ही

होता है बाहर प्रकट नहीं होता।³

अनिर्भिन्नो गभीरत्वादन्तर्गूढधनव्यथ।

पुटपाकप्रतीकाशो रामस्य करुणो रसः।।

— (उ. रा. -3/1)



इस अन्तर्दाह का कारण यह है कि जानकी का परित्याग उन्होंने स्वयं किया था लोकरंजन हेतु अतः इस विषय में अन्य कोई उनकी सहायता भी नहीं कर सकता है।¹

यहाँ महाकवि की लेखनी का उत्कर्ष ही है कि उन्होंने बड़ी ही कुशलता पूर्वक नायक राम को पुनः पंचवटी प्रवेश कराया है, जिससे तमसा, मुरला, गोदावरी, वासन्ती की सीता को छाया रूप में राम के समक्ष लाने की योजना सफल हो सके।

इस योजना के अनुरूप अगस्त्य पत्नी लोपामुद्रा का सन्देश मुरला गोदावरी से कहने जा रही है— जानकी वियोग से अत्यन्त दुर्बल राम अगस्त्याश्रम से लौट कर पंचवटी पहुँचन पर सीता संग विताये गये पूर्व साक्षी प्रदेशों को अवश्य देखें और पूर्व वृत्तान्त की स्मृति से विह्वल हो उठेंगे। अतः गोदावरी उन्हें सम्भालने के लिए तत्पर रहें।²

वीचीवातैः शोकरक्षोदशीतैराकर्षद्भिः—

पद्मकिञ्जल्कगन्धान।

मोहे मोहे रामभद्रस्य जीवं स्वैरं—

स्वैरं प्रेरितैस्तर्पयोति।।

— (उ. रा. —3/2)

इस बीच तमसा राम के संजीवन का मौलिक उपाय सीता को प्रस्तुत करती है क्योंकि सीता किसी कार्य के निमित्त गोदावरी के समीप आयी है। विलगाव का दुःख केवल राम के हृदय को ही नहीं जला रहा, अपितु, इस दुःख से जानकी की शरीर काया भी जीर्ण—शीर्ण हो गयी है जिसका वर्णन महाकवि ने अत्यन्त ही सुन्दर रूप में किया है।³

किसलयमिव मुग्धं बन्धनाद् विप्रलूनं

हृदयकुसुमशोषी दारुणो दीर्घशोकः।

ग्लपयति परिपाण्डु क्षाममस्याः शरीरं

शरदिज इव धर्मः केतकी गर्भपत्रम्।।

— (उ. रा. — 3/5)

“अर्थात् हृदय रूपी कमल को सुखाने वाला कठोर चिरस्थायी शोक, डंठल से टूटे हुए सुन्दर नव पल्लव के समान अतिशय पीतवर्ण और कृशकाय जानकी के शरीरह को उसी प्रकार सुखा रहा है जैसे शरत्कालीन धूप केतकी पुष्प के भीतर के पत्ते को मुरझा देता है।”⁴

वस्तुतः पंचवटी के पूर्व निवास काल में लव—कुश जन्म से पूर्व जानकी किसी गजशावक को पुत्रवत् पालती

है, जो उसकी मातृत्व भावना को स्पष्ट करता है। स्वयं संतान रहित होने से वे अपनी मातृत्व भावना की पूर्ति उसी गजशावक के पालन से पूर्ण करती है। सम्प्रति दण्डकारण्य में उसे यह सूचना मिलती है कि उसके पालित शावक पर किसी उनमत्त गज ने आक्रमण कर दिया है।⁵

फलतः जानकी घबरा कर अनायास ही कह उठती है—

“हा धिक आर्यपुत्र परित्रायस्व

परित्रायस्व मम तं पुत्रकम्।”

— (उ. रा. पृष्ठ संख्या—147)

अर्थात् आर्य पुत्र मेरे पुत्र को बचाइये यह कहते हुए मूर्च्छित हो जाती है। यही प्रसंग जानकी के कोमल नारी सुलभ हृदय पर आघात है, वस्तुतः कवि यहाँ जानकी के सुप्त मातृत्व भाव को जगाना चाहते हैं, गज शावक जानकी की सन्तति का प्रतीक बनकर उपस्थित हुआ है अतः कोई भी माता अपनी सन्तान को संकट में देखकर व्याकुल होती है, और रक्षण हेतु सर्वप्रथम अपने पति का ही स्मरण करती है।⁶

तत्पश्चात् मूर्च्छित जानकी राम के स्वर का श्रवण कर चैतन्यता प्राप्त कर भय और आनन्द की मिश्रित अवस्था का अनुभव करते हुए चकित एवं उत्कण्ठित हो जाती है। यद्यपि जानकी निर्वासन रूपी पीड़ा से ग्रसित है तथापि उसके हृदय में राम के दर्शन की अभिलाषा प्रसुप्त नहीं हो सकी थी।⁷

राम की चिरपरिचित गम्भीर ध्वनि जानकी के मुरझाए मुख पर संजीवनी बिखेर देती है। इस समय जानकी अतिशय उत्कण्ठित होकर अपनी दृष्टि राम के दर्शन पथ पर बिछा देती है।

जानकी नदीदेवी तमसा से कहती है— “मैं ने स्वर के संयोग से पहचान लिया कि आर्यपुत्र ही हैं।”⁸

“भगवति! किं भणस्यपरि स्पुटेति मया पुनः स्वरसंयोगेन प्रत्यभिज्ञातमार्यपुत्र एव व्याहरतीति।”

— (उ. रा. पृष्ठ संख्या—149)

तब तमसा जानकी से कहती है शूद्र को दण्ड देने के लिए राजा राम दण्डकारण्य में आये हैं। यहाँ जानकी राम के धर्मपरायणता की प्रशंसा करती है और प्रसन्नता व्यक्त करती है। परन्तु यह प्रसन्नता जानकी के मुख पर देर तक नहीं टिक पाती है क्योंकि जैसे ही उसकी उत्सुक दृष्टि राम पर पड़ती है वह उनके अप्रत्याशित दुर्बल पीत



वर्ण को देख कर सन्न रह जाती है। इस आघात के लिये जानकी का मन स्वप्न में भी तैयार नहीं था। पति की क्षीण तथा दुर्बल आकृति से कराहती हुई आत्मा को जानकी एक पतिव्रता की दृष्टि से क्षण भर में ही पहचान लेती है।¹²

यूँ तो राम का प्रत्यक्ष आगमान जानकी के हर्ष को दुगुना करने में सक्षम था। परन्तु यह अकल्पनीय सुख चिरकाल तक टिक नहीं पाया। यहाँ विशेष ध्यातव्य है कि एक तो जानकी निर्वासन रूपी पीड़ा से ग्रसीत है और दूसरी पति की यह स्थिति देखकर उसका हृदय और भी व्याकुल हो जाता है। स्पष्टतः जानकी स्वकीय निर्वासन रूपी दण्ड को विस्मृत नहीं कर सकी है तथा राम के सम्मुख आ जाने पर अपराधी के रूप में स्वयं की उपस्थिति की परिकल्पना से और भी भयभीत हो जाती है।¹³

सीता के अन्तःकरण का यह संघर्ष विश्वास और अविश्वास, प्रणय एवं आक्रोश का होता है। इस अन्तरद्वन्द की पीड़ा से कराहती हुई सीता तमसा का आवलम्ब लेकर मूर्च्छित हो जाती है।¹⁴

“हा कथं प्रभातचन्द्रमण्डला पाण्डुरपरिक्षामा दुर्बले नाकारेणायं निजसौम्यगम्भीरानुभावमात्र प्रत्यभिज्ञातव्य आर्यपुत्र एवं। भगवति तमसे! धारय माम्”

— (उ. रा. पृष्ठ संख्या-151)

तदन्तर राम अपने अन्तःकरण की पीड़ा को व्यक्त करते हुए कहते हैं कि सीता विरह से उत्पन्न शोक रूपी अग्नि जो मेरे हृदय में चिरकाल से विद्यमान थी, वह पंचवटी को देखने से बड़ी व्यग्रता पूर्वक प्रज्ज्वलित होने वाली है। अर्थात् मेरी मूर्च्छा तो अग्नि का धुआँ है अतः इस धुएँ के तुरन्त बाद ही मेरा दुःख अग्नि के समान फूट पड़ेगा जो असह्य होगा। ऐसा कहते हुए राम सीता का स्मरण करते हैं और मूर्च्छित हो जाते हैं।¹⁵

“अन्तर्लीनस्य दुःखाग्नेरधोद्धामं ज्वलिष्यतः।

अत्पीड इव धूमस्य मोहः प्रागावृणोति माम्।।”

— (उ. रा. 3/9)

सम्भवतः सीता प्रथम वार स्वयं के निर्वासन रूपी पीड़ा से पति को व्याकुल देखकर एवं उनके अन्तरमन की दुःख रूपी अग्नि के समान ज्वलन विचारों को सुनकर तथा मूर्च्छित राम को देखकर कहती है— “धिक्कार है धिक्कार है, मुझ मन्दभागिनी को पुकार कर नीलकमल सदृश नेत्रों को बन्द करन आर्यपुत्र मूर्च्छित हो गए।”¹⁶ तत्पश्चात् जानकी नदीदेवी तमसा से निवेदन करती है कि

वे राम का प्राणोदय करें।

प्रत्युत्तर में तमसा जानकी को ही राम को अपने करकमलों के स्पर्श से संजीवित करने की आज्ञा देती है।¹⁷

“त्वमेव ननु कल्याणि सञ्जीवय जगत्पतिम्।

प्रियस्पर्शो हि पाणिस्ते तत्रैष निरतो जनः।।”

— (उ. रा. पृष्ठ संख्या-3/10)

चूँकि लोकमर्यादा पालक राम की आज्ञा के बिना परित्यक्ता सीता को राम को स्पर्श करने का अधिकार नहीं था, क्योंकि सम्भव है वे सीता द्वारा की गई अपनी मूर्च्छा को दूर करने की इस अनाधिकार चेष्टा पर क्रोध व्यक्त कर सकते थे। फलतः सीता तमसा से ही राम को बचाने की विनती करती है।¹⁸ निर्वासित किये जाने पर भी जानकी का राम के प्रति प्रगाढ़ प्रेम एवं राम की रक्षा के लिए व्याकुल होना तमसा से प्रार्थना करना, यह सब जानकी के पातिव्रत्य धर्म के बाहुल्य को प्रकट करता है।¹⁹

राम की मूर्च्छा ठीक होने पर जब वासन्ती रोती हुई राम को कठोर वचन कहती है तो सीता वासन्ती को ही टोकती है और आगे कुछ राम के विरुद्ध बोलने से रोकती है। सीता के अनुसार— “आर्यपुत्र सभी के पूजनीय हैं” यह सब भाग्य का दोष है अतः उसमें आर्यपुत्र की कोई गलती नहीं है”।

अतः विशेष ध्यातव्य है महाकवि भवभूति की अद्भूत कल्पना छाया अंक की उपयोगिता इस विषय में है कि राम जिस दुःख को निरन्तर बारह वर्षों तक अपने अन्तःकरण में दबाये हुए व्यथित किन्तु मूक बने रहे, उसे अनावृत करके मन को कुछ शांत करने का अवसर पा सकें। साथ ही वे स्वयं को, अपने राजधर्म को और जिस प्रजा को प्रसन्न करने के लिए प्राणों से भी प्रिय सीता का परित्याग किया, किन्तु जिसने बारह वर्षों के अन्दर कभी भूलकर भी सीता का नाम तक नहीं लिया, उस लोक को भी उपालम्ब देने का अवसर पा सकें।²⁰

यह महाकवि की विधान-चातुरी ही है कि, इस अंक में सीता तो राम को देख सकती है किन्तु राम सीता को न देख सकें। इससे यह बात बनती है कि राम की दारुण दशा देखकर तथा अपनी स्वर्णमयी मूर्ति की चर्चा राम के मुख से सुनकर जानकी द्रवित होकर राम की ओर अभिमुख होती है। उनका राम के प्रति बारह वर्षों तक निरन्तर बना हुआ निर्वासन जनित क्षोभ नष्ट हो जाता है और हृदय पूर्ववत् निर्मल, निष्कलुष एवं आत्मीयता पूर्ण प्रेम

मालतीमाधव में रस, गुण, रीति एवम् अलंकारगत औचित्य



— प्रो. (डॉ.) बिन्दू सिंह
विभागाध्यक्ष – संस्कृत विभाग,
के. के. महाविद्यालय,
इटावा-206001 (उत्तर प्रदेश)

ई. मेल—
profbindusingh@gmail.com

मालतीमाधव प्रकरण में महाकवि भवभूति का रस, गुण, रीति, एवम् अलंकारगत औचित्य के निर्वाह में पूर्ण सफलता प्राप्त हुई है।

यहाँ इनके उदाहरण प्रस्तुत कर रहे हैं।

मालतीमाधव में रसगत औचित्य -

महाकवि भवभूति ने मालतीमाधव प्रकरण में शृङ्गार, करुण, वीभत्स, रौद्र, वीर, अद्भुत और भयानक रसों की संसृष्टि की है। रसों के संयोजन में कवि पूर्णतया सफल सिद्ध हुआ है।

1- शृङ्गारस - निम्न पद्यों में कवि ने शृङ्गारस की अभिव्यञ्जना की है -

तामिन्दुसुन्दरमुखीसुचिरं विभाव्य

चेतः कथंककथमपि व्यपवर्तते मे ।

लज्जां विजित्य विनयं विनिवार्य धैर्य -

मुन्मथ्य मन्थरविवेतमकाण्ड एव ।।¹

अत्रान्तरे किमपि वाग्विभवातिवृत्त -

वैचित्र्यमुल्लसितविभ्रममायताक्ष्याः ।

तद्भूरिसात्विकविकारमपास्तधैर्य -

माचार्यकं विजयि मान्मथमाविरासीत् ।।²

2- करुण रस - निम्नलिखित पद्य में कवि ने करुण रस का मार्मिक चित्रण किया है -

तरुणतमालनीलबहुलोन्नमदम्बुधराः

शिशिरसमीरणावधुतनूतनवारिकणाः ।

कथमवलोकयेयमधुना हरिहेतिमती -

र्मदकनीलकण्ठकलहैर्मुखराः ककुभः ।।³

3- वीभत्स रस - निम्न पद्य में कवि का वीभत्स रस सौन्दर्य दर्शनीय है -

उत्कृत्तओकृत्य कृत्तिप्र थममथ पृथुत्सेधभूयांसि मांसा -

न्यंसस्फिकपृष्ठीठाद्यवयवसुलभान्युग्रपूतीनि जग्धवा ।

आत्तस्त्राख्वान्त्रनेत्रः प्रकटितदशनः प्रेतरङ्कः करङ्गा -

दङ्गस्थादस्थिसंस्थं स्थपुटगतमपि क्रव्यमव्यग्रमत्ति ।।⁴

4- रौद्ररस - निम्नलिखित पद्य में रौद्ररस की अभिव्यञ्जना काव्य सौन्दर्य की श्रीवृद्धि कर रही है -

व्याघ्राघ्रातमृगीकृपाकुलमृगन्यायेन हिंसारुचेः

पाप ! प्राण्युपहारकेतनजुषः प्राप्तोऽसि मे गोचरम् ।

सोऽयं प्रागभवतैव भूतजननी मृध्नोमि खड्गाहति

व्यस्तस्कन्धकवन्धरन्धरुधिरप्राग्भारनिष्यन्दिना ।।⁵



5- वीररस -

धैर्यं निधेहि हृदये, हत एष पापः

किं वा कदाचिदपि केनचिदन्वभावि ।

सारङ्गसंहतिविधाविभक्तुम्भकूट -

कुट्टाकपाणिकुलिशस्य हरेः प्रमादः ।।⁵

6- अद्भुत रस - निम्नलिखित पद्य में अद्भुत रस की अभिव्यंजना द्रष्टव्य है -

कर्णाभ्यर्णविदीर्णसृक्कविकटव्यादानदीप्ताग्निभि -

र्दप्राकोटिविशङ्कः टैरत इतो धावद्विराकीर्यते ।

विद्युत्पुञ्जनिकाशकेशनयनभ्रूश्मश्रुजालैर्नभो ।

लक्ष्यालक्ष्यविशुष्कदीर्घवपुषामुत्कामुखानां मुखैः ।⁶

7- भयानक रस - निम्नलिखित श्लोक में भयानक रस की अभिव्यक्ति मनोरम है -

पृथुचलरसनोग्रमास्यगर्तं

दधति विदार्यं विशीर्णशुष्कदेहाः ।

चलदजगरघोरकोटराणां

द्युतिमिह दग्धपुराणरोहिणानाम् ।।⁷

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि रसगत औचित्य में महाकवि भवभूति को पूर्ण सफलता प्राप्त हुयी है।

मालतीमाधव में गुणगत औचित्य -

मालतीमाधव प्रकरण में महाकवि भवभूति को गुणों के संयोजन में पूर्ण सफलता प्राप्त हुयी है। इस प्रकरण में माधुर्य, ओज और प्रसाद इन तीनों ही गुणों के संयोजन में कवि सफल रहा है।

1- माधुर्यगुणगत औचित्य - मालतीमाधव प्रकरण में माधुर्यगुण का यथास्थान प्रयोग हुआ है। उदाहरण के लिए निम्नलिखित पद्यों का अवलोकन करें -

गमनमलसं शून्या दृष्टिः शरीरसौष्ठवं

श्वसितमधिकं किं न्वेतत्त्यात्किमन्यदतोऽथवा ।

भ्रमति भुवने कन्दर्पाज्ञा विकारि च यौवनं

ललितमधुरास्ते ते भावाः क्षिपन्ति च धीरताम् ।।⁸

परिमृदितमृणालीम्लानमङ्गप्रवृत्तिः

कथमपि परिवारप्रार्थनाभिः क्रियासु ।

कलयति च हिमांशोर्निष्कलङ्गस्य लक्ष्मी -

मभिनवकरिदन्तच्छेदकान्तः कपोलः ।।⁹

स्तिमितविकसितानामुल्लसद्भूलतानां

मसृणमुकुलितानां प्रान्तविस्तारभाजाम् ।

प्रतिनयननिपाते किञ्चिदाकुञ्चितानां

विविधमहमभूवं पात्रमालोक्तानाम् ।।¹⁰

2- ओजोगुणगत औचित्य - ओजोगुण के प्रयोग में कवि सर्वथा सफल रहा है। ओजोगुण के कतिपय उदाहरण -

प्रणयिसखीसलीलपरिहासरसाधिगतै -

र्ललितशिरीषपुष्पहननैरपि ताम्यति यत् ।

वपुषि वधाय तत्र तव शस्त्रमुपक्षितः

पततु शिरस्यकाण्डयमदण्ड इवैष भुजः ।।¹¹

कठोरास्थिग्रन्थिव्यतिकरघणत्कारमुखरः

खरस्त्रायुच्छेददणविहितवेगव्युपरमः ।

निरातङ्कः पङ्केष्वेव पिशितखण्डेषु निपत -

न्नसिर्गार्त्रगात्रं सपदि लवशस्ते विकिरतु ।।¹²

गाढोत्कण्ठकठोरेकेरलवधूगण्डाच्छपाण्डुच्छदै -

स्ताम्बूलीपटलैः पिनद्धफलितव्यानम्रपूगडुमाः ।

कल्लोलीफलजग्धमुग्धविकिरव्याहारिणस्तद्धवो

भागाः प्रेङ्गितमातुलुङ्गवृतयः प्रेयो विधास्यन्ति वाम् ।।¹³

3- प्रसादगुणगत औचित्य -

शरञ्जयोत्त्रा कान्तं कुमुदमिव तं नन्दयतु सा

सुजातं कल्याणी भवतु कृतकृत्यः स च युवा ।

गरयानन्योन्यप्रगुणनिर्माणनिपुणो

विधातुर्व्यापारः फलतु च मनोज्ञश्च भवतु ।।¹⁴

व्यतिषजति पदार्थानान्तरः कोऽपि हेतु -

र्न खलु बहिरूपाधीन्धीतयः संश्रयन्ते ।

विकसति हि पतङ्गस्योदये पुण्डरीकं

द्रवति च हिमरश्मावुद्गते चन्द्रकान्तः ।।¹⁵

अद्योर्जितं विजितमेव मया, किमन्य -

दद्योत्सवः फलवता मम यौवनस्य ।

यन्मे प्रसादसुमुखेन समुद्यतेयं

देवेन बान्धवधुरा मकरध्वजेन ।।¹⁶

दलति हृदयं गाढोद्वेगं, द्विधा तु न भिद्यते

वहति विकलः कायो मोहं न मुञ्चति चेतनाम् ।

ज्वलयति तनूमन्तर्दाहः, करोति न भस्मसात् ।

प्रहरति विधिर्मर्मच्छेदी, न कृतति जीवितम् ।।¹⁷

इस प्रकार देखते हैं कि महाकवि भवभूति मालतीमाधव प्रकरण में गुणों की योजना में सर्वथा सफल रहे हैं।



मालतीमाधव में रीतिगत औचित्य -

मालतीमाधव प्रकरण में महाकवि भवभूति ने वैदर्भी, गौडी, पाञ्चाली और लाटीरीति का यथास्था सम्यक् प्रयोग किया है। यहाँ इन रीतियों के उदाहरण प्रस्तुत किए जा रहे हैं।

1- वैदर्भीरीतिगत औचित्य - निम्नलिखित पद्यों में वैदर्भीरीति के सौन्दर्य का अवलोकन करें -

सा रामणीयकनिधेरधिदेवता वा
सौन्दर्यसारसमुदायनिकेतनं वा ।
तस्याः सखे नियतमिन्दुतलमृणाल
ज्योत्स्नादिकारणमभून्मदनस्व वेधाः ।।¹⁸
व्यतिषजति पदार्थानान्तरः कोऽपि हेतु -
र्न खलु बहिरूपाधीन्प्रीतयः संश्रयन्ते ।
विकसति हि पतङ्गस्योदये पुण्डरीकं
द्रवति च हिमरश्मावुदगते चन्द्रकान्तः ।।¹⁹
असारं संसारं, परिमुषितरत्नं त्रिभुवनं,
निरालोकं लोकं मरणशरणं बान्धवजनम् ।
अदर्पं कदर्पं जननयननिर्माणमफलं
जनाञ्जीर्णारण्यं कथमसि विधातुं व्यवसितः ।।²⁰
गात्रेषु चन्दनरसो दृशि शारदेन्दु -
रानन्द एव हृदये मम यस्त्वमासीः ।
तं त्वां निकामकमनीयमकाण्ड एव
कालेन जीवितमिवोद्धरता हतोऽस्मि ।।²¹

2- गौडी रीतिगत औचित्य - निम्नलिखित पद्यों में गौडीरीति का सुन्दर चित्रण हुआ है -

कर्णाभ्यर्णविदीर्णसृक्कविकटव्यादानदीप्ताग्निभि -
र्दप्राकोटिविशङ्कैरित इतो धावद्विराकीर्यति ।
विद्युत्पुञ्जिकाशकेशनयनभ्रूश्मश्रुजालैर्नभो
लक्ष्यालक्ष्यविशुष्कदीर्घवपुषामुत्काखानां मुखैः ।।²²
एतत्पूतनचक्रमक्रमकृतसाग्राधमुक्तैर्वृका -
नुत्पुष्णत्परितो नृमांसविघसैराददरं क्रन्दतः ।
खर्जूरदुमदघ्नजङ्खमसितत्वङ्गनद्धविष्वक्तत -
स्नायुग्रन्थिघनास्थिपञ्जरजर्तकङ्कालमालोक्यते ।।²³
गुञ्जत्कुञ्जकुटीरकौशिकघटाघृतृकारसंवेल्लित -
क्रन्दत्फेरवचण्डघातृतिभृताप्राम्भारभीमैस्तटैः ।।
अन्तः कीर्णकरङ्गकर्परतरत्संरोधिकूलकष -
स्रोतोनिर्गमघोरघर्घररवा पारेश्मशानं सरित् ।।²⁴

3- पाञ्चाली रीतिगत औचित्य -

अन्त्रैःकल्पितमङ्गलप्रतिसराः स्त्रीहस्तरक्तोत्पल -
व्यक्तोत्तसभृतः पिनह्य सहसा हत्पुण्डरीकस्रजः ।
एताः शोणितपङ्कुड्मममजुषः संभूय कान्तैः पिब -
न्त्यस्थिस्नेहसुरां कपालचषकैः प्रीताः पिशाचाङ्गना ।।²⁵
प्रणयिसखीसलीलपरिहासरसाधिगतै -
र्ललितशिरीषपुष्पहननैरपि ताम्यति यत् ।
वपुषि वधाय तत्र तव शस्त्रमुपक्षितः
पततु शिरस्यकाण्डयमदण्ड इवैष भुजः ।।²⁶
पद्मावतीविमलवारिविशालसिन्धु -
पारासरित्परिकरच्छलतो विभर्ति ।
उत्तुङ्गसौधसुरमन्दिरगोपुराट्ट -
संघट्टपाटितविमुक्तमिवान्तरिक्षम् ।।²⁷

4- लाटरीगत औचित्य -

गमनमलसं शून्या दृष्टिः शरीरमसौष्ठवं
श्वसितमधिकं किं न्वेतस्यात्किमन्यदतोऽथवा ।
भ्रमति भुवने कन्दपार्जा विकारि च यौवनं
ललितमधुरास्ते ते भावाः क्षिपन्ति च धीरताम् ।।²⁸
परिमृदितमृणालीम्लानमङ्गप्रवृत्तिः
कथमपि परिवारप्रार्थनाभिः क्रियासु ।
कलयति च हिमांशोर्निष्कलङ्कस्य लक्ष्मी -
मभिनवकरिदन्तच्छेदकान्तः कपोलः ।।²⁹
अलसवलितमुग्धस्त्रिधनिष्पन्दमन्दै -
रधिकविकसदन्तर्विस्मयस्मेरतारैः ।
हृदयशरणं मे पक्षमलाक्ष्याः कटाक्षै -
रपहतमपविद्धं पीतमुन्मूलितं च ।।³⁰
स्खलयति वचनं त संश्रयत्यङ्गमङ्गं
जनयति मुखचन्द्रोद्भासिनः स्वेदविन्दून् ।
मुकुलयति च नेत्रे सर्वथा सुभ्रु! खेद -
स्त्वयि विलसति तुल्यं वल्लभालोकनेन ।।³¹

इस प्रकार हम देखते हैं कि मालतीमाधव प्रकरण में कवि को रीतियों के यथोचित संयोजन एमं पूर्ण सफलता प्राप्त हुई है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- 1- मालती माधव 1-19
- 2- मालती माधव 1-27
- 3- मालती माधव - 9-18



- 4- मालती माधव - 5-16
- 5- मालती माधव - 5-29
- 6- मालती माधव - 5-32
- 7- मालती माधव - 5-13
- 8- मालती माधव - 5-15
- 9- मालती माधव - 1-18
- 10- मालती माधव - 1-23
- 11- मालती माधव - 1-28
- 12- मालती माधव - 5-31
- 13- मालती माधव - 5-34
- 14- मालती माधव - 6-19
- 15- मालती माधव 1-17
- 16- मालती माधव - 1-25
- 17- मालती माधव - 7-4
- 18- मालती माधव 9-12
- 19- मालती माधव - 1-22
- 20- मालती माधव 1-25
- 21- मालती माधव 5-30
- 22- मालती माधव 9-22
- 23- मालती माधव 5-13
- 24- मालती माधव 5-14
- 25- मालती माधव 5-19
- 26- मालती माधव 5-18
- 27- मालती माधव 5-31
- 28- मालती माधव 9-1
- 29- मालती माधव 1-18
- 30- मालती माधव 1-23
- 31- मालती माधव 1-29



शोध पत्र लेखकों को निर्देश

'दि गुंजन' (मल्टी डिडिप्लिनरी क्वार्टरली इण्टरेनशल रेफ्रीड/पियररिव्यूड रिसर्च जर्नल) है, जिसमें सभी उपविषयों के मौलिक शोध पत्र, शोध समीक्षा, विचार एवं लेखों आदि का प्रकाशन किया जाता है। शोधकर्ता हिन्दी, अंग्रेजी अथवा संस्कृत भाषा में अपने शोध पत्र भेज सकते हैं। शोध पत्र भेजते समय कृपया निम्न बिन्दुओं पर विशेष ध्यान दें—

◆ लेखक अपना शोध पत्र सर्वेश तिवारी 'राजन' प्रबन्ध सम्पादक— 'दि गुंजन', के-444 'शिवराम कृपा' विश्व बैंक बर्रा, कानपुर-208027 (उ.प्र.) को अथवा super.prakashan@gmail.com पर प्रेषित करें।

◆ प्राप्त शोध पत्र जर्नल में प्रकाशन के पूर्व पुनर्निरीक्षित किये जायेंगे। स्वीकृत शोध पत्र कहीं और प्रकाशित नहीं होना चाहिए और न ही उस शोध पत्र का कोई भी भाग सम्पादक की अनुमति के बिना कहीं और प्रकाशित किया जा सकता है।

◆ अपने शोध-पत्र की पाण्डुलिपि निम्न भागों में तैयार करें— शीर्षक, सारांश, पाण्डुलिपि, निष्कर्ष एवं पुस्तक सन्दर्भ सूची। कृपया पुनर्निरीक्षण की गुणवत्ता में सहायता करने हेतु शोधालेख पर विशेष ध्यान दें।

◆ शीर्षक : शीर्षक पाण्डुलिपि पर अवश्य दें, किन्तु अपना पूरा नाम, पद, विषय, संस्था, पता जहाँ पर निवास एवं अध्यापन कार्य सम्पादित किया गया हो, आपका दूरभाष, मोबाइल, ई-मेल पत्राचार की सुविधा हेतु अलग पृष्ठ पर अवश्य दें।

◆ सारांश — सारांश कृपया शोध-पत्र का सारांश अधिकतम 200 शब्दों में दें।

◆ पाण्डुलिपि— इसके अन्तर्गत मुख्य पाठ्य सामग्री होगी जो 5 से 8 पृष्ठों तक होनी चाहिए। शोध पत्र में 7-8 पृष्ठ का (सारांश, शब्द संक्षेप, निष्कर्ष एवं सन्दर्भ सूची सहित) से अधिक नहीं होना चाहिए, अन्यथा प्रकाशन हेतु स्वीकार नहीं किया जायेगा। लेखक को यह बात स्वीकार होनी चाहिए कि पुनर्निरीक्षण के दौरान किये गये संशोधन उन्हें मान्य होंगे। आलेख प्रकाशन के दौरान त्रुटि की सम्भावना न बने, इसका पूरा ख्याल रखा जाता है, फिर भी त्रुटि पाये जाने पर लेखक संशोधित री-प्रिन्ट प्राप्त कर सकता है।

◆ पुस्तक — प्रकाशक का नाम, संस्करण, संख्या, प्रकाशन वर्ष, लेखक का नाम, पृष्ठ संख्या दें।

◆ पत्रिका — पत्रिका का नाम, लेख का शीर्षक, लेखक एवं प्रकाशक का नाम, अंक, संख्या, माह, वार्षिक, अर्द्धवार्षिक, त्रैमासिक व मासिक जो भी हो स्पष्ट करें।

◆ सन्दर्भ ग्रन्थ सूची — कृपया शोध पत्र में कम से कम 8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची अवश्य दें।

◆ समाचार पत्र— समाचार पत्र के प्रकाशक, प्रकाशन तिथि, वर्ष व पृष्ठ संख्या का उल्लेख करें।

◆ इण्टरनेट — वेबसाइट, पृष्ठ संख्या, मुख्य शीर्षक, अन्तःशीर्षक का उल्लेख करें।

◆ मानचित्र एवं सारणी— मानचित्र एवं सारणी अथवा चित्र शोध पत्र की समाप्ति के अन्त में दें। यह ब्लैक एण्ड व्हाइट ही होना चाहिए। इसका स्पष्ट संकेत पाण्डुलिपि में अवश्य दें (उदाहरण, सारणी संख्या आदि)।

◆ विशेष— कृपया अपना शोध पत्र ई-मेल करने के बाद फोन अथवा मोबाइल से अवश्य सूचित करें। शोध पत्र के साथ फोटो, ई-मेल एड्रेस भेजें। शोध पत्र हिन्दी, संस्कृत (कृतिदेव हिन्दी फान्ट 14) एवं अंग्रेजी (टाइम्स 12) में तैयार कर मेल करें। शोध पत्र प्राप्त होने के तुरन्त बाद, उसी दिन लेखक की मेल पर स्वीकृति, कवर, इंडेक्स व पेपर प्रेषित कर दिया जायेगा। super.prakashan@gmail.com से प्राप्त शोध पत्र हेतु ई-मेल/व्हाट्सअप से स्वीकृति भेजी जायेगी। शोध पत्र प्रेषित करने से पूर्व प्रबन्ध सम्पादक से मोबाइल/दूरभाष पर सम्पर्क अवश्य कर लें। रिसर्च जर्नल में लेख सम्मिलित करने का सम्पादक मण्डल अथवा सलाहकार समिति का निर्णय ही अन्तिम व सभी को मान्य होगा।

◆ सुझाव — लेखकों एवं पाठकों को यह अंक कैसा लगा, इस सम्बन्ध में अपने-अपने विचार अवश्य लिखें। इससे मुझे अपनी त्रुटियों को जानने और भावी योजना बनाने में सहायता मिलेगी।

◆ विनम्र निवेदन— सभी सम्मानित सदस्यों से निवेदन है कि अपने माध्यम से संस्था में अधिकतम सदस्यों को पत्रिका परिवार से जोड़कर संस्था का सहयोग करें।

दि गुंजन

The Gunjan

मल्टी डिसिप्लिनरी क्वार्टरली इण्टरनेशनल रेफ्रीड/पियर रिव्यूड रिसर्च जर्नल

Multi Disciplinary Quarterly International Refereed/Peer Reviewed Research Journal

E-mail : super.prakashan@gmail.com

ISSN - 2349-9273
Web Site: www.thegunjan.com

कार्यालय : सेक्टर 'के'-444 'शिवरामकृपा' विश्व बैंक बर्सा-कानपुर-208027

सदस्यता फार्म

श्रीमान् सम्पादक महोदय,

'दि गुंजन'

(मल्टी डिसिप्लिनरी क्वार्टरली इण्टरनेशनल रेफ्रीड/पियर रिव्यूड रिसर्च जर्नल)

सेक्टर 'के'-444 'शिवरामकृपा' विश्व बैंक बर्सा-कानपुर-208027 (उ. प्र.) भारत

महोदय / महोदया,

निवेदन है कि मैं / हमारा महाविद्यालय आपके 'सुपर प्रकाशन' द्वारा प्रकाशित 'दि गुंजन' (मल्टी डिसिप्लिनरी क्वार्टरली इण्टरनेशनल रेफ्रीड/ पियर रिव्यूड रिसर्च जर्नल) परिवार का वर्षीय / आजीवन★ / व्यक्तिगत / संस्थागत★ सदस्य बनना चाहता हूँ / चाहती हूँ। मैं / हमारी संस्था 'सुपर प्रकाशन' विश्व बैंक बर्सा, कानपुर-27 के नाम सदस्यता शुल्क रुपये नकद / मनीआर्डर / चेक अथवा बैंक ड्राफ्ट खता क्रमांक (सुपर प्रकाशन - 52570200000355) IFS Code No. BARB0BUPGBX, बड़ौदा उत्तर प्रदेश ग्रामीण बैंक, शाखा- विश्व बैंक बर्सा (करही) कानपुर-27 के नाम से दे रहा हूँ।

↑
zero
↓

नाम (श्री/श्रीमती/डॉ.) :

पद का नाम (जहाँ वर्तमान में कार्यरत हैं) :

संस्था / निवास का नाम :

पत्र व्यवहार का पूरा पता (पिनकोड सहित) :

फोन / मोबाइल नं. :

स्थान व दिनांक :

: हस्ताक्षर

प्रबन्ध सम्पादक :

सर्वेश तिवारी 'राजन'

मोबा. : 08896244776

सम्पादक :

डॉ. अलका द्विवेदी

मोबा. : 8858669409